अरुणिमा सिन्हा

एवरेस्ट की बेटी

''अरुणिमा एक अत्यंत साहसी लड़की है और इनकी प्रेरणादायी जीवनी विद्यार्थियों को अवश्य पढ़नी चाहिए।

—नरेंद्र मोदी,
भारत के प्रधानमंत्री

''जिन परिस्थितियों में कोई भी हार मान जाता, उनमें अरुणिमा ने दृढ़ निश्चय और वीरता का परिचय दिया।''

—रतन टाटा,
टाटा ग्रुप के पूर्व चेयरमैन

''अरुणिमा ने अपने आत्मविश्वास और दूरदृष्टि से इतिहास रचा है।''

—अखिलेश यादव,
मुख्यमंत्री, उ.प्र.

एवरेस्ट की बेटी

अरुणिमा सिन्हा

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

अनगिनत, अनाम भारतीयों को समर्पित,

जो अपने साधनों से जरूरतमंदों की मदद करते हैं। मेरा जीवित रहना उनके अस्तित्व का प्रमाण है।

बछेंद्री पाल और टाटा स्टील को समर्पित—

बिना आपकी सहायता और प्रोत्साहन के मुझे एवरेस्ट पर चढ़ने और अपने लिए एक नया जीवन बनाने का

कभी अवसर नहीं मिलता।

आभार

मैं अनगिनत लोगों के द्वारा मुझ पर अर्पित किए गए करुणा और प्यार का योगफल हूँ। वे नहीं होते तो मैं आज यहाँ नहीं होती। वास्तव में यह पुस्तक एक वास्तविकता नहीं बन पाती।

प्रत्येक के योगदान की पुनर्गणना करना मुश्किल है, और मैं आशंकित हूँ कि मैं बहुत से लोगों का नाम उल्लेखित करने में चूक सकती हूँ। इसलिए शुरू करने से पहले मैं प्रत्येक उस व्यक्ति से क्षमा माँगना चाहती हूँ, जिसका नाम मैं यहाँ उल्लेख करना भूल गई हूँ।

मैं अपने निकटतम परिवार के योगदान का स्मरण कर आरंभ करती हूँ—मेरे पिता, दिवंगत थल सैनिक हरेंद्र कुमार सिन्हा, जिन्होंने मेरे बचपन के दिनों से मुझमें पर्याप्त मात्रा में आत्मविश्वास और दृढ निश्चय कूट-कूटकर भरा था। एवरेस्ट पर चढ़ने के बाद मेरी माता ज्ञान बाला सिन्हा ने कहा था—''बेटा, आज तुमने बहुत बड़ा काम किया है, आज तुम आसमान पर हो, पर कदम हमेशा जमीन पर रखना।'' जब स्पोंसरशिप नहीं मिल रही थी तो उन्होंने कहा कि अगर जरुरत पड़े तो अपना घर गिरवी रख दो और अपना सपना पूरा कर लो। मेरी बहन लक्ष्मी, भाई राहुल, बहनोई ओमप्रकाश (साहब), मेरा भानजा राजा और मेरे चचेरे भाई सत्येंद्र सिन्हा—यदि मेरे परिवार के ये लोग मेरे पीछे किसी चट्टान की तरह खड़े नहीं होते तो मैं यहाँ नहीं होती।

अब, मैं अपने विस्तारित परिवार से मिलवाना चाहती हूँ।

मुझे उन लोगों का योगदान स्मरण करना होगा, जैसे कि पिंटू कश्यप—वह व्यक्ति, जिसने मुझे रेलवे ट्रैक के साथ लेटा हुआ पाया था। यदि वह अपने साथ मददगार हाथों को नहीं लाया होता तो मैं एक अकेली और दर्द भरी मृत्यु मर चुकी होती।

मैं बी.सी. यादव बरेली जिला अस्पताल में फॉर्मासिस्ट को भी नहीं भूल सकती, जिन्होंने मेरा जीवन बचाने के लिए रक्तदान किया था।

मेरी एवरेस्ट विजय दो प्रशंसनीय भाइयों के बिना संभव नहीं हो पाती—शैलेश और राकेश श्रीवास्तव—जिन्होंने मेरे लिए एक कृत्रिम अंग दान किया था, जिसका प्रयोग मैंने एवरेस्ट पर और कुछ अन्य चोटियों पर भी चढ़ने के लिए किया था। वह अंग अभी भी एकदम सही आकार में है।

एम्स के निराले डॉक्टर, जिन्होंने मेरा इलाज किया था—डॉ. विजय शर्मा, डॉ. सुषमा, डॉ. एम.सी. मिश्रा, डॉ. वी. कटियार—धन्यवाद।

हनुमंतराव गायकवाड़, बी.वी.जी. इंडिया लिमिटेड के अध्यक्ष एवं प्रबंध संचालक और संजय भाई का धन्यवाद।

बछेंद्री पाल और राजेंद्र पालजी—इन दो व्यक्तित्वों का मेरे जीवन में योगदान बहुत बड़ा है। उन्होंने हमेशा एक मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक का किरदार निभाया है।

प्रतीक भौमिक एवं राजेंद्र पाल (बछेंद्री पाल के भाई) मेरे प्रमुख प्रशिक्षकों का धन्यवाद।

मैं पी.पी. कपाड़िया, 'टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन' के समूह प्रबंधक, को हमारा ध्यान रखने के लिए और संजीव पाल, टाटा स्टील के उपाध्यक्ष, जिन्होंने मेरी एवरेस्ट यात्रा को हरी झंडी दिखाकर विदा किया था, को नहीं भूल सकती।

शहनाज हुसैन को मुझे एम्स के बिस्तर पर सौंदर्य सलाह और प्रशिक्षण देने के लिए धन्यवाद।

मैं निर्मल जीत सिंह कलसी, केंद्रीय गृह मंत्रालय में संयुक्त सचिव, को मुझे प्रेरणा देने के लिए धन्यवाद देना चाहती हूँ। उन्होंने अपने मार्ग से हटकर यह जाँचा कि मुझे एक नौकरी मिल सकती है।

मैं बहुत ही भाग्यवान् हूँ कि मैं सहायक नेताओं से मिली थी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का एक विशेष उल्लेख बनता है—जब वे गुजरात के मुख्यमंत्री थे तो उन्होंने पहले मेरी एवरेस्ट विजय के बारे में ट्वीट किया था और फिर मुझे जीत के लिए गुजरात में सम्मानित किया था और स्पोर्ट्स अकादमी के मेरे स्वप्न के लिए सहायता का वायदा भी किया था। धन्यवाद मोदीजी! तत्कालीन भाजपा अध्यक्ष और अब केंद्रीय गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने सुझाव दिया था कि यदि शूटिंग को एक जीविका (कॅरियर) की तरह लेना चाहती हूँ तो वह जसपाल राणा के द्वारा मदद करवाएँगे, जो कि एक प्रख्यात शूटर और उनके रिश्तेदार हैं। धन्यवाद राजनाथजी, आप काफी सहायक रहे थे।

मैं कांग्रेस अध्यक्षा सोनिया गांधीजी के योगदान के लिए आभार प्रकट करना चाहती हूँ, जिन्होंने काफी मददगार अजय माकन को मुझसे मिलने ट्रॉमा सेंटर, लखनऊ भेजा था। माकन ने मुझे अपनी शांत दक्षता से प्रभावित कर दिया था। मैं अपना हार्दिक आभार उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव के लिए, आश्चर्यजनक ढंग से इतना अलग करने हेतु, दर्ज करवाना चाहती हूँ। मुझे तत्कालीन बसपा सरकार के मंत्री रामअचल राजभर सरलता से याद हैं, क्योंकि वे उन पहले राजनेताओं में से थे, जिन्हें अहसास था कि गरीब परिवार की लड़की, जो जिंदगी के लिए जंग लड़ रही है, को वाक् सहानुभूति से ज्यादा कुछ चाहिए था। मैं लखनऊ भाजपा के नेता नीरज सक्सेना का धन्यवाद करना चाहती हूँ, जिन्होंने मेरे लिए सहायता एकत्रित करने हेतु एक कैंडल लाइट मार्च निकाला था, जब मुझे उसकी सबसे ज्यादा जरूरत थी।

मनीष चंद्र पांडे का मेरे लिए बहुत बड़ा योगदान है। उनके बिना यह पुस्तक नहीं बन सकती थी। यह कहानी मेरी है, लेकिन यह वे हैं, जिन्होंने मेरी विजय को अपनी शब्द क्रीड़ा के साथ एक अर्थपूर्ण सूरत दी है, जिससे इस पुस्तक की अपील बढ़ गई थी।

मैं रतिका भार्गव का नाम भी उल्लेखित करना चाहती हूँ, 'हिंदुस्तान टाइम्स' की चीफ कॉपी एडिटर, जिन्होंने एक बहुत बढ़िया मेजबान का किरदार निभाया और सहायक सुझाव के अतिरिक्त स्वादिष्ट व्यंजन बनाए थे, जब यह पुस्तक लिखी जा रही थी।

और अंतिम पर कम नहीं, मैं दो बड़े दिलवाले बेहतरीन क्रिकेटरों के योगदान के लिए आभार प्रकट करना चाहती हूँ—युवराज सिंह और हरभजन सिंह। ज्यों ही उन्हें मेरी त्रासदी के बारे में पता चला, उन्होंने आर्थिक सहायता भेजी थी। शायद इन्हीं शुभकामनाओं की वजह से, जो युवराज सिंह ने सालों में एकत्रित की थीं, वे कैंसर से भी जीत गए थे। धन्यवाद युवी, धन्यवाद भज्जी!

मैं रेलवे ट्रैक के बीच में पड़ी हुई थी।

वह रात अभी भी प्राणघातक प्रतीत हो रही थी और मैं अपने दिल की बेतहाशा दौड़ती हुई धड़कन सुन सकती थी। मेरे जीवन के अंत में मात्र एक रेलगाड़ी के लाइन पर आने जितनी दूरी थी। गरजती व दहाड़ती हुई गाड़ियाँ दूर से डराते हुए मेरे नजदीक आ रही थी—हर पल डराती हुई। मैं उनके फुँफकारने की आवाजें सुन सकती थी। चलती ट्रेनों से अपने आस-पास की जगह पर गिरे हुए मानवों के मल-मूत्र की दुर्गंध महसूस कर सकती थी तथा रेलवे लाइन पर पहियों के गुजरने से उत्पन्न चिनगारियों को भी महसूस कर सकती थी।

मैं यहाँ थी—ट्रैक साइड में खाली पड़े, बजरी क्षेत्र पर, ठंड तथा डर से थर-थर काँपती, दो पत्थरों को कसकर पकड़ अपने कष्टदायी दर्द को बरदाश्त करते हुए। ऐसा लग रहा था जैसे कि मुझे लोहार के भारी हथौड़े के द्वारा बुरी तरह से कुचल दिया गया था। मेरा सारा शरीर मेरे अपने खून से सन गया था। मेरी बाईं टाँग के ऊपर से ट्रेन निकल गई थी, दाईं टाँग में बहुत सारी टूटी हड्डियाँ तथा स्नायुबंध (जोड़) टूट गए थे। कुल मिलाकर मैं पस्त थी, दोनों टाँगें हिल नहीं सकती थीं। खून की कमी की वजह से मेरी नजर धुँधली हो गई थी। मेरे शरीर का प्रत्येक हिस्सा कष्ट से भरा हुआ था, जिसके कारण मैं स्वयं का चिल्लाना रोक नहीं पा रही थी। दर्द बद से बदतर होता जा रहा था। अंतत: वह मेरे नियंत्रण से बाहर हो गया।

मैं बेहोश हो गई थी।

जब मुझे होश आया तो हालात नहीं सुधरे थे। अगर कुछ हुआ था तो वह यह कि मेरा दर्द तब तक बहुत बढ़ गया था, जब तक मेरा शरीर दर्द से तड़पने के कारण मूक हो गया था। हर क्षण ट्रैक आनेवाली गाड़ी का संकेत देते हुए काँप रहे थे और हर समय एक ट्रेन मेरे पास से गुजरते हुए वही भयावह कर्कश नाद बढ़ा जाती। मैं खुद के बारे में सोचती कि मैं अब अन्य ट्रेन को देखने के लिए बचूँगी भी या नहीं। वे संवेदनहीन रेल की बोगियाँ मेरी लाचार स्थिति का मजाक उड़ती दिखती थीं। शुक्र है कि मेरे शरीर के विपरीत मेरा मस्तिष्क अभी भी सक्रिय था।

'अपने हाथों और अंगों को ट्रैक पर मत गिरने दो। अपने आपको गिरने से बचाओ...'

मेरे परिवार, विशेषतया मेरे पिता, एक गर्वित सेना नायक ने मुझे हमेशा अंत तक कोशिश करना सिखाया था। अतएव मैंने कोशिश की। 'बचाओ...बचाओ...कृपया कोई मदद करो...' मैं चिल्लाई मदद के लिए कम, अपने डर को दूर भगाने के लिए ज्यादा, शोर भी मचाया। मुझे संदेह था कि किसी ने सुना भी है या नहीं। लगातार खून की कमी का मतलब था कि मेरे शरीर की शक्ति बहुत जल्दी खत्म हो रही थी। जल्द ही मेरी चिल्लाहट, रिरियाने में बदल गई थी।

जो भी हो, वहाँ मृत रात में कौन होगा, पता नहीं और वह भी सुनने के लिए और शायद कोई सुनना ही नहीं चाहता हो ऐसी आवाजों को! इस स्वार्थी और संदेहास्पद युग में, ऐसे एक कुसमय पर मदद की पुकार पर प्रतिक्रिया देने या इस हेतु सोचने के लिए भी गहन चारित्रिक शक्ति चाहिए होती है। ऐसे ही किसी घटनाक्रम में मैं कैसे मदद की पुकारों का जवाब देती? मगर दर्शन-शास्त्र के चिंतनों के लिए यह स्थान या समय बहुत ही गलत था।

मेरे विचार मेरे शरीर पर विचरण करते जीवों से बाधित हुए। मुझे मेरा डर याद है कि कुतरनेवाले जंतुओं को न्योता नहीं देना पड़ता है, खासकर रेलवे ट्रैकों पर। वे मेरे पूरे शरीर पर तेजी से फैल गए थे। उनमें से कुछ ने शायद मुझे मृत समझ लिया था, तभी मेरे शरीर को कुतरना शुरू कर दिया था। साथ ही कुछ साहसी जीवों ने मेरे मांस पर दावत उड़ानी शुरू कर दी थी। मैं उन्हें रोकने के लिए शक्तिहीन थी, अपने हाथ-पाँव हिलाने में पूर्णतया

असमर्थ थी। वे इकट्ठे कुतरने लगे थे, पहले घबराते हुए तथा फिर कोई विरोध न पाते हुए। बड़े चूहे मेरे पूरे शरीर पर छोटी और डरावनी चीखें मारते हुए झपट्टे मारने लग गए थे।

''हुश...हुश...''

मैंने उन्हें डराकर भगाने की कोशिश की। मगर वे कठोर जीव थे। मेरी खोखली चेतावनियों को न सुनने के लिए अति व्यस्त थे। मेरे पूरे शरीर पर तेजी से फैल गए थे, जब तक ट्रैरक दुबारा काँपने नहीं लग गया था। दूसरी ट्रेरन के आगमन के बारे में यह मेरे और उनके लिए भी एक संकेत था। मैं जानती थी कि ये घिनौने जीव अभी अस्थायी तौर पर गायब हो जाएँगे, ताकि ट्रेरन के जाने के बाद दुबारा आ सकें। समय-समय पर मेरी आँखों से आँसू गिरते रहते थे। मगर मेरा चिल्लाना भी थकता जा रहा था। मैं हैरान हो रही थी कि यदि मेरे आँसू मेरे गालों पर एक गंदी रेखा छोड़ देंगे, ठीक वैसे ही जब मैं छोटी बच्ची थी, तब धृष्टता करने पर मेरे माता-पिता की डाँट या मार पर मेरे आँसू निकलते थे, तो ऐसा ही होता था। उसके बाद, माता-पिता की मार के बदले, में मुझे हलवा-पूड़ी आदि प्रतिफल मिलते थे।

...मेरे मन में भावनाओं का ज्वार उमड़ रहा था।

जैसे ही रेल ट्रैरक दुबारा काँपने लगे, मैं कँपकँपा गई थी। क्या यह मेरा अंत होगा? मैंने पत्थरों पर अपनी पकड़ और मजबूत कर ली थी। एक मिनट के बाद, मैंने चैन की साँस ली। पहले की कई ट्रेरनों की तरह इस ट्रेरन ने भी मुझे बख्श दिया था। मैं अभी भी साँस ले रही थी। असल में मुझे लगता था कि अभी भी कोई शक्ति है, जो चाहती है कि मैं साँस लूँ, लड़ूँ और जीतूँ। मैं अभी भी सोने की चेन को अपनी गरदन पर महसूस कर सकती थी। और अधिक आश्चर्य यह था कि तारों को घूरते हुए मैंने एक मुसकराहट दी थी।

❑

कहते हैं कि हमारी जिंदगियाँ पहले से ही लिख ली जाती हैं।

हमें बस, अपने हिस्से का किरदार निभाना होता है। भाग्य रहस्यमयी तरीकों से हस्तक्षेप यह सुनिश्चित करने के लिए करता है कि कोई भी अपने निर्रित किरदार से इधर-उधर न भटक सके। मेरे प्रकरण में, यह केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सी.आई.एस.एफ.) के साक्षात्कार 'आमंत्रण' पत्र पर जन्मदिन की एक गलत तारीख थी, जिसने मुझे एक ट्रेन यात्रा करने हेतु विवश किया था। वह यात्रा, जिसने अंतत: मेरी जिंदगी को पूर्णतया बदल दिया था। सी.आई.एस.एफ. का वह साक्षात्कार 'आमंत्रण' पत्र मेरे तथा मेरे परिवार के लिए बहुत जरूरी था। मेरे परिवार में मेरी माँ श्रीमती ज्ञान बाला, मेरी बहन कु. लक्ष्मी, उनका 12 साल का बेटा चि. राजा तथा उनके पति श्री ओमप्रकाश (साहब) तथा मेरा भाई कु. राहुल था।

हमें नौकरी की बहुत जरूरत थी। अपने बहनोई साहब (जो कि केंद्रीय आरक्षी पुलिस बल, सी.आर.पी.एफ. में थे) की सलाह पर मैंने हेड कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन दिया था। मैं हमेशा से ही एथलीट रही थी तथा पहले मैंने अपने स्कूल के फुटबॉल में एवं बाद में अपने कॉलेज का राष्ट्रीय स्तर पर वॉलीबॉल में प्रतिनिधित्व किया था। मैंने थोड़ी सी हॉकी भी खेली थी। लड़कियों को खेल-कूद में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता, खासकर उत्तर प्रदेश में, जहाँ से मैं आती हूँ। स्कूल के प्राधिकारियों को जब किसी भी खेल-कूद की गतिविधि में प्रतिनिधित्व करना होता था तो मेरा नाम हमेशा प्रस्तुत किया जाता था, इतना ज्यादा कि मेरे गृह नगर अंबेडकर नगर में बहुत से लोग मुझे 'हरफनमौला' के नाम से बुलाने लगे थे—जिसका साधारणतया मतलब 'ऑल राउंडर' होता है।

बिना कोई जवाब मिले सैकड़ों नौकरियों के आवेदनों को भरने के बाद मैं जानती थी कि यह आमंत्रण बहुत विशेष है। एक संक्षिप्त पारिवारिक बैठक के बाद यह जल्दी निर्धारित हो गया था—बहुत से गरीब परिवारों में, जिनके पास खोने के लिए कुछ नहीं होता है, आश्चर्यजनक रूप से उनकी पारिवारिक बैठकें व्यापारिक होती हैं और बिना झंझट के नतीजे पर पहुँच जाती हैं कि साक्षात्कार से पहले मुझे सी.आई.एस.एफ., ग्रेटर नोएडा के कार्यालय में गलती सुधरवाने के लिए जाना होगा।

11 अप्रैल, 2011 को मेरी बड़ी बहन ने मुझे लखनऊ के चारबाग रेलवे स्टेशन पर पहुँचाया, जहाँ से मुझे 'पद्मावती एक्सप्रेस' पकड़नी थी। उसने मुझे जल्दी से गले लगाया और चली गई। मैं अकेले ही टिकट खिड़की तक आई थी। साधारण श्रेणी में यात्रा करने का एक लाभ यह है कि बैठने के लिए एक सीट भले ही न मिले, मगर टिकट हमेशा होती है। सामान्यतया एक व्यक्ति अपनी जगह बना लेता है, चाहे डिब्बे में कितनी ही भीड़-भाड़ क्यों न हो। और कुछ नहीं तो किसी को दरवाजे का हैंडल लटकने के लिए मिल जाता है। मुझे संदेह है कि शायद ही आपने किसी साधारण श्रेणी के टिकटवाले को स्टेशन से सिर्फ इसलिए लौटते देखा हो कि डिब्बे में जगह की कमी है। यहाँ सबके लिए जगह है।

हमारे देश का रोजगार क्षेत्र भी अधिक सीमा तक एक अत्यधिक माँगवाली ट्रेन के साधारण डिब्बे की तरह होता है, जहाँ बहुत सारे लोग प्रत्येक सीट के लिए पेश होते हैं। केवल एक ही फर्क है कि जहाँ साधारण श्रेणी का डिब्बा सभी को स्थान देता है, वहीं रोजगार के बाजार में बहुतेरे गरीब बेरोजगार और तिरस्कृत होते हैं। साधारण श्रेणी की टिकट खिड़की पर एक पगड़ीधारी सिख बुकिंग क्लर्क था। उसने छुट्टे के लिए कहा, जब मैंने अपना 1,000 रुपए का एक नोट उसकी ओर बढ़ाया, वो अपनी परेशानी के स्पर्शवाली आवाज में बोला, 'खुल्ले दो।' यद्यपि मैं उससे सहानुभूति रखती थी, फिर भी लाइन को छोड़कर छुट्टे लेने जाने का मतलब था कि और तीस मिनटों के लिए

प्रतीक्षा करना।

लाइन में मेरे पीछे किसी के पास भी छुट्टे का होना प्रतीत नहीं होता था। मेरे पीछे खड़े बहुत से व्यक्तियों से पूछना मुझे याद है, मगर हर किसी ने सिर्फ 'नहीं' का संकेत देते हुए एक सी मुद्रा में सिर हिलाया था। मैं उनपर विश्वास नहीं कर सकती थी। आखिरकार यात्रा करते हुए हर कोई कुछ-न-कुछ धन लेकर चलता है। मगर हर कोई लाइन या जीवन में मुझसे आगे आने के लिए व्यग्र था। यहाँ इसके साथ कुछ गलत नहीं था, परंतु असल समस्या यह है कि साधारणतया सभी लोग ऐसा दूसरों की कीमत पर करने को महत्त्व देते हैं।

परंतु मैं सबकुछ अपने दम पर करने की आदी थी। और मैंने कुछ करने का फैसला किया, जिसे हर भारतीय प्राकृतिक तौर पर अधिकतर करता है—बहस। मैं जीत गई थी। दिल्ली की एक टिकट मेरी बहस की क्षमताओं के उपहार के तौर पर 7 मिनट के कठिन वाक्युद्ध के बाद मिली थी। जैसे ही मैं 'पद्मावती एक्सप्रेस' तक पहुँची, मैं आनंदातिरेक से जकड़ी हुई थी। आखिरकार मैं एक प्रतिष्ठित नौकरी से कुछ ही कदम दूर थी।

साधारण श्रेणी को ढूँढ़ना आसान था। वह इकलौता पुरुष-बहुल डिब्बा था, जिसमें यात्रीगण सारडीनस की मछली की तरह आपस में गुँथे हुए थे। एक हाथ में अपना मोबाइल फोन पकड़े हुए, दूसरे में एक फोल्डर, जिसमें मेरे प्रमाण-पत्र थे तथा पीठ पर जरूरी वस्तुओं से भरे एक बैग के साथ जैसे ही मैंने डिब्बे में प्रवेश किया तो सबकी घूरती नजरें मुझ पर चिपक गईं।

यद्यपि लड़कियों ने मर्दों के कई कथित अग्रणी क्षेत्रों को ध्वस्त किया है, फिर भी उन्हें एक 'कमजोर लिंग' की तरह देखा और पुकारा जाता है। ऐसे विवरणों ने सिर्फ लिंग रूढ़िवादिता को ही मजबूत किया है। एक औरत कमजोर हो सकती है, परंतु मानसिक शक्ति के बारे में क्या? यद्यपि साफ तौर पर मानसिक तौर पर बहुत बढ़िया; परंतु यह तथ्य शायद ही कभी उद्घाटित होता है—औरतों को आज एक वस्तु की तरह ही देखा जाता है।

शायद यह उस जागरूकता का उत्तर देती है, जो मेरे उसे डिब्बे में जाने से उत्पन्न हुई थी। मुझे कुछ अजीब सा महसूस हो रहा था कि कुछ नजरें सवालिया तौर के बजाय मुझे घूर रही थीं। पूरे देश में औरतों ने इस तरह की ओछी नजरों के साथ जीना सीख लिया है। मेट्रो में, ट्रेन में तथा अन्य शहरी केंद्रों में लड़कियाँ आज आदमियों के साथ प्रतियोगिता कर रही हैं। तब भी वहाँ ऐसे लोग हैं, जो अब भी विश्वास करते हैं कि बहुत सी औरतों को अर्श तक, जहाँ पर वे हैं, पहुँचने के लिए कास्टिंग काऊच की परीक्षा देनी पड़ती है। यह बिलकुल गलत है। मगर यह विश्वास छोटे कस्बों और गाँवों में प्रसिद्ध रहता है कि 'मर्द हमेशा आगे ही रहते हैं, जबकि औरतें अपनी अश्लीलता पर अधिक निर्भर रहती हैं।' बड़े शहरों में भी सोच लगातार छोटी होती जा रही है। व्यवस्था के विपरीत —ग्रामीण या शहरी—औरतें लगातार समीक्षाओं का विषय रहती हैं। उनकी क्रियाएँ और प्रक्रियाएँ अंतहीन तौर पर विश्लेषण, विवाद और शास्त्रार्थ का विषय होती हैं। क्या आपने कभी किसी पुरुष को अग्निपरीक्षा देते हुए सुना है? फिर क्यों यह अग्निपरीक्षा एक औरत को ही देनी होती है? हम इन दिनों बलात्कारों के बारे में बहुत कुछ सुनते हैं —मुझे कोई संदेह नहीं है कि बलात्कारी यह आनंद के लिए नहीं, बल्कि औरतों पर अपना नियंत्रण बनाने हेतु करते हैं।

कुछ भी हो, मैं इस बारे में क्यों सोच रही हूँ? सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि मुझे एक कोना पकड़कर बैठना था। मैंने चारों तरफ देखा कि क्या वहाँ बैठने के लिए कोई खाली जगह है। अभी वहाँ कोई जगह नहीं थी। यद्यपि मैं जानती थी कि जब ट्रेन चलेगी, वहाँ सबके लिए जगह होगी। ठीक अभी डिब्बे में बिना धक्के खाए, मात्र खड़े रहने के लिए भी प्रयासों की जरूरत थी। मैं लोगों को फर्श पर, शौचालय में और कुछ को शौचालय की सीट भी बाँटते हुए देख सकती थी। एक कोने पर खिड़की के पास एक सुविधाजनक सीट पर एक युवक बैठा था, जो इस

लाभदायक स्थिति में आने के लिए शायद इस निम्न स्तरीय डिब्बे में बहुत जल्दी आया होगा। मैंने सोचा कि वह युवा व्यक्ति शायद काफी हद तक इनसान था और एक लड़की के लिए शायद जगह बना देगा। डरते हुए मैं उसके पास सीट बाँटने का प्रस्ताव लेकर गई थी। मेरी राहत के लिए, वह मान गया।

मैंने उसकी उदारता के लिए आभार व्यक्त किया। परंतु उस आदमी के साथ वो सीट बाँटते हुए शर्म की एक ग्लानि महसूस हुई, जो उसने काफी धक्कों तथा कष्टदायी टकरावों के बाद सुरक्षित की थी। हम उसी सीट पर ठीक से बैठ गए थे। रात्रि के 11 बजे थे, जब ट्रेन, जो कि थोड़ी देर से, मगर आखिरकार चलना शुरू हुई थी। अंतत: मैं ग्रेटर नोएडा के अपने रास्ते पर थी, जहाँ मैं जानती थी कि मेरा पहला काम जन्मदिन की तिथि को ठीक करवाना था। एक बार जब वह हो जाएगा, मैं अपने साक्षात्कार पर केंद्रित हो सकूँगी। और उसके बाद उम्मीद है कि मुझे एक प्रतिष्ठित नौकरी मिल जाएगी।

मैंने झपकी लेनी शुरू कर दी थी। थोड़ी देर बाद जब, कि पूरा डिब्बा शांत था, अगला स्टेशन आने से पहले हर कोई थोड़ी नींद ले लेना चाहता था। इस तथ्य को देखते हुए कि मैंने एक युवा आदमी के साथ सीट बाँट रखी है, मैं जागने तथा सावधान रहने की कोशिश कर रही थी। ट्रेन ने अब गति पकड़ ली थी, यद्यपि हर समय वह धीमी होती थी या कुछ देर के लिए रुक जाती थी। डिब्बे के दरवाजे मेरी तरफ खुले हुए थे। दहलीज पर बैठे हुओं को प्रत्यक्षरूपेण अतिरिक्त जगह प्रदान करते हुए या उनके सम्मान के लिए कुछ लोग अपने आधे शरीर को अंदर और बाकी शरीर बाहर रखते हुए दरवाजों के हैंडल पर लटके हुए थे। यह एक शानदार, लेकिन गैर-कानूनी एवं बहुत बड़ी खतरनाक क्रिया है।

अगले कुछ घंटे इसी प्रकार जल्द ही बीत गए थे। मैं अपनी बंद आँखों से भी महसूस कर सकती थी, जब ट्रेन धीमी होती थी या रुकती थी और लोगों को भी जो डिब्बे से बाहर जाते थे या अंदर आते थे। मुझे याद है, किसी ने कुछ देर बाद कहा था कि 'बरेली रेलवे स्टेशन आ गया है'। मेरी आँखें बंद थीं, मगर मेरा मस्तिष्क जाग रहा था। वास्तव में मैं शांति में बँध गई थी, मानसिक चिंतन कर रही थी, 'दिल्ली बरेली से ज्यादा दूर नहीं थी। वहाँ एक बार पहुँचने पर मैं सीधे ग्रेटर नोएडा में सी.आई.एस.एफ. कार्यालय में जाऊँगी...मैं हैरान हो रही थी सी.आई.एस.एफ. के कर्मचारी मुझसे क्या पूछेंगे...लेकिन मैं सभी प्रश्नों को सँभाल लूँगी। मेरा केस काफी मजबूत था। त्रुटि उनकी तरफ से हुई थी। मैंने आवेदन पत्र भरते हुए सही जन्मतिथि उल्लेखित की थी। उन्होंने एक गलती की थी...।'

मैं गहन सोच में थी, जब मैंने किसी हाथ को मेरी सोने की चेन को झपटते हुए महसूस किया। एक लड़की की छठी इंद्रिय हमेशा उसकी सबसे अच्छी साथी होती है। वास्तव में मुझे वह हाथ वास्तव में भी महसूस होता, उससे पहले मुझे एक अजीब सा अहसास हुआ था कि कुछ बुरा घटित होने वाला है। अपनी सोच से बाहर निकलते ही मैंने अपनी आँखों को खोलकर अपने चारों ओर चार या पाँच लोगों को देखा। उनकी पियक्कड़ों वाली वेश भूषा तथा सड़कछाप व्यवहार ने मुझे उनकी पृष्ठभूमि तथा अंदाजों का अँदेशा दे दिया था। वे साधारण डिब्बे में एक आसान शिकार ढूँढ़ रहे थे।

स्वाभाविक तौर पर एक अकेली लड़की उनके आसान शिकार की परिभाषा में अच्छी तरह से समाहित हो जाती है। वह तरीका, जिससे वे मेरे सोने की चेन को देख रहे थे, मुझे कोई संदेह नहीं था कि वे मेरी सोने की चेन को चुराने की कोशिश हेतु बहुत जल्दी हमला करेंगे। एक झटके में ही मैं उन्हें यह बताने के लिए उठ गई कि अपनी चेन से अलग होने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी। यह मुझे मेरी माँ का दिया हुआ उपहार था, एक अनमोल उपहार! अतएव, वे अब इकट्ठे मुझ पर टूट पड़े थे।

यद्यपि डिब्बा ठसाठस भरा हुआ था, मेरे साथ के यात्रियों ने फिर भी नहीं पूछा कि क्या हो रहा है—मुझे बचाने

के लिए आने के बारे में तो छोड़िए। यह इस देश की दूसरी सबसे बड़ी समस्या है। हम कदाचित् ही दूसरों के लिए आवाज उठाते हैं, यह सोचकर कि यह उनकी समस्या है। अवश्य ही ये हमारी समस्या होती है; लेकिन हम दुनिया से मुसीबत के समय मदद करने की उम्मीद रखते हैं। उन उजड्ड व्यक्तियों ने मेरे डिब्बे में कुछ अन्य लोगों को भी लूटा था। परंतु तब भी वे चुप रहे थे।

बचपन में मैं अकसर अपने छोटे भाई के साथ लड़ा करती थी। यह हमारे पालन-पोषण के साथ ही होता था। मुझे एक लड़के की तरह ही बड़ा किया गया, जिसके पास एक जैसे काम, कसरत और अवश्य ही दंड भी वैसा ही, जैसा मेरे भाइयों को मिलता था। अगर मुझे कभी उस साहस, संकल्प तथा प्रशिक्षण पर खरा उतरने का मौका चाहिए था तो वह अब सामने था।

जिस तरह से वे भेड़िये मुझ पर आक्रमण कर रहे थे, उससे यह तो साफ था कि वो चेन खींचकर भागनेवाले साधारण झपटमार नहीं थे। वे सख्त अपराधी थे, जो एक लड़की पर हमला करने से पहले सोचते नहीं थे। मेरे पास उनसे भिड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। मैंने एक जवान लड़के को उसके कॉलर से पकड़कर पीछे धकेला, जो मुझे पकड़ने की कोशिश में था। मैंने अन्य गुंडों को भी लातें मारीं। चलती ट्रेन में एक असामान्य लड़ाई शुरू हो गई थी। चूँकि मैं युवा, शारीरिक रूप से स्वस्थ और एथलीट थीं, मैं उन्हें औरों से ज्यादा देर तक उलझा सकती थी। मुझे अस्थिर करने के लिए निश्चित ही एक और आदमी ने मुझे पीछे की तरफ से पकड़ा। मैं उसकी तरफ घूमी और उसे मारा। डरने तथा मेरे द्वारा अचानक हुए हमले से पीछे हटने के बाद वह दुगुनी शक्ति से मुझ पर पुनः टूट पड़ा।

मैं उससे अभी उलझ ही रही थी कि उसके बाकी साथी ठीक हुए और मुझ पर बरस पड़े। उन भेड़ियों ने मेरी चेन झपटने के लिए पुनः प्रयास किया। मुझे याद है कि मैंने उनमें से कुछ को लातें मारी थीं, परंतु वे एक अकेली लड़की के नियंत्रण में आने से बहुत बाहर थे। मैंने उन्हें पहले ही उम्मीद से ज्यादा देर के लिए उलझाकर रखा था। लेकिन सत्य तो यह है कि लुटेरे भी मेरी उम्मीद से ज्यादा देर तक मेरा विरोध कर रहे थे। अब किसी को बीच में आना ही होगा।

परेशान होकर और एक अकेली लड़की को काबू नहीं कर पाने से प्रत्यक्ष रूप से कमजोर मनोबल के कारण लुटेरे खतरनाक हो गए थे। उनमें से एक ने मेरे पेट पर लात मारी, जिससे मुझे अत्याधिक दर्द हुआ। जब मैं दर्द के प्रभाव में थी और मैंने दरवाजे का हैंडल खड़े रहने के लिए पकड़ रखा था, तभी एक दूसरे लड़के ने मुझे लात मारी थी। इससे हैंडल पर मेरी पकड़ ढीली पड़ गई थी।

मैं पुनः अपना नियंत्रण बनाने की कोशिश कर रही थी, जब मुझे दुबारा मारा गया। आदमी के रूप में भेड़ियों को शायद मुझे तड़पते हुए देख मजा आ रहा था। उनका विश्वास पुनः बढ़ा। बदमाशों ने मुझ पर दुबारा कई वार किए। तब भी मैंने विरोध किया—जब तक उनमें से एक ने उग्र उन्माद में सारी ताकत एकत्रित कर मुझे एक अधिक ताकतवर लात मारी थी। मैं संतुलन नहीं रख पाई।

मैं सीधे ट्रेन से बाहर गिर गई थी, तब भी मैंने अपना मोबाइल फोन पकड़ा हुआ था। यद्यपि फोल्डर, जिसमें मेरे प्रमाण-पत्र थे, अब तक पहले ही कहीं गिर गया था। मैं बीच हवा में थी, जब भाग्य ने मेरे लिए एक भयानक कहानी लिख दी थी। मैं सीधे अगले ट्रैक पर चल रही दूसरी ट्रेन से हवा में टकरा गई थी। मेरा शरीर तेजी से चल रही ट्रेन के स्टील से टकराया और अपने आप ही पीछे की तरफ उछलकर पलटाव पर उसी ट्रेन से जा टकराया, कुछ सेकंड पहले जिसमें मैं यात्रा कर रही थी।

दो ट्रेनों से टकराने का यह पींग-पोंग कई सेकंड्स तक चलता रहा, जब तक गुरुत्वाकर्षण बल ने मुझे नीचे

जमीन पर नहीं खींच लिया। 'ठड' की आवाज के साथ मैं रेलवे ट्रैक के बिलकुल पास में गिरी थी। मेरे प्रयासों के बावजूद, मेरा एक पैर उस ट्रैक पर गिर गया, जिस पर से उनमें से एक ट्रेन अभी भी गुजर रही थी। एक अस्पष्ट सी आवाज हुई, जो ट्रेन के गुजरने के शोर में गुम हो गई।

'घच्च्च...'

यह आवाज मेरे पैर के कटने की थी। मेरे कष्ट से भी प्रभावित न होनेवाली ट्रेन के चले जाने के बाद मृत शांति होते हुए भी मेरी कष्ट भरी चीखों को सुनने के लिए वहाँ कोई भी नहीं था। मैं वहाँ बिना हिले-डुले काफी देर तक पड़ी रही, लाल चमकती-बुझती ट्रेन की टेल लाइट को देखते हुए, जब तक वह मद्धिम नहीं हो गई और फिर अँधेरे में गुम नहीं हो गई थी।

❑

तब मैं बेहोश हो गई, शायद मर ही गई थी।

मैं कभी नहीं समझ पाई कि क्यों सुबह के घंटों में सभी ट्रैक साइड स्थान बड़े खुले शौचालयों में बदल जाते हैं, जहाँ काफी लोग शौच करना पसंद करते हैं। मैं जानती थी कि राज्य के अधिकतर हिस्सों में अभी भी पर्याप्त मात्रा में शौचालय नहीं हैं। फिर भी प्रकृति के बुलावे पर जाने के लिए ट्रैरकों के पास आना मुझे हमेशा हैरान करता था। शायद ग्रामीण लोग वहाँ यह सोचकर जाते थे कि ये उनके व्यस्त गाँव से कुछ ही दूरी पर हैं और इस तरह के निजी कार्यों के लिए सुरक्षित हैं। तब यह था, जिसे मैं एक महान् विरोधाभास की तरह देखती हूँ। जान-पहचानवालों के सामने कोई अपनी पैंट उतारे, यह कोई भी नहीं देखना चाहता। परंतु ये साधारण लोग शायद यह बात नहीं समझते कि ट्रैरकों के पास ऐसे बैठने से वे खुद को दुनिया के सामने बेनकाब कर रहे हैं। अधिकतर ट्रेरनों में आधे गाँव से भी अधिक जनसंख्या यात्रा करती है। हर किसी ने, जो ट्रेरनों से यात्रा करते हैं, उन्होंने देखा होगा कि कैसे शर्म के मारे लाल मुँहवाले ग्रामीण अपने पिछवाड़े की तरफ घूम जाते हैं, जब कोई ट्रेरन उनके पास से जाती है। यद्यपि अब स्थितियाँ सुधर रही हैं।

परंतु मैं उस वक्त शिकायत नहीं कर रही थी। राज्य के इस हिस्से में जागरूकता अथवा शौचालयों की कमी मेरे लिए तो आज एक आशीर्वाद सिद्ध हो गई थी। एक लड़का बैठने के लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ रहा था, जब उसने मुझे देखा। मैं उसकी प्रतिक्रिया नहीं देख सकी, परंतु मैं उसकी दशा का अनुमान लगा सकती हूँ। गरीब आदमी! वह निवृत होने ही वाला था, जब वह ट्रैक साइड पर खून से सनी लड़की को (मुझे) देख पीछे हट गया था। जिज्ञासावश उसने कुछ कदम मेरी तरफ बढ़ाए, परंतु तब डर और शायद प्रात:कालीन दबाव ने उसे मुड़कर जल्दी भागने के लिए विवश कर दिया था।

मैं हैरान थी, क्योंकि इतना अधिक खून बहने के बाद भी मैंने खुद को जिंदा रखा था। युवा मेरे लिए आशा की एक किरण बनकर आया था, जो अचानक गायब हो गई थी। जैसे वो आई थी। अब मुझे खुद पर भी संदेह होना शुरू हो गया था कि ट्रैक के साइड में पड़ी हुई मैं और कितनी देर तक लगातार खून, ताकत और उम्मीद खोते हुए जिंदा रह सकती हूँ? मैंने अपने भाग्य से प्रश्न पूछने शुरू कर दिए थे, जब मैंने चिंतित दिखनेवाले गाँववालों का एक समूह अपनी तरफ आते हुए देखा था। वह युवा, जिसने मुझे सबसे पहले देखा था, उसने अपने कई साथियों को सतर्क किया था, वे सभी एक जिज्ञासु निगाह लिये पहुँचे थे।

जल्द ही मेरे आस-पास बहुत सारे लोग थे हर कोई लाइन लगाकर मुझे नजदीक से देख रहा था। जैसे मैं कोई एलियन थी, जो दूसरे ग्रह से धरती पर पहली बार आई थी।

'जिंदा है कि मर गई?' मैंने उनको आपस में फुसफुसाते हुए सुना, जब वे मुझे विभिन्न कोणों से घूर रहे थे। पृष्ठभूमि में मैं औरतों की जीभ घुमाते हुए 'च्च-च्च' की आवाज, उनकी सहानुभूति देती हुई आवाज भी सुन सकती थी। परंतु मुझे उनके होंठों की सेवा की जरूरत नहीं थी। मुझे किसी ऐसे व्यक्ति की जरूरत थी, जो मुझे शीघ्र नजदीकी अस्पताल में लेकर जाए। मुझे बहुत ठंड भी लग रही थी।

मैंने एक शॉल या कंबल में लिपटी एक औरत को देखा। कुछ भी बोल न पाते हुए मैंने उसे इसमें लपेटने का इशारा किया। वह औरत समझ गई कि मैं किसके लिए कह रही हूँ। अभी तक वह अनिच्छुक लग रही थी और ऐसा जाहिर भी है। वह अमीर नहीं थी। उसकी तरह गरीब किसान दो छोरों को एक करने के लिए संघर्ष करते हैं। एक शॉल या एक परदा उनके लिए एक कीमती संपत्ति होता है; एक ऐसी चीज, जिससे कोई आसानी से अलग नहीं हो सकता। परंतु शायद मेरी दुर्दशा पर तरस खाकर उसने अपनी अनिच्छा त्याग दी। उसके जैसी औरतों को

जिन वित्तीय समस्याओं का रोजाना संघर्ष करना पड़ता है, उनको देखते हुए मैं सोचती हूँ कि वह एक आश्चर्यजनक संकेत था। हमारे गाँव ऐसे लोगों से भरे पड़े हैं। संकट में अनजान लोग भी मदद करने को तैयार हो जाते हैं। वहाँ पर कुछ अपवाद भी हो सकते हैं, परंतु कुल मिलाकर सभी लोग सज्जन तथा भगवान् से डरनेवाले हैं। मेरा जिंदा बचकर मेरी कहानी बताना इसी का एक प्रमाण है।

''तुम्हारा फोन नंबर क्या है? तुम कहाँ रहती हो?''

वह आदमी, जिसने मदद के साथ वापस आने से पहले मुझे ट्रैक साइड पर ढूँढ़ने के बाद त्वरित आश्रय भी दिया, एक साधारण ग्रामीण होने का एक उदाहरण था, जिसने नैतिक दुविधा का सामना करते हुए विवेक से सही रास्ता चुना था। मुझे बाद में पता चला कि उसका नाम पिंटू कश्यप था। यह व्यक्ति था, जिसने मुझसे पूछा था कि क्या मुझे मेरे परिवार में से किसी एक का नंबर याद था। अवश्य ही मुझे याद था! परंतु मेरी आवाज भावनाओं और शक्तिहीनता से बंद पड़ी थी। मैं इतनी देर तक सिर्फ अपनी आत्मशक्ति की वजह से जीवित रह पाई थी। परंतु हर किसी की एक सीमा होती है। मेरी भी सीमा समाप्त होती दिख रही थी। मैंने उसको अपना कान मेरे समीप लाने का इशारा किया था, ताकि मैं उसके कान में धीरे से नंबर बता सकूँ। उसने वैसा ही किया, जैसा मैंने कहा था। मैंने उसे पहले अपनी माँ का नंबर दिया था, जो कि पहुँच से बाहर था। तब मैंने पुन: कश्यप के कान में धीरे से बताकर 'साहब' का नंबर दिया और उन्हें अपना जीजा बताया।

उस युवा ने मेरे जीजा के मोबाइल नंबर पर एक मिस्ड कॉल किया था। जब स्थिति पूरी तरह से आपातकालीन हो, तब एक मिस्ड कॉल देने का कोई मतलब नहीं रह जाता। मैं हैरान हो रही थी कि यदि उसने एक रुपया बचाने के लिए मिस्ड कॉल किया था और वह इसलिए, क्योंकि उसके मोबाइल में काफी कम देय राशि थी। चाहे कोई भी कारण हो, परंतु इसने मुझे चोट पहुँचाई थी—यद्यपि मुझे यह नहीं भूलना चाहिए कि यदि इन लोगों ने मेरी मदद नहीं की होती तो मैं बच नहीं सकती थी। सौभाग्य से साहब हर मिस्ड कॉल के जवाब में फोन करते हैं, उन नंबरों पर भी, जो अनजाने होते हैं।

जब साहब ने वापस कॉल किया, तब उस लड़के ने उन्हें मेरी हालत के बारे में बताया। सारा विवरण बिलकुल ठीक था, बस इस तथ्य के अलावा कि उसने बताया कि मैंने अपनी दोनों टाँगें दुर्घटना में खो दी हैं। मैं हैरान हो रही थी कि मेरे परिवार ने इस सूचना को किस प्रकार लिया होगा।! परंतु उस लड़के को यह सोचने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता था कि मेरी दोनों टाँगें कट चुकी थी। प्रत्यक्षत: मेरी एक टाँग ट्रेन के नीचे आकर कट गई थी और बुरी तरह फटे कपड़ों में निस्तेज लटकी पड़ी थी। दूसरी टाँग पस्त, चोटिल, टूटी हुई और खून से सनी थी।

बातचीत के बाद लड़के ने बताया कि साहब ने अनुरोध किया था कि मुझे सबसे नजदीकी अस्पताल पहुँचा दिया जाए और वह घटनास्थल पर आने के लिए तुरंत निकल रहे थे। उन्होंने लड़के को यह भी विश्वास दिलाया था कि वह जो भी खर्चा मुझे अस्पताल ले जाने के लिए करेगा, साहब उसे ब्याज समेत सारा पैसा वापस दे देंगे। यद्यपि गाँववालों ने बाद में उनकी की हुई मदद के बदले पैसा लेने से मना कर दिया था, फिर भी इस तरह के प्रोत्साहन देना समझदारी भरा कदम है। निश्चित ही धन एक बहुत बड़ा प्रेरक है। वास्तव में, बड़ी कंपनियाँ भी अपने दौलतमंद कर्मचारियों को उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रलोभन देती हैं। इस अभिप्राय से धन भी एक बहुत बड़ा संतुलक है, क्योंकि हर किसी को इसकी प्रत्येक क्षण जरूरत पड़ती रहती है। गरीब को तो चाहिए ही, परंतु अमीर को भी इसकी जरूरत है। किसी एक की जरूरत के लिए सोने को एक घड़े में संग्रह करना ठीक है। समस्या तब शुरू होती है, जब कोई एक पूरी तरह से आर्थिक सरोकार ही रखता है। ऐसे लोगों के लिए अपनी जिंदगियों के अंत के समय शांति ढूँढ़ने हेतु हिमालय के लिए प्रस्थान करना असाधारण बात नहीं है।

मेरे पास लाए जा रहे एक ठेले की आवाज से मेरी बेहोशी टूटी। मुझे ट्रैक की साइड से उठाया गया था और जब मुझे ठेले पर रखा जा रहा था, तभी एक ट्रेन वहाँ पहुँची। यह सुबह से पहली ट्रेन थी। गाँववालों ने मुझे अपने नजदीक खींच लिया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि कहीं मैं वापस ट्रैक पर उस बल के कारण न गिर जाऊँ, जो एक ट्रेन गुजरते हुए उत्पन्न करती है। जब ट्रेन हमारे पास से चली गई, तब मुझे चनेती रेलवे स्टेशन ले जाया गया। वहाँ से मुझे बरेली जानेवाली एक ट्रेन के गार्ड केबिन में रखा गया था।

मुझे याद है कि चनेती स्टेशन पर तमाशा देखनेवाले लोगों की संख्या काफी बढ़ गई थी। हर कोई मुझे अपनी आँखों में दया लिये देख रहा था। लेकिन काफी आश्चर्य की बात है कि लोगों से पानी देने की मेरी प्रार्थना के बावजूद किसी ने भी मेरे इशारों की ओर ध्यान नहीं दिया। वे अपने सहानुभूतिपूर्ण चेहरों के साथ बड़ी-बड़ी आँखों से मुझे देखने में व्यस्त थे। फिर भी उनकी क्रियाएँ उनके भावों का साथ नहीं दे रही थीं। इसके अलावा मुझे 'च्च-च्च' की दु:ख जताती आवाजें मिल रही थीं (जिसका लगभग मतलब 'हाय! बेचारी लड़की' होता है)।

शायद भीड़ को समझ नहीं आया था कि मैं वास्तव में क्या चाहती थी। उस समय तक मैं साफ तथा सुनाई देने योग्य कुछ कह नहीं पा रही थी। चाहे जैसे, मुझे बरेली स्टेशन पहुँचने में ज्यादा समय नहीं लगा, जहाँ मुझे गार्ड केबिन से बाहर ले जाया गया, एक स्ट्रेचर पर डाला गया था और काफी लंबे समय तक के लिए प्लेटफॉर्म पर छोड़ दिया गया था। दुबारा एक भीड़ ने मुझे घेर लिया था। मुझे उनकी खोखली सहानुभूति पर आश्चर्य महसूस हो रहा था और साथ ही गुस्सा भी आ रहा था।

काफी देर के बाद एक लेडी डॉक्टर स्टेशन पहुँची और उसने एक जाँच की थी। मुझे बरेली के जिला अस्पताल में भेजने के लिए उसने एक कागज पर कुछ अस्पष्ट लिखकर दिया था। कोई भी व्यक्ति यह सुनिश्चित करने के लिए चिंतित नहीं था कि मुझे प्लेटफॉर्म से ले जाया गया है या नहीं।

क्या वे भूल गए थे कि मैं जिंदा भी थी? क्या वे मेरे मृत शरीर के साथ भी ऐसा ही व्यवहार करेंगे? वस्तुत: मुझे संदेह है कि मैं मर गई होती तो लोगों ने मेरे प्राणहीन शरीर को ज्यादा सम्मान दिया होता। हमारे देश की इस विडंबना पर मैं खुद को मुसकराने से न रोक सकी, जहाँ एक जीवित शरीर की अपेक्षा एक मृत शरीर को अधिक सम्मान प्रदान किया जाता है। एक पुलिसवाला वहीं पास में खड़ा था और मैंने उससे पूछा कि मुझे अस्पताल क्यों नहीं ले जाया जा रहा है। उसने उत्तर दिया था, 'कागजी काररवाई।'

यदि मैंने इसके दुष्परिणामों को स्वयं ही नहीं झेला होता तो शायद यह शब्द 'कागजी काररवाई' मेरे लिए कोई मायने नहीं रखता। यह कुछ और नहीं, बल्कि यह निश्चित करने के लिए एक बहाना है कि हर कोई खुद को कागज के कुछ पन्ने भरकर बचा सके, यद्यपि ऐसा करने में भले ही किसी पीड़िता को आपातकालीन चिकित्सा मिलने में देरी हो जाए। काफी समय के बाद कुछ लोग आए और मुझे एक टेंपों में बरेली जिला अस्पताल ले गए थे, जहाँ मुझे पुन: अभी तक पूर्वानुमानित ताका-झाँकी और प्रारंभिक प्रश्नों का सामना करना पड़ा था।

कुछ देर के बाद मैंने अस्पताल के कर्मचारियों को मेरी चिकित्सीय स्थिति नाजुक कहते सुना।

''उसके घुटने से नीचे के बाएँ पैर का तत्काल ऑपरेशन किए जाने की जरूरत है। बुरी तरह टूटी हुई दाईं टाँग को भी ऑपरेशन की जरूरत है। यह एक बहुत ही नाजुक मामला है और हमें काफी जल्दी काम करने की जरूरत है।'', अस्पताल का एक कर्मचारी कह रहा था। वह कुछ समय के लिए रुका और कहने लगा, ''...केवल एक समस्या है कि हमारे पास ऑपरेशन के दौरान बेहोश करनेवाला यानी (एनेस्थिसिया देनेवाला) कोई नहीं है।''

जिला अस्पताल की हालत काफी खराब है। उनके पास पर्याप्त मात्रा में चिकित्सकों और प्रशिक्षित नर्सों की कमी है। उनके पास उचित मात्रा में ऑपरेशन से संबंधित उपकरण और मेरे जैसी आपातकाल स्थिति के लिए कोई

रक्तकोष (ब्लड बैंक) नहीं है। यहाँ तक कि अस्पताल के कर्मचारियों का चेहरा मुरझाया हुआ था। हमारे देश की स्वास्थ्य सेवा को पूर्ण जाँच और मरम्मत की जरूरत है, विशेषतया उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में।

अभी तक मुझे विश्वास हो गया था कि मुझे मेरे बाएँ पैर को भी अलविदा कहना पड़ेगा। मैंने निश्चित किया था कि यदि बेहोश करनेवाला कर्मचारी उपलब्ध नहीं होता है तो मैं ऑपरेशन थिऐटर में उसके बिना ले जाने के लिए कहूँगी, ''श्रीमानजी, चिंता न करें, यदि आपके पास बेहोश करने के लिए साधन या व्यक्ति नहीं है कृपया उसके बिना ही ऑपरेशन करें।'' मैंने कहा। अस्पताल कर्मचारी के चेहरे पर स्तंभित आकृति ने इस तथ्य को झुठला दिया था कि उसका सामना अभी तक मेरे जैसे किसी भी रोगी से नहीं हुआ था, जो एनेस्थिसिया (बेहोश करनेवाली दवा) की सुरक्षा लिये बिना ही चाकू से कटने को तैयार था। बी.सी. यादव, अस्पताल के (फार्मासिट) ने मुझे बताया कि बिना एनेस्थिसिया के असहनीय पीड़ा होगी।

''यह निश्चित करना जरूरी होता है कि ऑपरेशन के दौरान मरीज को अधिक पीड़ा न सहन करनी पड़े।''

फार्मासिस्ट ने बिलकुल सही बात कही थी। परंतु मेरी सहन-शक्ति की सीमा रात भर में काफी हद तक बढ़ गई थी। ''यादवजी, सारी रात मैंने बहुत दर्द सहा है और जिंदा रही हूँ। वहाँ पर हालात काफी भयावह थे। उसके मुकाबले अब काफी कुछ अच्छा है, इसलिए चिंता न करें। कृपया ऑपरेशन के लिए तैयारी करें। मैं तैयार हूँ।'' मैंने यह बहुत विश्वास के साथ कहा था, जिसका असर उनपर नजर आने लगा था। मैंने पुन: उनकी चिंता दूर करने के लिए कहा, ''श्रीमानजी, आप खुद को दोष देना बंद करें। मैं दर्द वहन नहीं कर सकती हूँ। कम-से-कम इस समय मुझे यह जानकर संतुष्टि है कि यह दर्द मेरे भले के लिए है।''

यादवजी एक दयालु व्यक्ति थे। मैं उन्हें कभी नहीं भूल पाऊँगी। यह वो पहले आदमी थे, जिन्होंने मेरा अनुरोध माना था। उन्होंने अपने सहकर्मियों और चिकित्सकों से पूछा, जो कुछ मनुहार और बातचीत के बाद झिझकते हुए मान गए थे।

मैंने अभी एक बाधा पार की ही थी, जब दूसरी बाधा मेरे चेहरे को घूरने लगी थी। वहाँ इच्छुक रक्तदाताओं की सख्त जरूरत थी। यद्यपि मुझे खून की कई यूनिटों की जरूरत थी, मगर रक्तकोष और रक्तदाता दोनों ही नहीं होने की वजह से डॉक्टर चाहते थे कि मुझे कम-से-कम एक इकाई (यूनिट) रक्त सर्जरी से पहले चढ़ा दिया जाए। परिवार और करीबी मित्रों को छोड़कर ऐसे रक्तदाताओं का मिलना मुश्किल था। आपको ऐसे समय में व्यवसायी रक्तदाता मिल सकते हैं, परंतु वे ऐसा सिर्फ धन के लिए करते हैं। चाहे जो हो, मेरे परिवारवाले या मित्र वहाँ आस-पास नहीं थे। मैं व्यवसायियों को पता लगाने की स्थिति में नहीं थी। परंतु यदि वो उपलब्ध होते भी हैं तो मेरे पास उनको देने के लिए पैसे नहीं थे। इतनी देर तक जिंदा रहने के बाद मुझे एक आशा थी कि किसी भी तरह से मैं इस बाधा को भी पार कर लूँगी। मैं जानती थी कि अनपेक्षित स्थानों से मदद आ ही जाएगी।

अंतत: हुआ भी यही था।

अस्पताल के कर्मचारियों के लिए एक पीड़ित की स्थिति से द्रवित होकर स्वयं अपनी इच्छा से मदद करना व्यावहारिक नहीं था। वह इसलिए, क्योंकि रोजाना ये कर्मचारीगण बहुतेरे मरीजों से टकराते हैं। कुछ नाजुक रूप से बीमार या घायल होते हैं, बहुत से उनके सामने मर जाते हैं। वे दृश्य, जो हमारे लिए काफी करुणाजनक होते हैं, उनके लिए रोजाना का काम होता है। समय के साथ अस्पताल कर्मचारीगण इन सबके इतने आदी हो जाते हैं कि कुछ उन्हें असंवेदनशील होने का भी दोषी मानते हैं। परंतु यह एक आरोप यादवजी पर नहीं लगता।

''मैं अपना रक्त तुम्हारे लिए दान करूँगा।'' उन्होंने यह जानने के बाद घोषित किया था कि मेरे पास सहारा लेने के लिए कोई नहीं है। राजनेता, जो बड़े-बड़े वायदे तो करते हैं, परंतु उनको पूरा करने की चिंता ही नहीं करते, उनसे

भिन्न यादवजी ने अपने शब्दों का मान रखा था। वह शीघ्रता से किसी को उनकी नस में छेद करने के लिए ले आए थे और जैसे ही खून उनके शरीर से छोटी-छोटी बूँदों में रिसने लगा, पतली नली से फिसलते हुए प्लास्टिक बैग में संगृहीत होने लगा, मेरा गला भर आया था।

एक घंटे से थोड़ा पहले प्लास्टिक बैग काफी भर गया था। एक छोटी बीप की आवाज ने इशारा किया था कि रक्त का एक यूनिट संगृहित हो गया है। अभी भी नाड़ी में हुए छेद की जगह पर रूई पकड़े हुए यादवजी धीरे से बिस्तर से उठे। उन्होंने उसको देखते हुए मेरी ओर देखा, मेरे पास चलकर आए और अपना एक हाथ मेरे सिर पर रखा तथा मुसकराए थे।

''रक्तदान के बाद एक व्यक्ति को रूई छिद्रित बिंदु पर कुछ समय तक बिना रगड़े रखनी चाहिए।'' उन्होंने कहा। मैं भी मुसकरा दी थी।

''यदि तुम्हें कुछ चाहिए हो, मुझे बता देना।'' उन्होंने अस्पताल में जाने से पहले कहा। उनके जाने के काफी देर बाद भी मैं उनके बारे में सोच रही थी। दुर्घटना के बाद मैं बहुत से अच्छे आदमियों से मिली थी, जिन्होंने अपने मार्ग से भिन्न जाकर मेरी मदद की थी। वह उनमें से एक थे।

❑

ऐसे लोग और उनके भाव दुर्लभ होते हैं और आप उन्हें पूरी उम्र के लिए याद करते रह जाते हैं।

एक ईमानदार सिपाही की तरह मेरे बाएँ पैर का कटा हुआ हिस्सा, त्वचा के एक कमजोर टुकड़े के द्वारा चिपका हुआ अभी भी मेरे साथ बरेली जिला अस्पताल तक जुड़ा हुआ था। अब इसका समय पूरा हो गया था। मैं जानती थी कि अब इसे मुझे छोड़ना होगा। भले ही उसके ऊपर से ट्रेन गुजर गई थी, लेकिन वह मुझसे चिपका हुआ था, मानो कह रहा हो कि दीर्घ संबंध सिर्फ ऐसे ही खत्म नहीं हो जाते। यह संबंध वाकई बहुत लंबा था। एक राष्ट्रीय वॉलीबॉल खिलाड़ी होने के कारण मैं अपने पैरों पर इतनी निर्भर हो गई थी, जैसे कि वे मेरे हाथ हों। मैं बहुत से अन्य खेल भी खेला करती थी। और हर समय मैं एक बॉल को किक करती थी या उसे आगे की तरफ ले जाती थी या गोल करती थी या मेरे प्रतिपक्षियों को चकमा देती थी, तब मैं ऐसा इस विश्वास में निर्भय होकर करती थी कि मेरे पैर मुझे गति, संतुलन और दक्षता देंगे, जो हर खिलाड़ी को चाहिए होती है।

मेरे पैर कुछ अन्य गतिविधियों में भी काम आते थे। मैं इनका प्रयोग खुले दिल से अपने दोनों भाइयों से दूर भागने के लिए करती थी, जब कभी मैं उनके खिलाफ योजनाएँ रचते हुए पकड़ी जाती थी। धावक प्रतियोगिता के लिए भागने में मैं अपने दोनों भाइयों से होड़ करती थी उनके साथ तब तक भागती थी, जब तक मेरे पिता चाहते, जो अकसर साइकिल चलाकर आगे जाते थे। शरारती बच्चों की तरह हम खतरनाक करतब भी करते थे, जैसे कि चारदीवारी की कगार पर चलना, क्योंकि हम दूसरों की आँखों में अविश्वास की दृष्टि मात्र देखना पसंद करते थे। मैं अपनी क्षमता पर अत्यधिक विश्वस्त थी कि मैं कहीं भी संतुलन बनाए रख सकती हूँ। स्वस्थ हड्डियों के लिए मैं हर समय चिकन या मटन का एक टुकड़ा रखती थी। मैं सिर्फ मांस ही नहीं, बल्कि हड्डियाँ भी चबाती थी, क्योंकि मैंने कहीं पढ़ा था कि जानवरों की हड्डियाँ कैल्सियम का सबसे अच्छा स्रोत होती हैं। वास्तव में, मैं यह कहने की अभ्यस्त थी कि मेरी हड्डियाँ स्टील की बनी हुई हैं।

धन्यवाद देने के बधाई पत्र (कार्ड) और संदेश देने के युग में यह बड़े अचरज की बात है कि शायद ही किसी को एक तंदुरुस्त और स्वस्थ शरीर का वरदान देने के लिए भगवान् को धन्यवाद कहने का मुश्किल से एक भी मौका मिला हो। हममें से बहुत इसका अधिक सम्मान भी नहीं करते हैं। बहुत से लोगों की तरह मैं भी अवश्य अपने पैरों को देखती थी। अब मैं अपने पैरों से अपने संबंध के अंत के लिए जा रही थी। यद्यपि मेरा दायाँ पैर मेरे साथ ही रहना था। उसके साथ वैसा ही नहीं होने जा रहा था। मैंने चिकित्सकों से यह सूचना प्राप्त की थी कि मेरे दाएँ पैर में एक रॉड डाली जाएगी, क्योंकि मेरे दाएँ पैर की इतनी हड्डियाँ बुरी तरह टूट चुकी हैं कि एक साधारण प्लास्टर कोई मदद नहीं कर पाएगा। मैं हैरान हो रही थी कि मैं कैसे इस सच्चाई का सामना करूँगी! समय-समय पर मैं प्रवेश द्वार पर परेशान होते हुए यह जाँचने के लिए देख रही थी कि मेरा परिवार आ गया है या नहीं! मैं जानती थी कि वे इस समय रास्ते में होंगे, जब से उन्होंने मेरी खबर सुनी होगी।

हम सबको कवि शेली की एक उक्ति उधार लेनी पड़ेगी, 'जिंदगी और खून के काँटों पर गिर गए।' परंतु हालातों का सामना करके अपनी हिम्मत का वजन कम होने के बजाय हम अपने तरीकों से ताकतवर होकर निकलते हैं। मैं नहीं जानती थी कि मैं अतीत में कितनी देर खोई रही थी। मेरी माँ बस्ती जिला के कुदरहा खंड में एक राष्ट्रीय प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में एक स्वास्थ्य निरीक्षक थीं। वह शुगर की मरीज थीं और उन्होंने हमें पालने-पोसने के लिए कठिन परिश्रम किया था, जब से हमारे सेना नायक पिता संदिग्ध परिस्थितियों में हमारे सरकारी मकानों, जहाँ हम रहते थे, के पास एक तालाब में डूबकर मृत पाए गए थे। मेरे पिता की रहस्यमयी मौत के आठ माह बाद

पुलिस ने हमारे घर के दरवाजे पर दस्तक दी थी। हमने तब अनुभव किया कि हमारे काले दिन तो बस अभी शुरू ही हुए हैं। पुलिस ने हमारे नजदीकी रिश्तेदारों में से एक की शिकायत पर यह काररवाई की थी, जिसने यह दावा किया था कि मेरे पिता की रहस्यमयी मृत्यु में मेरी माँ, मेरी बड़ी बहन और मेरे दोनों भाइयों में से बड़े का हाथ था। मुझे अनुमान है कि मेरा और मेरे दूसरे भाई राहुल का नाम पुलिस रिपोर्ट में नहीं था, क्योंकि हम बहुत छोटे थे। हम दोनों तब बच्चे थे। मैं छह साल की थी और राहुल मुझसे एक साल छोटा था। यह साफ था कि मेरे परिवार में बड़ों का गिरफ्तार होना हमें फँसाने के लिए एक बड़े षड्यंत्र का हिस्सा था। पुलिस भी यह जानती थी।

शुक्र है कि एक संदर्भित जाँच के बाद इस आरोप में अधिक बल नहीं मिला था और यह आरोप उसके तुरंत बाद खारिज हो गया था। बीस दिनों के बाद मेरी माँ, भाई और बहन जमानत पर रिहा हो गए थे। परंतु आज भी हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं, जब मैं वे समय याद करती हूँ, जिन्हें मैंने और मेरे भाई राहुल ने अकेले, रोते हुए बिताए थे। हमारे पास एक गाय थी, जो मेरे पिता ने खरीदी थी। जब हमारे आस-पास के लोग जानवर बन गए थे, तब गाय ने हमारी देखभाल की थी, घर की सुरक्षा की थी और हमें दूध दिया था, जिससे हमें जीने में मदद मिली थी। वास्तव में, हम इतना डरे हुए थे कि हम खाली घर में भी नहीं जाते थे और हम उनमें से बहुत दिन बाहर बैठकर रोते रहे थे। गाय के पास ही सोते थे, जो उस कठिन समय में हमारी सुरक्षा करती थी।

अब उस गाय को भी बाद में बेचना पड़ा था, क्योंकि दूर के कुछ रिश्तेदारों और दोस्तों ने माँग की थी कि हमें गाय से अलग हो जाना चाहिए, जिसके बदले में परिवार की जायदाद के बँटवारे में हमें उनकी सहायता मिलेगी। जेल से छूटने के कुछ दिनों के बाद ही मेरी माँ का तबादला मेहदावल, जो अब संत नगर जिले का एक हिस्सा है, के एक प्रारंभिक स्वास्थ्य केंद्र में हो गया था। यह स्थान कुदरहा से अनुमानत: एक सौ किलोमीटर दूर है। दो भाइयों में से बड़े रवि भैया, जिन्होंने कुछ दोस्तों के साथ मिलकर एक छोटी सी दुकान खोली थी, ने कुदरहा में ही रुकने का निश्चय किया था। हमें मेहदावल स्थानांतारित हुए एक साल गुजर चुका था। समय-समय पर वे हमारे पास आया करते थे और काफी खुश थे कि उनका व्यापार अब गति पकड़ने लगा है। हमने भी उनकी खुशियाँ बाँटी थीं।

लेकिन हमारी खुशियाँ ज्यादा लंबी नहीं चली थीं।

रवि भैया का खून हो गया था। उन्हें धोखा मिला था उन्हीं दोस्तों से, जिनके साथ उन्होंने अपना व्यापार स्थापित किया था। कोई भी वास्तव में नहीं जानता कि क्यों उनके दोस्तों ने उन्हें मार दिया? हम एक अन्य लड़ाई के लिए तैयार हो गए थे। हमारे पिता की मौत के बाद हत्यारों के पीछे पड़ने के लिए हमारे पास न तो धन था और न ही स्थानीय संपर्क था। मेरी माँ किस पीड़ा से गुजर रही होगी, यह समझने के लिए हम बहुत छोटे थे। मगर आज हमें महसूस होता है कि शायद हमारी हस्तरेखा में ही ऐसा कुछ है, जो हमें अन्याय के खिलाफ लड़वाता है और दर्द से अपनी तरह उलझना सिखाता है। मेरी माँ बहादुरी से लड़ती रही थीं।

समय, जो कि एक बड़ा मरहम है, लगातार चलता ही रहा, मानो उड़ रहा हो। जल्द ही हम अपने दर्द को भूलने और फिर से मुसकराने की कोशिश करने लग गए थे। यह आसान नहीं था। परंतु जिंदगी को तो चलते रहना ही है। कोई महत्त्व नहीं है कि दु:ख कितना बड़ा है। समय हमेशा ही मरहम लगाता है, फिर भी घाव रह जाते हैं। हम भी दु:ख के समय का साथ निभाना सीख रहे थे। हमारी जिंदगियों में खुशियाँ तब वापस आईं, जब मेरी बहन का विवाह निश्चित हुआ था। यह मेरे परिवार के लिए सबसे अच्छी चीज थी।

हमारे बहनोई ओम प्रकाश, जिन्हें हम 'साहब' या 'भाई साहब' भी पुकारते थे, में हमें एक दोस्त, साहित्यकार और मार्गदर्शक मिला था। वह सी.आर.पी.एफ. में काम करते थे, परंतु बहुत सारा समय हमारे साथ बिताते थे;

क्योंकि वो पैरामिलिट्री बल के साथ काम करते थे, जहाँ पर अनुशासन और पदक्रम का बहुत महत्त्व होता था, तभी शायद पहले मेरी बहन ने और बाद में हम सबने उन्हें 'साहब' बुलाना शुरू किया था। धीरे-धीरे हम अपने परिवार के सभी महत्त्वपूर्ण निर्णयों के लिए उनपर निर्भर होना शुरू हो गए थे। और यह स्वाभाविक था कि मैं, अपनी सबसे दु:खद घड़ी में सबसे पहले उनको ही आवाज दूँगी।

'बेटा...'

मुझे ऐसा लगा कि मैंने किसी को मुझे आवाज देते हुए सुना था। आवाज कहीं नजदीक से आती लग रही थी...काफी नजदीक से।

'बेटा...'

जब मैं अपनी यादों में गुम थी, कोई मुझे आवाज लगा रहा था। मेरे मस्तिष्क में उथल-पुथल मची हुई थी—हर प्रकार के विचार एक-दूसरे के साथ गुथकर मेरा ध्यान खींच रहे थे।

'बेटा...'

आवाज कहीं नजदीक से आती लग रही थी...काफी नजदीक से

होश में आते ही मैंने देखा कि जो व्यक्ति मुझे बुला रहा थे, वह बी.सी. यादव थे। वो मेरे बिस्तर के साथ खड़े थे, मुझे मेरी यादों से जगाने की कोशिश करते।

'बेटा, हम तुम्हें सर्जरी के लिए तैयार कर रहे हैं। मुझे उम्मीद है कि तुम तैयार हो।', उन्होंने अपनी ममत्व भरी आवाज में कहा था। मैंने 'हाँ' में सिर हिलाया था।

कुछ रिश्ते जल्द ही महकने लगे थे। मेरे बढ़े हुए परिवार के लोगों ने कुदरहा में फिर से हमारे खिलाफ साजिश रची थी और एक झूठे आरोप मेरी माँ, बहन तथा भाई को सलाखों के पीछे भेज दिया था। और यहाँ एक पूर्णतया अजनबी इनसान मुझे जिंदा रखना चाहता था। जीवन वास्तव में एक महान् शिक्षक है। मात्र कुछ ही घंटों में यादवजी और मेरे बीच एक बंधन बन गया था।

वह मुसकाराए और चले गए। कुछ समय के बाद वह अस्पताल के कर्मचारियों के साथ आए, जिन्होंने मुझे सर्जरी के लिए तैयार करना शुरू कर दिया था। कर्मचारियों ने मुझे प्रभावी और व्यवसायी पेशेवर के तौर पर साफ-सुथरा करने का अपना कार्य थोड़ा-बहुत किया था। रूई का स्पर्श भी मुझे दर्द पहुँचा रहा था। मुझे यह लगना आरंभ हो गया था कि मैं खुद पर सर्जिकल क्रिया, पूर्णत: एनेस्थीसिया के बिना यानी दर्द से बचने के कोई आवरण के बिना ही होते हुए देखूँगी। अस्पताल में मेरे निर्णय के बारे में सबको पता चल गया था। बहुत से लोग, जिनमें कुछ मरीज जो छूटने वाले थे, उनके परिचारक, अस्पताल कर्मचारी तथा चिकित्सक हर कोई अपनी-अपनी बारी से मुझे प्रोत्साहित करने आ रहे थे। उन्होंने पहले मरीजों और पीड़ितों को देखा होगा, शायद कुछ मुझसे भी बुरी हालत में होंगे। परंतु अकसर बहुत से ऐसे मरीजों को बेहोशी में ले जाया जाता था। अस्पतालों की खस्ता हालत को देखते हुए मेरा अनुमान है कि बहुत से नाजुक रोगी या तो जीवित नहीं रह पाते थे या उनको कहीं और भेजने के लिए लिख दिया जाता था।

मुझे भी कहीं और भेजने के लिए लिख दिया जाता, यदि मैं स्वेच्छा से शल्य क्रिया जल्दी से और हर हालत में करवाने के लिए अपनी आवाज नहीं उठाती। यही कारण था कि मुझे काफी ध्यान और अपेक्षाकृत अच्छी देखभाल मिल रही थी। मैं अलग बनने की कोशिश कर रही थी। हर कोई दर्द बरदाश्त नहीं कर सकता है। लेकिन अस्पताल के कर्मचारियों को मेरी स्थिति के बारे में चर्चा करते सुन मुझे कोई संदेह नहीं रह गया था कि मुझे एक शल्य क्रिया की बहुत ज्यादा आवश्यकता थी। मैं जानती थी कि यदि मैं अपनी तरफ से शल्य क्रिया करवाने के लिए तुरंत ही

पेशकश नहीं करती तो मैंने अपने पूरे पैर और अपनी जिंदगी को भी खतरे में डाल दिया होता। असलियत में गैंगरीन का खतरा था।

जींस पैंट, जो मैंने पहनी हुई थी, अब तक उतारी जा चुकी थी। मुझे अस्पताल के कंबल में लपेटा था। कुछ सर्जन बहुत से सर्जिकल औजार उठाए हुए आ गए थे और मुझे देखकर मुसकराने लगे थे। उसके बाद वे व्यस्त हो गए थे, पहले मेरे बाएँ पैर को घुटने के नीचे से काटने के लिए और उसके बाद उस स्थान के खुले हुए हिस्से को काटने, साफ करने और सिलने के लिए, जहाँ से मेरा पैर काटा गया था। जैसे ही मैंने चाकू को अपने शरीर पर चलते हुए महसूस किया, मैंने अपनी आँखें बंद कर ली थीं और बिस्तर के किनारों को कसकर पकड़ लिया था। सर्जरी मेरी कल्पना से भी ज्यादा दर्द भरी थी। सर्जनों ने मेरी त्वचा पर अनुभवी तरीके से ऐसे चाकू चलाया जैसे कि कोई गृहिणी ब्रेड के टुकड़े पर चाकू से मक्खन लगाती है।

मुझे इस नए दर्द के साथ समझौता करने में समय लगेगा। शल्य क्रिया के दौरान अपने मस्तिष्क को व्यस्त रखने के लिए मैं खुद से बात करने लग गई थी। हर क्षण मैं एक मूक चीख को बाहर निकलने दे रही थी, जब भी चाकू मेरी त्वचा को काटता था या जब डॉक्टर घावों को सिलते थे। परंतु मैं सर्जनों से शक्ति ग्रहण कर रही थी, जो कि अपना कार्य करते हुए एक पूर्णतया अभिन्न नजरिए से देख रहे थे। मैं हैरान हो रही थी, क्या अंदर से उतने ही शांत थे? जल्द ही उन्होंने मेरे बाएँ पैर को घुटने के नीचे से अलग कर दिया था। मेरा गला भर आया था।

स्कूलों के विदाई समारोहों में भी मैं भावुक हो जाती थी। यह मेरे अपने शरीर के हिस्से—मेरे पैर को एक अंतिम विदाई कहने का समय था। सर्जन अभी भी कार्य कर रहे थे। उन्होंने मेरी कटी हुई टाँग को एक परिचारक को दे दिया था, जिसने उसे मेरे अस्पताल के मेरे बिस्तर के नीचे साधारण तरीके से रख दिया था। मैं खुद को भाग्य के भरोसे छोड़ते हुए समय के पथ से हट गई थी। सर्जरी ने कुछ और समय लिया था। डॉक्टरों ने कहा था कि सर्जरी सफल हुई थी और मुझे मेरी बाईं टाँग पर बहुत सारी बँधी हुई पट्टियों के साथ छोड़ दिया था। मैं शारीरिक तौर पर काफी थक चुकी थी और शल्य क्रिया के तुरंत बाद आवश्यक रूप से सो गई थी।

उठने के तुरंत बाद मैंने एक कुत्ते को हमारे वार्ड में आते हुए देखा था। यह अजीब और चिंतित करनेवाला भी था कि एक कुत्ता अस्पताल में आ सकता है। परंतु इसने मुझे कुछ शांति प्रदान की थी। आगंतुक को वार्ड में किसी अन्य चीज में यथार्थ में कोई रुचि नहीं थी, जब तक कि उसने मेरे बिस्तर पर ध्यान नहीं दिया था। पाशविक अनुमान से चलते हुए कुत्ते ने वह जगह ढूँढ़ ली, जहाँ कि उसने कच्चे मांस को सूँघा था और बुरी तरह क्षतिग्रस्त मेरी टाँग को खोज लिया, जो कि मृत हालत में ठीक मेरे नीचे पड़ी थी। उसे उसके बाद किसी आमंत्रण की जरूरत नहीं थी। जैसे ही उसने पैर के टुकड़े को चाटना शुरू किया, मैं चिल्ला पड़ी। किसी ने कुत्ते का पीछा कर उसे दूर भगा दिया था। यह आसान था।

❑

परंतु आज भी यादों का पीछा करके दूर भगाना मुश्किल है।

आखिरकार साहब मेरी बड़ी बहन लक्ष्मी के साथ पहुँच गए थे। वे अपने आँसुओं को रोकने के लिए कठिन संघर्ष कर रही थी। शायद साहब ने उसे सांत्वना देने के लिए कहा, ''यदि भगवान् ने उसे जिंदा रखा है तो मेरा मानना है कि यह एक संदेश है कि उसके पास इसके लिए कुछ योजना है। चिंता मत करो, यह इतिहास रचने वाली है।''

कुछ देर बाद मेरा भाई और माँ भी पहुँच गए थे। एक या दो आँसुओं को बहाने से रोक बहादुरी से छिपाने की कोशिश करते हुए मेरे परिवार ने कठिन समय का सामना किया था। बिना कोई समय व्यर्थ करते हुए साहब ने जल्दी से मेरा स्वास्थ्य स्तर जाँचा और डॉक्टरों से पूछा कि अब आगे क्या किया जाना था? डॉक्टरों ने उन्हें बताया कि मुझे अतिशीघ्र खून की जरूरत है। वह शीघ्रता से रक्त की एक यूनिट देने के लिए व्यस्त हो गए थे। जब वह ऐसा एक बार कर चुके, तब उन्होंने अन्य रक्तदाताओं को देखना शुरू कर दिया था। क्योंकि रक्तदाताओं का मिलना आसान नहीं था। साहब ने अतिरिक्त रक्त की यूनिट न देने की चिकित्सीय सलाह को अनदेखा कर दिया था। ऐसा करने के लिए उन्होंने अपनी प्रबोधक क्षमता का उपयोग किया था।

''क्या मैं कमजोर दिखता हूँ? मेरा वजन जाँचो। मैं विश्वस्त हूँ कि मुझे कुछ भी नहीं होने वाला है। इसके अतिरिक्त, कृपया इस बात को समझें कि यह एक नेक कार्य के लिए किया जा रहा है मेरी जान को दाँव पर लगाए बिना किसी की जान बचाने हेतु।''

बहुत ही अनिच्छा से चिकित्सकगण मान गए थे। वे चिंतित हो रहे थे कि यदि इसके साथ कुछ हो गया तो उन्हें लाइन में लगाकर बाहर निकाल दिया जाएगा। साहब और चिकित्सकगण दोनों ही पक्षों के पास अपने-अपने कारण थे।

चिकित्सकगण व्यथित थे। वे एक बाद के एक रक्त की दो यूनिटों के देने की अपरंपरागत चेष्टाओं का सही मूल्यांकन नहीं कर पा रहे थे। साहब का पक्ष दमदार था। यदि उनसे दूसरी रक्त की यूनिट देने के लिए अनुमति नहीं मिली तो किसको मिलेगी? वहाँ बहुत ज्यादा विकल्प भी उपलब्ध नहीं थे। चार लोगों में से जो उपस्थित थे, उनमें राहुल भी था, जो बिलकुल अभी पहुँचा था और इधर-उधर भागने में व्यस्त था। मेरी माँ मधुमेह रोगी थी और मेरी बड़ी बहन भी ठीक नहीं थी। साहब जानते थे कि समय बहुत कठिन था। अतएव, वह एक आदर्श सैनिक जैसी चाल-ढाल में लग गए थे। यह एक विलक्षणता है, जो परिवार में चलती रहती है। हम कभी अपने नुकसानों के बारे में विचारमग्न हो समय व्यर्थ नहीं करते। जब भी किसी संकट से सामना होता है, हम इस बात पर ध्यान देते हैं कि क्या करना चाहिए, जिससे और अधिक नुकसान को रोका जा सके।

जब मैं उन्हें देखती हूँ, प्रत्यक्ष व्यथा, दर्द और सदमे के बावजूद मैं अपने अंदर ऊर्जा की एक आकस्मिक तरंग उठती महसूस करती हूँ। यद्यपि संदेह के काले बादल अभी भी छँटे नहीं थे। अपने परिवार को, खासकर अपनी माँ को, अपने नजदीक देखकर मैं अच्छा महसूस करती थी, जिसने संसार के यथार्थ का स्वयं सामना किया था और जिंदा बची थी। मैंने खुद से कहा, ''मैं एक बहादुर औरत की बेटी हूँ। मैं लड़ना बंद नहीं कर सकती हूँ। मुझे जीना होगा। मैं यह लड़ाई अपनी माँ के लिए जीतूँगी।'' इस अंत:संबद्ध के बाद मुझे लगा कि यह सुनिश्चित करना बहुत जरूरी है कि इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना को जीतने की मेरी क्षमता और मेरे संकल्प के बारे में परिवार आश्वस्त रहे।

मैंने अपना हाथ मेरी माँ के हाथ पर साथ देने और लेने दोनों के लिए रखा था। मुझे अस्पताल के बिस्तर पर इस भयानक स्थिति में देखकर परिवार टूट-सा गया था। जहाँ मुझे उनके साथ की जरूरत थी, वे मुझे ताकतवर बनाए

रखना चाहते थे। वे मुझसे ताकत ले रहे थे, जैसे मैं उनसे शक्ति ले रही थी। मैंने साहब और राहुल को एक-दूसरे से बातचीत करते देखा था। मैं उन्हें शायद ही सुन सकती थी, लेकिन मेरा अनुमान है कि वे जिसके बारे में बात कर रहे हैं—मेरा भविष्य। दोनों ने ही मुझे 'सब ठीक हो जाएगा' वाली दृष्टि से देखकर मुझे पुनः विश्वास दिलाया। उन्होंने बाद में स्वीकार किया कि जब वे बरेली अस्पताल आने के रास्ते पर थे, उन्हें आशंका थी कि मैं मर चुकी थी। मैं समझ गई थी कि उन्होंने ऐसी इच्छा क्यों की थी। मेरा परिवार मुझे हमेशा ही निडर, शरारती, ढीठ लड़की, मजाकिया, चंचल, बेचैन, चुटुकले छोड़नेवाली, मजाक करनेवाली, या वॉलीबॉल और फुटबॉल जैसे खेलों में पुरुष सहभागियों से भी मुकाबला करनेवाली के रूप में देखता था। मेरे शेष जीवन के लिए मुझे पंगु देखने के दृश्य ने उनकी रीढ़ की हड्डियों को कँपकँपा दिया था।

हालाँकि साहब ने भी भविष्यवाणी की थी कि यदि मैं इस दुर्घटना से जीवित बच गई, इसका केवल यह संकेत होगा कि भगवान् की योजना में मेरे लिए कुछ है, और शायद मुझे आगे जाकर इतिहास रचना है। इन शब्दों ने मुझे बहुत ज्यादा हौसला दिया था, यद्यपि मैं अभी भी संदिग्ध थी कि कैसे हालात आकार लेने वाले हैं! मुझे राहुल पर आकस्मिक नजर डालना याद है, जब वह भावुक हो गया था। वह मेरी बगल में ही खड़ा था आँसुओं से भरी आँखें लिये हुए, जब मैंने उसे देखा था। राहुल ने मेरी आँखों में नहीं देखा। वह ऐसे प्रतीत कर रहा था कि जैसे मेरी दुर्घटना के लिए वह जिम्मेदार है। मैं जानती थी कि यह एक अच्छा संकेत नहीं है। मैं अपने छोटे भाई को उसके निडर चरित्र के लिए जानती थी, जिसकी संरक्षित विशाल ऊर्जा उसे कई घंटों तक बिना थके लगातार काम करने में मदद करती थी।

वह मेरी माँ के लिए एक लाभदायक परिसंपत्ति था। मेरे पिता श्री हरेंद्र कुमार सिन्हा की रहस्यमयी मृत्यु और मेरे भाई रवि की हत्या के बाद, साहब से अलग, राहुल ही हमारे संगठित परिवार में केवल एकमात्र पुरुष था, जिस पर विश्वास किया जा सकता था, खासकर इस संकट की घड़ी में। यह सुनिश्चित करना आवश्यक था कि वह नकारात्मकता के कीटाणु से संक्रमित न हो। हमारे लिए खुश रहना जरूरी था ताकि हम इस संकट की घड़ी को पार कर सकें। इसके लिए हमें एक सकारात्मकता का आवरण अपनाने की जरूरत थी और यह सोचने की कि कैसे इस दुःखद स्थिति से हम बाहर आ सकते हैं, बजाय इसके कि हम इस संकट के बोझ के नीचे दब जाएँ। इसी कारण से मैंने राहुल का सामना किया, जब उसने टूटकर बिखरने के लक्षण दिखाए थे।

''एक मूर्ख की तरह व्यवहार मत करो। जाओ और चिकित्सकों से यह पता करो कि मैं कैसे पुनः चल सकती हूँ?''

इस प्यार भरी झिड़की को सुनने के बाद वह नाखुश नहीं था, अपितु इसने उसे प्रोत्साहित कर दिया था। उसकी आँखें बता रही थीं कि मेरा भाई अपनी पहले वाली अच्छी पुरानी लड़ाकी 'सोनू' को मुझमें देखकर कितना खुश था। उसके होंठों पर एक मुसकराहट आ गई थी, जब उसने मुझे भ्रातृभाव से देखा था। मैं भी मुसकरा दी थी। परिवार को हमारी मुसकराहटों से शक्ति मिल रही थी। यह उनके लिए एक प्रमाण था कि एक पैर खोने के बावजूद मेरी जीवन युद्ध लड़ने की क्षमता अभी भी जस-की-तस थी। मैंने अपनी माँ को गले लगाया और जान-बूझकर उनकी बाँहों की पकड़ में पहले की अपेक्षा ज्यादा समय के लिए रही थी।

पृष्ठभूमि में मैंने डॉक्टरों को साहब को यह कहते सुना कि उन्होंने बहुतेरे मरीज देखे हैं, पर उनमें से कोई भी मेरी तरह जोशीला और दृढ़ संकल्पित नहीं था, जितना कि मैं हूँ। मैंने चिकित्सकों को कहते सुना, ''यह एक विशेष लड़की है।''

❑

यह ओ.बी. वैनों का युग है।

एक या दो दशक पहले एक साधारण लड़की के दु:ख का पूरे देश की जागरूकता को झिंझोड़ना एक अकाल्पनिक कार्य होता। बिलकुल इसे 'ब्रेकिंग न्यूज' बनाने के लिए आपको एक अच्छी कहानी और भाग्य का साथ चाहिए होता है। सौभाग्य से मेरे पास दोनों ही थे। साहब ने वहीं बरेली जिला अस्पताल, जहाँ मैं भरती थी, के 'हिंदुस्तान' नामक स्थानीय हिंदी दैनिक अखबार के छायाचित्र पत्रकार (फोटो जर्नलस्टि) को ढूँढ़ा और उसे मेरी कहानी बताई और जान-बूझकर 'मैं एक राष्ट्रीय खिलाड़ी हूँ' का संकेत छाया चित्रकार की दिलचस्पी पाने के लिए दिया। आजकल के समय में केवल विषय-वस्तु रखना ही काफी नहीं है, आपको उसका व्यवसायीकरण करने का हुनर भी आना चाहिए। साहब एक कुशल व्यवसायीकरण कर्ता हैं। ऐसा करने के लिए वे कभी भी तथ्यों से नहीं खेलते। यह सिर्फ ऐसा है कि वे उन तथ्यों को ऐसे बंधक लुभावने तरीके से पेश कर कौतूहल उत्पन्न करने की कोशिश करते हैं। सफल हो न हो, कौन जाने? मगर अब की बार यह कोशिश सफल हो गई थी। मेरी खबर उस अखबार के बरेली संस्करण में पृष्ठ 2 पर छपी थी। साहब जानते थे कि यह खबर मात्र बरेली तक ही केंद्रित नहीं रहेगी। उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि यह खबर राष्ट्रीय बन जाएगी। 'हिंदुस्तान' अखबार के अंग्रेजी संस्करण 'हिंदुस्तान टाइम्स' ने भी यह खबर छापी थी।

यह एक शुरुआती धमाका था।

प्रभावशाली स्थानीय नेताओं का आना शुरू हो गया था। वहाँ के क्षेत्र से सुप्रिया एरोन (बरेली की महापौर एवं भाजपा की पूर्व सांसद), संतोष गंगवार (बरेली से पूर्व केंन्द्रीय मंत्री) और प्रतापी भाजपा नेत्री मेनका गांधी भी मुझसे मिलने आई थीं। उन सभी ने एक ही जैसी चीजें कहीं, सामाजिक समता व्यक्त की, मदद करने का वायदा किया और व्यवस्था को दोषी ठहराया था। साहब सही थे। मेरी कहानी बहुत से अखबारों में पृष्ठ 2 से पृष्ठ 1 पर आ गई थी। मैं अब मुख्य-समयधारा की टी.आर.पी. सामग्री बन चुकी थी। यह कारण समाचार चैनलों के लिए अस्पताल के बाहर अपनी ओ.बी. वैनों को खड़ा करने के लिए काफी था।

उत्तर प्रदेश में एक राष्ट्रीय वॉलीबॉल खिलाड़ी को चेन झपटमारों से झगड़े के दौरान चलती ट्रेन से नीचे फेंकने की कहानी, जहाँ सबकुछ निरपवाद रूप से राजनीति से जुड़ा हुआ था और सारे आरोपों का ढेर सत्ताधारी पार्टी के मत्थे लगता था, अवश्य ही यह टी.आर.पी. अर्जित करनेवाली निशाना थी। इस घटनाक्रम के समय उत्तर प्रदेश में एक महिला मुख्यमंत्री के होने का साफ मतलब था कि मैं टेलीविजन स्क्रीन पर तब तक बनी रहूँगी, जब तक ऐसी ही अन्य बहुत बड़ी और तमाशबीन खबर नहीं आती। साहब के रूप में समाचार चैनलों को एक सम्मोहक और निडर सुवक्ता मिल गया था। सभी चैनल हृदयस्पर्शी दृश्य तथा दिलचस्प वीडियो फुटेज दिखा रहे थे। अस्पताल के बिस्तर पर पड़े हुए मेरे दृश्य काफी हृदयस्पर्शी थे और साहब की बातें रोचक अंशों के साथ परिपूर्ण थीं। उन्होंने सुनिश्चित किया था कि मैं अपनी अनिच्छा को ढकते हुए कैमरे के साथ उपस्थित मीडिया से यह पूछूँ कि ''क्या राष्ट्रीय खिलाड़ियों की यही नियति है?'' मैंने यह भी कहा कि ''यह समय है, जब सरकारों को अपनी निद्रा से जागकर ट्रेनों में और बाहर औरतों की सुरक्षा के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए।''

जल्द ही देश में हर कोई दुर्घटना के बारे में, जो कुछ भी जानना जरूरी था, जानता था। चैनलों ने कई बार मेरी कहानी दिखाई थी, जो मेरे बोलों और साहब के आरोपों के बाद पूरी होती थी। ताजा खबर यानी ब्रेकिंग न्यूज तेजी से फैल गई थी। एक चैनल द्वारा प्रसारित करने के बाद अन्यों ने भी इस पर झपट्टा मारा। उनमें से कुछ ने तो सजीव कार्यक्रम (लाइव शो) बरेली जिला अस्पताल, जहाँ मैं भरती थी, के बाहर से करना शुरू कर दिया था। मुझे

थोड़ी खुशी महसूस हुई थी। मुझे टी.वी. के जत्थों के साथ सहज होने में कुछ समय लगा था, जो कि मुझे सारे कोणों से दिखाने के लिए अनवरत चौबीसों घंटे काम कर रहे थे। मुझे याद है कि मेरे बयान के कुछ अंश दर्ज करने उनमें से कुछ मेरे पास देर रात गए भी आए थे। मैं उनकी आवश्यकता भी समझ सकती थी। एक तूफान खड़ा करने के बाद वे भी शायद लाचार थे, क्योंकि मेरी कहानी एक राष्ट्रीय चिल्लाहट बन चुकी थी।

जैसे ही मेरी कहानी बताती हुई अस्पताल के बिस्तर से मेरे सजीव चित्र (लाइव इमेजिज) लोगों की बैठकों (ड्राईग रूमों) में पहुँचने शुरू हुए, जनता की जिज्ञासा और मुद्दे को बढ़ाते हुए न्यूज चैनलों ने कवरेज बढ़ा दी थी। जल्द ही मेरी निजता में दखलअंदाजी होने लग गई थी। परंतु मैं यह भी जानती थी कि मीडिया के लोग, जिन्होंने सारे देश से आकर बरेली में डेरा डालना शुरू कर दिया था, यह सुनिश्चित करने के लिए 24×7 की नौकरी कर रहे थे कि कोई विवरण न छूटने पाए। उनमें से बहुत लोग बहुत सारे लाइव शो, फीड्स और फोन-इन कर रहे थे। वे घंटों तक भूखे रह रहे थे। एक मीडिया तूफान में फँसने के बाद मैं हैरान हो रही थी, यह मुझे कहाँ ले जाएगा? शुक्र है कि मेरी आक्रामक बमबारी वाली टी.वी. कवरेज सकारात्मक थी। मुझे बेहतर इलाज मिलना आरंभ हो गया था, कुछ बड़े डॉक्टरों के दौरे के साथ मुझे व्यक्तिगत देखभाल मिलने लग गई थी।

चैनल रिपोर्टरों ने हमें बताया था कि प्रधानमंत्री चीन की यात्रा पर थे, जहाँ उनसे मेरी घटना के बारे में पूछताछ की गई थी। खबर के अनुसार, प्रधानमंत्री अपने रेल मंत्री के साथ इस मुद्दे के लिए संपर्क में थे और कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी को भी मेरे प्रकरण के बारे में सूचित किया गया था। राजनीतिक गतिविधियों का एक घटनाक्रम थोड़े समय बाद ही होना था। उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव फरवरी 2012 में होने थे। सभी बड़ी राजनीतिक पार्टियों के राजनेता वहाँ अपने आपको आम आदमी को उपलब्ध कराने में लगे थे, ताकि ऐसा न हो कि उन्हें एक संभ्रांतवादी की उपाधि दे दी जाए। एक ऐसी छवि, जिससे सभी राजनेता बचना चाहते थे, विशेषतया एक कठिन चुनाव के समय में।

अतएव, जिस किसी ने भी मेरी कहानी के बारे में सुना, मुझे देखने आया या अपने प्रतिनिधियों को भेजा। बड़े अधिकारियों को मुझे देखने के लिए जाने को कहा गया था। मुझे साहब के द्वारा तड़के 2:30 बजे उठाया जाना याद है, जिन्होंने मुझे सूचित किया था कि रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष अपने वरिष्ठ अधिकारियों के साथ मेरा बयान दर्ज करवाने आ रहे थे। अपनी आधिकारिक औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद ऊँचे दर्जे के प्रतिनिधि मंडल ने मुझे इस असमय पर उठाने का कारण बताया था।

''यह मुद्दा कल सुबह की रेल कार्यसूची में दर्ज होना था। रेल मंत्री ममता बेनर्जी पश्चिम बंगाल से इस बैठक की अध्यक्षता करने जल्दी से आ रही हैं।'' एक अधिकारी ने विवरण बताया। उसने कहा, ''रेलमंत्री ने इसे सबसे ऊपर की प्रधानता प्रदान की है। उन्होंने पश्चिम बंगाल के विधानसभा चुनावों के लिए अपने चुनावी अभियान को छोटा कर इस बैठक की अध्यक्षता करने का निर्णय लिया था, जिसमें वह शायद तुम्हारे लिए कुछ जरूरी घोषणाएँ कर सकती हैं।''

अगले दिन राज्य महिला आयोग की एक सदस्य ने मुझसे मिलकर मुझे 1 लाख का ड्राफ्ट उत्तर प्रदेश सरकार की तरफ से दिया और वायदा किया कि इलाज का सारा खर्च राज्य में तत्कालीन बहुजन समाज पार्टी की सरकार की तरफ से उठाया जाएगा। उत्तर प्रदेश के परिवहन मंत्री रामअचल राजभर ने 51,000 रुपए बरेली के सहायक क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी के द्वारा भेजे, जिन्होंने मंत्री के न आ सकने के लिए माफी भी माँगी थी, क्योंकि वह दूर थे और अधिकारी ने वादा किया कि राजभर जी पहली फुरसत में जल्द ही आएँगे।

उसी दिन समाजवादी पार्टी के राज्याध्यक्ष अखिलेश यादव, जिन्होंने प्रचार अभियान की शुरुआत की थी, भी

मुझसे मिलने आए थे।

''तुम बहुत बहादुर रही हो। हमें तुम पर गर्व है। मुझे बताओ, यदि मैं तुम्हारे लिए कुछ कर सकूँ?'', उन्होंने पूछा।

एक संक्षिप्त ठहराव के बाद जब मैं खुद को उन्हें कहने के लिए एकत्रित कर रही थी, उन्होंने कहा, ''मैं तुम्हें तुरंत पार्टी फंड में से 1 लाख रुपए दे रहा हूँ। कृपया मुझे बताओ, यदि तुम्हें किसी और चीज की आवश्यकता हो।''

मैं सचमुच नहीं जानती कि कैसे, पर मैंने विकलांगों के लिए एक खेल अकादमी की स्थापना के लिए उनके सहयोग की माँग की। शायद यह एक दैवी हस्तक्षेप था। एक प्रधान परियोजना बिना किसी औपचारिक परिचर्चा के प्रकट हो गई थी। अखिलेश यादव ने वादा किया कि यदि उनकी पार्टी उत्तर प्रदेश में अपनी सरकार बनाएगी तो वह मदद करेंगे, ''हम अन्य राजनेताओं की तरह अपने वायदे को भूलेंगे नहीं।'' उन्होंने अपने होंठों पर एक मुसकराहट के साथ कहा था।

एक युवा राजनेता की निरस्त्र कर देनेवाली मुसकराहट और ईमानदार वार्त्तालाप से हर्षित होते हुए मैंने जोर से कहा, ''भैया, मुझे लगता है कि आप अगले मुख्यमंत्री बनने जा रहे हो।''

वे शब्द भविष्यसूचक साबित हुए थे लेकिन मुझे साहब के द्वारा बिना सोचे बोलने के लिए सावधान किया जाना याद था। उस समय तक के लिए, यद्यपि अभी तक सभी ने उम्मीद की थी कि यदि समाजवादी पार्टी अच्छा करेगी तो अखिलेश के पिता मुलायम सिंह यादव को अगला मुख्यमंत्री बनने के लिए अनुमान लगाया जा रहा था। जब हम बच्चे थे, मेरी माँ कहा करती थी कि कुछ खास समय भगवती सरस्वती, जिन्हें ज्ञान और अध्ययन देनेवाली माना जाता है, एक व्यक्ति की जिह्वा पर ठहरने आती हैं। उस समय के दौरान जो कुछ भी वह कहता है, सत्य हो जाता है। मैंने जो एक उमंग में कह दिया था, वह बाद में सच हो गया था। मुलायम सिंह यादव ने अपने प्रत्यक्ष वारिस और पुत्र अखिलेश के पक्ष में अपना दावा त्याग दिया था, जिसने प्रतिभाशाली ढंग से चुनावी अभियान के दौरान अपने पिता का भार बाँट लिया था। वह कनिष्ठ यादव थे, जो युवाओं से जुड़े हुए थे, जिन्होंने समाजवादियों के पक्ष में निर्णायक मतदान किया था। अखिलेश यादव के राज्य का मुख्यमंत्री बनने के बाद एक पहाड़ जैसे अद्भुत कार्य के लिए 25 लाख रुपए के एक चेक के अतिरिक्त उन्होंने मेरा स्वागत किया, जिसके बारे में थोड़ी देर के बाद इस पुस्तक में चर्चा करूँगी। उन्होंने मुझे अतिरिक्त 1 लाख रुपए मेरे निजी खर्चों के लिए भी दिया था, जिसे मैं स्वीकार करने के लिए प्रतिकूल थी। परंतु दयालु मुख्यमंत्री ने मुझे इसे स्वीकार करने के लिए हठ किया था। उनकी भाव भंगिमा ने मेरे दिल को छू लिया था। राजनेताओं को चुनाव से पहले बड़े वायदों को करने के लिए जाना जाता है, परंतु कदाचित् ही बाद में वह उन वायदों को पूरा करने के लिए कोई कदम उठाते हैं। अखिलेश यादव उत्तर प्रदेश के राजनीतिक परिदृश्य पर हवा के ताजे झोंके की तरह आए थे।

''क्या?'' मुझे मेरे कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। मुझे बरेली अस्पताल के डॉक्टरों ने जो इंजेक्शन लिखकर दिया था, वह 25,000 रुपए का आने वाला था। यह हमारे जैसे एक परिवार के लिए एक बहुत सारा धन था। डॉक्टरों ने कहा था कि गैंगरीन से बचने के लिए यह इंजेक्शन लेना बहुत जरूरी था, जो कि शरीर के ऊतकों की मृत्यु के द्वारा जीवन के लिए संभवत: खतरनाक अवस्था थी। परंतु यह इंजेक्शन बरेली में भी नहीं मिलता था। निश्चय ही इसे कांस्य की कारीगरी के लिए मशहूर मुरादाबाद से प्राप्त किया जाना था, जो कि बरेली से कुछ ही घंटे की दूरी पर स्थित है। साहब जानते थे कि यदि उन्हें खुद उसे लाने के लिए जाना पड़ा तो इसका मतलब होगा कि मुझे मेरी बीमार बहन के साथ अकेले रहना होगा। इसलिए उन्होंने एक स्थानीय दवा विक्रेता से संपर्क कर उसे इंजेक्शन लाने हेतु मनाया था। दवा विक्रेता परोपकारिता से प्रभावित नहीं हुआ था। वह इंजेक्शन लाने के लिए

केवल तभी माना था, जब उससे वादा किया गया कि उसे उसके प्रयासों के लिए कुछ अधिक धन प्राप्त होगा।

साहब ने जब बरेली के लिए प्रस्थान किया था, उनके बैंक खाते में 65,000 रुपए थे, जिनमें से कुछ बरेली के लिए टैक्सी किराए पर लेने में खर्च हो गए थे और अब एक भारी राशि इंजेक्शन को प्राप्त करने में जा रही थी। मेरी माँ और भाई के पहुँचने के बाद भी हमारी आर्थिक अवस्था क्रमशः खराब रहने लगी थी। मेरी खबर से चकित-क्षुब्ध होने के बाद बिना धन की व्यवस्था किए वे पहली उपलब्ध ट्रेन की साधारण श्रेणी में यात्रा कर आ गए थे। उनपर भी आरोप नहीं लगाया जा सकता था।

एक लड़की का अपनी माँ के साथ रिश्ता हमेशा से ही खास होता है। एक पुरुष बच्चे से भिन्न, जिसका माँ के साथ बंधन उसकी जवानी तक ही बढ़ता है और शादी एवं काम के दबाव के कारण लड़के के झुक जाने से डूब जाता है। एक लड़की का उसकी माँ के साथ रिश्ता उपजता है और समय के साथ मजबूत बनता जाता है। यद्यपि लड़कियाँ पति और बच्चों के साथ ही बहुत व्यस्त हो जाती हैं, फिर भी वे प्रेम और सामाजिक मदद के लिए अपनी माँ के संपर्क में बनी रहती हैं। एक माँ, जिसकी बेटी एक नौकरी के साक्षात्कार के लिए एक बड़े शहर जाने के लिए निकली हो और रेलवे ट्रैक के पास मृतप्राय मिली हो, वह अति शीघ्रता से अपनी बेटी के पास स्वाभाविक रूप से पहुँचेगी ही। यही कारण था कि जब वो मेरे भाई के साथ पहुँची तो वह सिर्फ 3,000 रुपए ही लाई थी। यह स्पष्टतः पर्याप्त नहीं होने वाले थे।

सामान्यतः प्लास्टिक धन अभी भी शहरी भारत की ही संवृत्ति थी। ग्रामीण क्षेत्रों को भी तेजी से ए.टी.एम. मशीनें मिल रही थीं परंतु आज भी ग्रामीण लोग अधिकतर नकदी को एक कार्ड से अधिक वरीयता देते हैं। इसलिए हम यहाँ पर थे, सब झुंड बनाकर एकत्र मेरे अस्पताल के कमरे में थे, संदेह से ग्रस्त तथा चकित हो रहे थे कि भविष्य की कोख में क्या पड़ा हुआ है—एक ताजा सुअवसर या मुसीबतों का पहाड़? हम में से कोई भी नहीं बोल रहा था, फिर भी हम खामोशी से बातचीत कर रहे थे हमारी आँसुओं से भरी आँखें ही ज्यादा बात कर रही थीं। हमें राजनेताओं से कुछ मदद मिली थी परंतु हम जानते थे कि यह पर्याप्त नहीं होगी। यह साफ था कि मुझे महँगे इलाज की जरूरत थी। पर्याप्त नकदी जुटाना पहली चुनौती थी, जो यह सुनिश्चित करेगी कि मेरा इलाज प्रभावित नहीं होगा। मगर एक बड़ी और तात्कालिक चुनौती थोड़ी सी नींद था। हमारी पलकें नींद से भारी हो गई थीं। जब शरीर के अंग ऐसे संकेत भेजने आरंभ कर दें, तब हमारे पास उनको सुनने के अलावा कोई चारा नहीं बचता है। हमने अपनी आँखें बंद कर ली थीं हममें से प्रत्येक हमारी कठिनाइयों को दूर करने में अक्षम था।

उसी रात हमें एक अनूठा आगंतुक मिला था। उन्होंने खुद का परिचय कानपुर के नजदीक उन्नाव के निवासी 60 वर्षीय उमाशंकर दीक्षित के रूप में कराया था। दीक्षितजी 21,000 रुपए की वित्तीय सहायता के साथ आए थे। रोशनी इतनी कम थी कि हम उनका चेहरा मुश्किल से देख पा रहे थे और न ही उनके द्वारा मेरे उपचार के लिए प्रदत्त धन को गिन सकते थे।

''कृपया लड़की के लिए कुछ दवाइयाँ ले लीजिएगा।'' उन्होंने कहा। उन्होंने कहा कि इस त्रासदी के बारे में मीडिया के द्वारा पता चला था और वह खुद को 400 किलोमीटर अपनी जीप चलाकर यहाँ आने से नहीं रोक सके।

''मेरी बेटी ने मुझे यहाँ भेजा है।'' एक लंबी यात्रा करने के लिए बाध्यकारी कारण के बारे में जानने के लिए किए गए हमारे प्रश्नों के जवाब में उन्होंने बताया।

हमें धन की आवश्यकता थी। वास्तव में, हमें ऐसे बहुत से व्यक्तियों की आवश्यकता थी। मेरे परिवार ने ही दीक्षितजी से निवेदन किया कि वह मीडिया के सामने सहायता राशि दें, ताकि अधिक लोग मदद प्रदान कर सकें।

दीक्षितजी ने यह कहते हुए मना किया कि वह गुमनाम रहना चाहेंगे। लेकिन उन्होंने मुझे एक प्रस्ताव दिया था —''मैंने सुना है कि तुम विकलांगों के लिए एक खेल अकादमी स्थापित करने की इच्छा रखती हो? मेरी कामना है कि तुम्हें ऐसा ही करना चाहिए। ठीक होने और निर्णय लेने के बाद तुम उन्नाव के पास इसकी व्यवस्था कर सकती हो तो कृपया मुझे बताना। मैं तुम्हें तुम्हारी इस श्रेष्ठ परियोजना के लिए मुफ्त ईंटें प्रदान करूँगा।'' उन्होंने कहा।

रात में जाने से पहले उन्होंने अपना मोबाइल नंबर और शुभकामनाएँ हमें दीं।

बरेली जिला अस्पताल के डॉक्टर और अन्य कर्मचारियों ने अपनी यथाश्रेष्ठ चेष्टा की थी। लेकिन अब यादवजी और अन्य अस्पताल कर्मियों, जिन्होंने मेरी अच्छी देखभाल की थी, को अलविदा कहने और जाने का समय आ गया था। मुझे अब विशेष प्रकार के उपचार की आवश्यकता थी। और अखिलेश यादव, समाजवादी पार्टी के नेता, ने लखनऊ के ट्रॉमा सेंटर को एक अच्छा विकल्प बताया था। हम वहाँ जाने के लिए अभीष्ट थे।

मेरा बरेली में अढ़ाई दिन का निवास पूर्णतया घटनाओं से भरा हुआ था। मैं बरेली अस्पताल में एक सामान्य पीड़ित की तरह दाखिल हुई थी, लेकिन अब, 24×7 मीडिया के आभार से पूरा देश मेरे पीछे चल रहा था और मुझे अपनी शुभकामनाएँ भेज रहा था। 14 अप्रैल को जब मैं लखनऊ की तरफ एक एंबुलेंस में जा रही थी, मीडिया की वैनें मेरे पीछे-पीछे आ रही थीं। समय-समय पर मैं दर्द से चिल्ला रही थी, क्योंकि प्रत्येक झटके से मेरे टाँकों से खून रिस रहा था, जो कि अभी भी कच्चे थे। मेरा परिवार लगातार एंबुलेंस चालक को धीरे चलाने के लिए कह रहा था, परंतु वह भी उन रास्तों पर असहाय था। चार घंटों की दर्द भरी यात्रा के बाद, जिसके दौरान मेरे बहुत से टाँके टूटकर खुल गए थे, हम अंततः लखनऊ के ट्रॉमा सेंटर पहुँच गए थे। मुझे साधारण वार्ड में दाखिल करवाया गया था।

मुझे औपचारिक उपचार ही लगातार मिलता रहता, यदि मीडिया टीमों ने ट्रॉमा सेंटर के बाहर एकत्र होना आरंभ न किया होता! जैसे ही टीवी चैनल और ओबी वैन अस्पताल के बाहर एक रेखा में खड़े हुए, कुछ ने मेरे यहाँ मेरे पहुँचने की खबर दिखानी शुरू की किंग जॉर्ज मेडिकल यूनिवर्सिटी (के.जी.एम.यू.) के प्रशासन ने शीघ्रता से मीडिया को परिसर में आने से रोक दिया था।

के.जी.एम.यू. के प्रशासकों ने स्पष्ट किया कि मीडिया को रोगियों के हित में ही निषेध किया गया है। कोई भी इस पर बहस नहीं कर सकता था कि रोगियों को पूर्ण निजता और शांति की आवश्यकता होती है। मीडिया का प्रवेश और फलस्वरूप घटित होनेवाली अव्यवस्था से वे परेशान हो सकते थे। परंतु क्या ऐसा एक कदम लेने के लिए यही असली कारण था? मेरा अनुमान है कि बहुत से सरकारी अस्पतालों में हालात आदर्श से बहुत दूर होते हैं। वहाँ हर वस्तु की कमी होती है और न्यूज चैनलों के कैमरे साधारणतया कुछ भी रिकॉर्ड करने से नहीं छोड़ते। कुछ समय के बाद मीडिया के दबाव के कारण मुझे वी.वी.आई.पी. (अति-अति महत्त्वपूर्ण व्यक्ति) वार्ड में ले जाया गया था। हमें बाद में मालूम हुआ, यह वार्ड बहुधा बड़े राजनेताओं, नौकरशाहों और अन्य प्रभावी लोगों के लिए ही आरक्षित होता है।

जबकि साधारण वार्ड में हालात चौंकानेवाले थे, इसके विपरीत वी.वी.आई.पी. वार्ड के हालात अध्ययन योग्य थे। साफ-सुथरे बिस्तर, चकाचक कमरों, पूर्णतया साफ और चमकते शौचालयों तथा एक मनमोहक मुसकराहट के साथ सेवा को तत्पर एक नेक कर्मचारी जैसी व्यवस्थाओं के साथ यह मुझे बहुत अव्वल दरजे का एक होटल प्रतीत होता था।

निषेध के बावजूद मीडिया लोगों को मुझसे जुड़ी हर जानकारी प्रदान कर रहा था। प्रेस की निर्दय बमबारी जैसी पत्रकारिता के कारण, दोनों, अति महत्त्वपूर्ण और साधारण व्यक्तियों ने मुझसे मिलने आना शुरू कर दिया था। उनमें

नेता, नौकरशाह, समाज सेवी, व्यक्ति, भवन-निर्माता, अभियंता, खिलाड़ी और सर्वव्यापी आम जन शामिल थे।

तत्कालीन बहुजन समाजवादी पार्टी की सरकार ने अपने बहुत से मंत्रियों, जैसे कि अयोध्या पाल और रामअचल राजभर को मुझसे मिलने तथा सहयोग का प्रस्ताव और सांत्वना देने के लिए भेजा था। राजभर के सहयोगियों ने मुझसे बरेली जिला अस्पताल में भी मुलाकात कर धन से सहायता की थी। सी.आई.एस.एफ. का एक उप-कमांडर अपने एक समूह को अस्पताल लेकर आया था। उन सबने मेरे निमित्त रक्तदान किया था। बहुत सी गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यकर्ता और समाज-सेवी भी पहुँचे थे। उनमें से बहुतों ने धन की सहायता देने की पेशकश की थी। उदाहरण के लिए, टी.पी. हवेलिया—एक समाज-सेवी और खेल समर्थक—ने 5,100 दिए थे।

पिछले कुछ दिनों में मेरी प्रसिद्धि उल्लेखनीय ढंग से बढ़ गई थी। और मीडिया की मुझमें लगातार बनी रही रुचि ने सुनिश्चित किया था कि के.जी.एम.यू. प्रशासन सारा समय अपने टखनों पर खड़ा सावधान बना रहा था। हर समय कोई-न-कोई वी.आई.पी. मुझसे मिलना आता था और उनमें से बहुत से डॉक्टरों और कर्मचारियों को मेरी ठीक से देखभाल करने के लिए कह जाते थे। जबकि वी.आई.पी. मुझे अपनी वाक् सेवा, सांत्वना और कुछ नकदी पेश करते थे वहीं के.जी.एम.यू. के प्रशासकों को मेरे विशेष स्तर के बारे में सही समय पर यह याद दिलाया जाता था कि मेरे उपचार के स्तर में कोई कमी नहीं आनी चाहिए।

अभी तक अस्पताल में सर्जनों ने मेरी बाएँ पैर पर दूसरी सर्जरी कर दी थी। अभी उनका सारा ध्यान मेरे बाएँ पैर पर ही था। मेरे दायाँ पैर अभी तक छुआ नहीं गया था। के.जी.एम.यू. के डॉक्टर आशान्वित थे कि मेरे ऑपरेशन और एक कृत्रिम अंग लगाने के बाद मैं एक सामान्य जिंदगी जीने में सक्षम होऊँगी। सामान्यत: सरकारी अस्पताल मरीजों से भरे हुए होते हैं और इसलिए प्राय: डॉक्टर उनसे एक ऐसे तरीके से व्यवहार करते हैं, जिसे बहुत से लोग निंदनीय पाते हैं। परंतु मैं अनुभव के साथ कहती हूँ कि यदि आप कुछ संपर्क निकाल पाएँ, तब सरकारी डॉक्टर, जो रोग निदान उपलब्ध कराते हैं, उसका स्तर अतुलनीय बना रहता है। वह ऐसे, क्योंकि एक अवधि के बाद, मरीजों की काफी मात्रा में जाँच करने के बाद डॉक्टर अपने-अपने रोग निदान को सिद्ध कर लेते हैं। इसी दौरान, बहुत से आगंतुक लगातार आते रहते थे।

अब तक, जिस समय मुझे मीडिया जन द्वारा बरेली में बताया गया था कि मेरे प्रकरण ने इस देश के सबसे शक्तिशाली व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित किया था, मुझे वास्तव में नहीं पता था कि दिल्ली में क्या चल रहा है, जब तक उत्तर प्रदेश कांग्रेस की तत्कालीन अध्यक्षा रीता बहुगुणा जोशी मुझसे मिलने नहीं आईं। उन्होंने मुझे बताया कि कांग्रेस अध्यक्षा सोनिया गांधी और प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के निर्देशों की पालना करते हुए केंद्रीय खेलमंत्री अजय माकन यहाँ जल्द ही आएँगे। वे मंत्रीजी कुछ ही घंटों के बाद पहुँचे थे।

वे अपने साथ दिल्ली प्रसिद्ध अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) के डॉक्टरों की एक टीम भी साथ लाए थे। उन्होंने धैर्यपूर्वक मुझे और मेरे परिवार द्वारा बताए गए घटनाक्रम को सुना, जिसने मुझे यहाँ तक पहुँचाया। मेरी चिकित्सा स्थिति की जाँच हुई और डॉक्टरों से पूछा कि उपचार में कितना समय लगेगा। कुछ समय बाद वह जाने के लिए उठे।

''यदि आप सहमत हों तो हम आपके उपचार का प्रबंध एम्स में कर सकते हैं। अभी बताने की ऐसी कोई अत्यावश्यकता नहीं है। तुम इस पर सोचने के लिए समय ले सकती हो।'' उन्होंने जाते हुए कहा।

लेकिन अभी मेरा इलाज पूरा होने से बहुत दूर था। मुझे कई महीनों के लिए दीर्घकालीन उपचार की जरूरत थी। माकन तब तक वार्ड से जा चुके थे। असल में, वे अपने राजनीतिक कार्यकर्ताओं, पुलिस और मीडिया के लोगों के साथ अस्पताल के बाहर जाने के रास्ते पर थे।

हम एक उलझन में थे। के.जी.एम.यू. प्रशासन काफी उत्तम देखभाल प्रदान कर रहा था। वहाँ असंतोष प्रकट करने का कोई कारण नहीं था। लखनऊ में हमारे पास एक लाभ था, क्योंकि हमारे बहुत से दोस्त और रिश्तेदार या तो राज्य की राजधानी में या उसके आस-पास थे। हमारी आर्थिक स्थिति अभी भी काफी दयनीय थी। यही कारण था कि इलाज के लिए दिल्ली चलने के प्रस्ताव पर परिवार दो विचारों में बँटा हुआ था, जहाँ हम किसी को नहीं जानते थे।

यदि प्रसिद्ध हिंदी समाचार-पत्र 'दैनिक जागरण' की एक महिला पत्रकार ने हमें सही समय पर महत्त्वपूर्ण सलाह नहीं दी होती तो हम दिल्ली जाने के मुद्दे पर लगातार अंतहीन बहस किए जाते।

''अभी लोहा गरम है, अतएव, तुम्हें दिल्ली जाने के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना चाहिए। लखनऊ के किसी भी अस्पताल से एम्स बहुत अच्छा है। सबसे ऊपर, तुम नहीं जानते कि क्या हो सकता है, जब मीडिया इस प्रकरण में कम रुचि लेने लगेगा? और तुम जानती हो कि मीडिया भी निरंतर दबाव नहीं बना रख सकता है।'' उसने मेरे परिवार से कहा, ''अभी सारा देश तुम्हारे साथ है। कृपया अरुणिमा के भविष्य के साथ मत खेलो।''

साहब, जो पत्रकार से बात कर रहे थे, वे भी उसकी सलाह से प्रभावित थे। मेरे परिवार ने एक झुंड बनाया और एक शीघ्र पड़ताल के बाद हम तैयार थे। मेरे परिवार ने सभी बड़े फैसलों की तरह इस फैसले को भी बहुत जल्दी मात्र 30 सेकंड में कर लिया था। माकन दिल्ली का प्रस्ताव देने के बाद अपनी लालबत्ती वाली गाड़ी के पास पहुँच गए थे। जैसे ही एक कर्मचारी ने उनके अंदर जाने के लिए गाड़ी का पीछे का दरवाजा खोला, साहब मंत्रीजी के पास दौड़ते हुए गए और जोर से ऊँची आवाज में चिल्लाते हुए बोले, ''सर...सर!'' जिज्ञासु माकन पीछे मुड़े और साहब ने लगभग साँस रोककर कहा, ''सर, हम तैयार हैं...दिल्ली जाने के लिए।''

मंत्रीजी ने उनके अनुरोध पर सकारात्मक प्रतिक्रिया दी थी—''बहुत अच्छा, मैं आपके लिए सारे प्रबंध कर दूँगा। अब, जल्दी जाकर तैयार हो जाओ।''

उनके शीतल आचरण और दक्षता, जिसके साथ वो नियुक्त कार्य को पूर्ण करते थे, ने मेरे परिवार में प्रत्येक व्यक्ति को मुग्ध कर दिया था। माकन ने उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी की मुखिया को अस्पताल से मेरे बाहर निकलने का प्रबंध करने के लिए सूचित किया और गृह सचिव को मुझे हवाई मार्ग से दिल्ली ले जाने के लिए एक एयर एंबुलेंस की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु फोन करने में व्यस्त हो गए थे। अगले 60 मिनटों में मुझे के.जी.एम.यू. के बिस्तर से उठाकर एयरपोर्ट ले जाने के लिए एक एंबुलेंस में ले जाया जा रहा था और वहाँ से एक एयर एंबुलेंस से मुझे दिल्ली हवाई मार्ग से ले जाया जाएगा। मुझे अस्पताल से एयरपोर्ट तक एक जूलूस में ले जाया गया था, जिसमें जिला न्यायाधीश, उच्च पुलिस अधिकारी और मीडिया की वैनें थीं।

लखनऊ में अस्पताल से लेकर एयरपोर्ट तक का सारा रास्ता खाली और साफ था। मेरा परिवार मुझे इस सबके बारे में बता रहा था और यद्यपि मैं एंबुलेंस में शक्तिहीन लेटी थी, फिर भी मैं अच्छा महसूस कर रही थी। मैंने खबरों में देखा था कि कैसे ख्यातिप्राप्त व्यक्तियों, जैसे फिल्म अभिनेताओं और खिलाड़ियों का एयरपोर्ट पर स्वागत किया जाता है और भीड़ अपने पसंदीदा अभिनेताओं या खिलाड़ियों की एक झलक पाने को कैसे धक्का-मुक्की करती है। दिल्ली एयरपोर्ट पर जैसे ही मुझे स्ट्रेचर पर एयर एंबुलेंस से बाहर लाया गया था, कुछ हजार लोग मेरा स्वागत करने हेतु वहाँ उपस्थित थे। यह मेरे लिए एक बहुत बड़ी बात थी।

लखनऊ से दिल्ली मेरा स्थानांतरण प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्षा के हस्तक्षेप के बाद हुआ। यह एक बड़ी ब्रेकिंग न्यूज (ताजा खबर) थी। मुझे बाद में अहसास हुआ, मीडिया और टेलीविजन प्रसारण-कक्ष के लिए आनेवाले बहुत से लोगों के लिए भी। मेरा लखनऊ से दिल्ली आने का एक राजनीतिक संदर्भ भी था। जिस समय

उत्तर प्रदेश बहुजन समाज पार्टी के शासन में था, कांग्रेस के नेतृत्ववाली सरकार केंद्र में शासन कर रही थी। उत्तर प्रदेश विधानसभा के चुनाव तय होने के बाद से मेरी दुर्घटना को राजनीति से जोड़ दिया गया था। मैं अपने स्थानांतरण की राजनीतिक जटिलताओं के बारे में लापरवाह थी। कुछ मित्रों और परिवार ने बाद में दावा किया था कि उत्तर प्रदेश के अधिकारियों ने मेरे दिल्ली के फैसले के विरोध में यह कहते हुए सुझाव दिया था कि मुझे लखनऊ में ही सबसे अच्छा उपचार मिल जाएगा।

यह सचमुच सत्य था कि लखनऊ में ट्रॉमा सेंटर के वी.आई.पी. वार्ड में सुविधाएँ बहुत अच्छी थीं। वहाँ से दिल्ली स्थानांतरित होने की कोई स्पष्ट आवश्यकता नहीं थी। लेकिन महिला पत्रकार, जो मेरी कहानी एक हिंदी दैनिक के लिए लिखने आई थी, की सलाह भी बुद्धिमत्ता भरी थी। अतएव, हमने दिल्ली को चुना था। हालाँकि हमारा फैसला किसी भी राजनीतिक प्रेरणा से उत्प्रेरित नहीं था। हमें थोड़ा भी अंदाजा नहीं था कि हम बहुत जल्दी एक विवाद में फँस जाएँगे। मेरे चरित्र एवं व्यवहार पर प्रश्न किए जाएँगे और मेरा परिवार लक्षित किया जाएगा, मेरे बारे में और मेरे चारों ओर की प्रत्येक चीज को परोक्ष रूप से गलत वजह से निशाने पर लिया गया था।

परंतु उस क्षण मुझे इस बात का बिलकुल भी अंदेशा नहीं था कि टी.वी. कैमरों, माइक एवं फ्लैशों के मध्य, जब मेरे सजीव चित्रों को लेने में व्यस्त पत्रकारों के जमघट के आगे से होते हुए मुझे एक एंबुलेंस द्वारा एम्स ले जाया जा रहा था। यदि हमें अंदेशा होता भी तो वहाँ हम इस बारे में कुछ भी नहीं कर सकते थे। मेरी एंबुलेंस एम्स पहुँच चुकी थी और श्री अजय माकन वहाँ हमारा स्वागत व मार्गदर्शन करने के लिए स्थानीय नेताओं के साथ थे। प्राय: सभी लोग जो वहाँ पर हाजिर होते थे, वे माकन को अच्छे से जानते थे, जिनमें से दो अचल संपत्तियों (रियल एस्टेट) से जुड़े प्रभावी नेता रमेश सिक्का और धर्मवीर भारती थे।

हमें बाद में पता लगा कि वे दोनों वहाँ माकन के निर्देश पर आए थे। दोनों ही अत्यधिक विनम्र थे। जल्द ही यह साफ हो गया था कि क्यों माकन ने, जब हम एम्स पहुँचे तो, उन्हें उपस्थित रहने के लिए कहा था। उन्हें दिल्ली में रहने के दौरान हमारी देखभाल के लिए कहा गया था—एक काम, जो उन्होंने संपूर्णता से किया था। वे दिल्ली में हमारे स्थानीय संपर्क और मानव संसाधन बन गए थे। जब तक मैं एम्स में थी, मेरा परिवार उनके अतिथि गृह में रुके थे, जहाँ उन्हें अति विशिष्ट व्यक्तियों (वी.आई.पी.) की सुविधाएँ प्राप्त हुई थीं।

और भी अधिक विचित्र तथ्य यह था कि एक बार भी किसी को अतिथि गृह में ऐसा नहीं लगा, जैसे कि वे में मुफ्त में हमारी मेजबानी, वह भी लंबे समय तक कर हम पर एक अहसान कर रहे हैं। जब कभी मुझे अस्पताल का भोजन अरुचिकर लगता, वे मेरे पास घर का बना हुआ यथोचित खाना भिजवाते थे। यहाँ तक कि जब एम्स प्रशासन ने साहब और मेरे छोटे भाई राहुल को चेतावनी दी थी कि यदि वे स्नान करके कपड़े बदलकर नहीं आए तो उन्हें अस्पताल में आने से रोक दिया जाएगा। तब उन्होंने साहब और राहुल के लिए कपड़ों का एक नया जोड़ा भी व्यवस्थित करवा दिया था। साहब ने दस दिनों से अपने कपड़े नहीं बदले थे और एम्स कर्मचारियों के कहने के बाद ही वह इसके लिए सहमत हुए थे। मेरा निकटतम परिवार मेरी देखभाल में इतना व्यस्त था कि किसी के पास यह सोचने का भी समय नहीं था कि उसने क्या कपड़े पहन रखे हैं या किसी ने अपने दाँत साफ भी किए हैं! साहब ने बाद में मुझे बताया कि उन्होंने अपने दाँत दस दिन के बाद साफ किए थे।

माकन और अन्य लोग, जिन पर उन्होंने मेरी देखभाल सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी सौंपी थी, के कारण हमें दिल्ली में किसी वास्तविक समस्या का सामना नहीं करना पड़ा था। केंद्रीय मंत्री विपत्ति में पड़े एक परिवार की मन:स्थिति जानते थे और उनसे बात करते हुए हमेशा विनम्र रहते थे। मुझे राष्ट्रमंडल (कॉमनवेल्थ) खेलों के वार्ड में रखा गया था, जिसे दिल्ली में आयोजित हुए राष्ट्रमंडल खेलों के लिए बनाया गया था। यह नवीनतम तकनीकी से

परिपूर्ण एक अत्याधुनिक वार्ड था। यदि लखनऊ में ट्रॉमा सेंटर का वी.आई.पी. वार्ड एक होटल की तरह दिखता था तो दिल्ली में यह वार्ड एक पाँच सितारा होटल था। चकाचक वार्ड, त्रुटिहीन तरीके से कपड़े पहने वार्ड के सेवकगण, मनभावन मुसकराहट बिखेरती साफ-सुथरी नर्सें—सभी एक रमणीय आश्चर्य थे। एक शांतिदायक सुगंध हवा में तैर रही थी।

यदि पूरे देश को ऐसे अस्पताल प्राप्त हों तो मरीजों की रोग निवृत्ति दर यकीनन काफी तेजी से बढ़ जाएगी। मैं जानती थी कि एक ऐसे राज्य में यह आशा रखना बहुत ज्यादा है, जहाँ मातृ एवं शिशु मृत्यु दर पूरे देश में उच्चतम हो। दुर्भाग्यवश, ऐसे अस्पताल बहुत कम हैं। बहुत से भारतीयों के लिए वार्ड, जिसमें मैं भरती थी, एक स्वप्न ही बने रह जाते हैं। मेरे जैसे निम्न-मध्यम वर्गीय भारतीयों के लिए इन जैसे वार्डों में एक दिन ठहरने और इलाज का खर्चा भी हमारी एक साल की कमाई के बराबर होता है। पूरा परिवार मेरे लिए सर्वश्रेष्ठ उपचार चाहता था, परंतु जानता था कि यदि वे अपनी समस्त चल-अचल संपत्ति भी बेच दें तो वो मेरे इलाज पर व्यय हुई धनराशि के आधे के बराबर भी धन नहीं एकत्रित कर पाएँगे।

शुक्र है कि अजय माकन ने इस पहलू की देखभाल कर ली थी। उन्होंने एम्स निदेशक को सूचित किया था कि केंद्र सरकार मेरे इलाज का सारा खर्च उठाएगी। माकन ने निदेशक को एक मूल्यांकन बनाने तथा इसे शीघ्रातिशीघ्र उन्हें प्रस्तुत करने को कहा। हम यह सुनकर अत्यंत ही चिंता-मुक्त थे कि मंत्रीजी ने एम्स प्राधिकरण को बताया था कि मेरा उपचार पूर्णतया नि:शुल्क होगा। समर्पित डॉक्टरों की एक टीम ने मेरा इलाज शुरू कर दिया था। वहाँ पर रात-दिन नर्सें और वार्ड बॉयज भी उपलब्ध थे। किसी भी आपात स्थिति में सुविधा के लिए मुझे एम्स के कई वरिष्ठ कर्मचारियों के निजी फोन नंबर भी दिए गए थे। मेरे एम्स में ठहराव के दौरान आगंतुकों का एक स्थायी प्रवाह निरंतर बना रहता था।

कुछ आगंतुकों, जिनसे मैं मिली थी, ने मुझ पर जोर डाला कि मैं उनके द्वारा मेरे उपचार के लिए एकत्रित किया हुआ धन स्वीकार करूँ। स्पष्टत: वे अनजान थे कि मेरे उपचार में सारा धन केंद्र सरकार के द्वारा लगाया जा रहा था। हमने विनम्रतापूर्वक सारी वित्तीय सहायताओं को मना कर दिया था। हमारी पुनरावर्ती प्रार्थनाओं के बावजूद उन्होंने जोर डाला कि हम उनका योगदान स्वीकार करें। ''यदि आपके इलाज के लिए नहीं तो कृपया इसे खेल अकादमी, जो तुम्हारे मन में है, के लिए हमारे समर्थन के उपलक्ष्य में रख लें।'' उन्होंने कहा था।

मैं उनके मुझमें और जो कुछ मैंने कहा था, उसमें रुचि के स्तर पर आश्चर्यचकित हो रही थी।

तुरंत ही एम्स प्रशासन ने मेरी स्थिति पर दैनिक चिकित्सकीय विज्ञप्ति जारी करना शुरू कर दिया था। मुझे बताया गया था कि युवा लोग, ऑटो चालक, रेहड़ीवालों ने मेरे लिए समर्थन जुटाने और मेरे आरोग्य लाभ की प्रार्थना के लिए मोमबत्ती जुलूस (कैंडल मार्च)निकाल रहे थे। क्या वे मुझसे संबंधित थे? क्या वे मुझसे किसी प्रकार का सांसारिक संपर्क था? वे सभी गरीबी रेखा से नीचे की श्रेणी से संबंधित थे। एक ऑटो चालक या एक सड़क किनारे रेहड़ी लगानेवाला अपने समय को बरबाद नहीं कर सकता। उनके लिए समय ही धन है। तो भी वे एक पूर्ण अजनबी के लिए समर्थन जुटाने के आंदोलन में अग्र स्थान पर थे। इस सबने मुझे एक भावानात्मक संतुष्टि दी थी। मेरे उपचार में एम्स प्रशासन द्वारा प्रयुक्त सर्वश्रेष्ठ आधुनिकतम उपकरण एवं तकनीक के साथ आम आदमी के ऐसे स्वार्थहीन भाव काफी आश्वस्त करने वाले थे।

शनै:-शनै: मैं उपचार के प्रति अनुकूल होने लग गई थी।

एक दिन असामान्य कपड़े पहने हुए, जवाहरातों के भार से सजी हुई, असाधारण तरीके से उसके बाल एक विशाल गुच्छे में बँधे हुए थे, महँगी अँगूठियाँ और भारी मेकअप धारण किए हुए एक महिला ने मेरे वार्ड में प्रवेश

किया था। ''नमस्ते! मैं शहनाज हुसैन हूँ।'' उन्होंने अपनी बड़ी आँखों को फड़फड़ाते हुए खुद का परिचय करवाया, जिन पर उन्होंने काजल की एक घनी परत लगा रखी थी।

उनके सहयोगी उनके बालों पर अनवरत काम करते होंगे और साथ ही सुनिश्चित करते होंगे कि जवाहरात पोशाक पर उचित रीति से स्थिर रहें। वे जोश और सकारात्मकता बहाती थीं, अच्छी खुशबू से परिपूर्ण थीं और बड़ी चीजें करने की अपनी वरीयता निर्दिष्ट करती थीं। कुछ समय के बाद उन्होंने मुझे वह कारण बताया, जो उन्हें मुझ तक लेकर आया था।

''मैं तुम्हारे पास एक प्रस्ताव लेकर आई हूँ। यदि तुम चाहती हो तो हम तुम्हें यहीं अस्पताल में एक ब्यूटीशियन की तरह प्रशिक्षण दे सकते हैं। मेरे अंतरराष्ट्रीय डिप्लोमा से सुसज्जित होने के साथ, तुम जाकर शहनाज हुसैन की एक अधिकृत शाखा फ्रैंचाईजी स्थापित कर सकती हो। तुम्हारे ठीक होने के बाद यह तुम्हें अपने पैरों पर खड़े होने में तुम्हारी मदद करेगा।'' उसने कहा।

शहनाज हुसैन फैशन और सौंदर्य की दुनिया में एक बड़ा नाम था। उनके सौंदर्य प्रसाधन के उत्पाद सर्वत्र उपलब्ध थे। हम सब सहमत थे कि हुसैन से एक अंतरराष्ट्रीय डिप्लोमा निस्संदेह रूप से लाभदायक होगा। परंतु एम्स प्रशासन एक मरीज का उसी के अस्पताल के बिस्तर पर सौंदर्य सलाहें सीखने पर सहमत नहीं था। उन्होंने शहनाज हुसैन की प्रार्थना को ठुकरा दिया था।

सौंदर्य प्रसाधिका, जो कानों में सामान्यत: बड़ी बालियाँ पहनती थीं, बड़े व्यक्तियों को भी जानती थी। उन्होंने तार खींचे और थोड़ी देर के बाद एम्स प्रशासन को मुझे अति विशिष्ट राष्ट्रमंडल खेल वार्ड में प्रशिक्षित करने देने में कामयाब हो गई थीं। यद्यपि शहनाज यह सब मेरी मदद करने के लिए कर रही थीं, मैं खुद यह सोचने में मदद नहीं कर पा रही थी कि इस देश में कैसे कुछ के लिए शासन तंत्र को मोड़ना या नियमों को तोड़ना कितना आसान है! मैंने शहनाज द्वारा व्यवस्थित एक प्राध्यापक और एक निजी शिक्षक से सौंदर्य सलाह सीखनी शुरू कर दी थी। मेरी बड़ी बहन ने भी सौंदर्य तकनीक सीखने का फैसला किया था और इसलिए हम दोनों को प्रशिक्षण दिया गया कि कैसे कामयाब और पेशेवर सौंदर्य प्रसाधिकाएँ बनते हैं।

हमने पुतलों पर अभ्यास किया था। मुझे एम्स से छुट्टी मिलती, तब तक मैं एक प्रमाणित डिप्लोमाधारक बन गई थी और एक शाखा (फ्रैंचाइजी) स्थापित करने के लिए अधिकृत थी। अपनी बहन के साथ मैंने अस्पताल में ही सौंदर्य प्रशिक्षण प्रतियोगिता उत्तीर्ण कर ली थी। इस प्रशिक्षण ने मेरा ध्यान मेरे दर्द से हटाने में और मेरे भविष्य के बारे में चिंताओं को दूर करने में मेरी मदद की थी। इसी बीच सर्जनों ने अथक रूप से मेरे पैरों पर यह निश्चित करने के लिए काम किया कि मैं पुन: चल पाने की अपनी क्षमता पर, भले ही एक कृत्रिम बाएँ पैर से, पक्का विश्वास प्राप्त कर लूँ। मीडिया के लिए चिकित्सकीय विज्ञप्तियाँ जारी की जा रही थीं, जो मेरा और मेरे द्वारा एम्स में की जा रही प्रगति का लगातार पीछा कर रही थी।

जैसे कि मैंने सोचा था कि हालात बेहतर हो रहे थे, मीडिया में मेरी आलोचना भी दिखाई देने लगी थी। बिना किसी स्पष्टीकरण के राजकीय रेलवे पुलिस (जी.आर.पी.), बरेली ने घटनाक्रम पर प्रश्न उठाने शुरू कर दिए थे, जिसमें मेरे पैर की हानि हुई थी। बहुमूल्य उपचार, जो मुझे मिलना आरंभ हुआ था और देश भर में मुझे जिस तरह की प्रतिक्रिया प्राप्त हुई थी, स्पष्टतया कुछ पहचानों के साथ अच्छी तरह से नहीं चला था। ये वे थे, जिन्होंने जी.आर.पी. को संपूर्ण प्रसंग को एक नया मोड़ देने में मदद की थी। उन्होंने जी.आर.पी. को मुझ पर आरोप लगाते हुए गुमनाम पत्र भेजे थे कि मेरा अतीत संदिग्ध है। निरंकुशता से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के आरोप थे और सभी समाचार-पत्रों में छिड़के हुए थे। जी.आर.पी. को भेजे गए पत्रों में झूठ के पुलिंदे निहित थे। बिना टिकट की यात्रा से

लेकर एक संबंध रखने, आत्महत्या करने का प्रयत्न करने, साहब को मुझे ट्रेन से धक्का देने, पायदान पर गैर-कानूनी रूप से यात्रा करने, जिससे मैं एक झटके से गिर गई थी, कहीं और हमला किए जाने तथा लाइनों पर फेंक दिए जाने तथा एक राष्ट्रीय खिलाड़ी नहीं होने तक के आरोप लगाए गए थे। वही मीडिया, जिसने मेरे पीछे खड़े हो मेरा समर्थन किया था, उसका प्रयोग मेरे विरुद्ध विद्वेषपूर्ण, बुरे आरोप व झूठ फैलाए जा रहे थे। प्रतिदिन मेरे विरुद्ध नित नए आरोप लगाए जा रहे थे। एकाएक मुझे एक मौकापरस्त लड़की की तरह चित्रित किया जाने लगा, जो धन और सहानुभूति इकट्ठा करने के लिए बाहर थी। समाचार-पत्रों और टी.वी. चैनल मुझे आसान सी खूबी पानेवाली लड़की चिह्नित कर रहे थे और मेरे पारिवारिक सदस्यों को विविध प्रकार से हत्यारा और बलात्कारी भी वर्णित कर रहे थे।

जी.आर.पी. अपनी खाल बचाना चाहती थी क्योंकि एक निष्पक्ष जाँच में वे जकड़ जाएँगे। चूँकि ट्रेनों पर सुरक्षा जी.आर.पी. का काम था और मेरी घटना ने उसे कठघरे में खड़ा कर दिया था, रेलवे पुलिस अधिकारी मुझे गलत साबित करने निकले थे। उन्होंने सुनिश्चित किया था कि मीडिया में सारा दोषानुसंधान अच्छी तरह से चलना चाहिए था। यह अंदाजा लगाना अधिक मुश्किल नहीं था कि वे लोग कौन थे और क्यों उन्होंने ऐसा किया था। इसका कोई महत्त्व नहीं है कि कैसे कोई अक्लमंद दिखने की कोशिश करता है, लेकिन बिना किसी चेतावनी के आप पर फेंकी गई आलोचनाओं की झड़ी आपको उद्विग्न कर छोड़ती है। किसी के भी चरित्र पर ऐसे अकारण आक्रमणों से सँभलने के लिए उसको समय चाहिए होता है। आप कैसे प्रतिकार करेंगे, यदि अचानक ही बिना किसी कारण के कोई जिससे आप कभी न मिले हों या कदाचित् ही जिससे आपने बातचीत की हो, आपके कार्यालय पहुँचा हो और आपका बकाया उधार खत्म करने के लिए रुखाई से कहा हो? आपकी आरंभिक प्रतिक्रिया चकित होने और अविश्वास करने की होगी क्या ऐसा नहीं होगा?

यहाँ तक कि जब तक आप सँभलेंगे, एक प्रामाणिक बचाव करना आसान नहीं होगा। यह इसलिए, क्योंकि कोई भी एक घृणित आरोप का बचाव देने में एकदम सक्षम नहीं हो जाता है, कम-से-कम तत्काल तो नहीं। कोई भी गुस्से में हिंसक हो जाएगा या असंयमित भाषा का प्रयोग करेगा लेकिन इससे आपको एक ऐसे व्यक्ति के रूप में चिह्नित किया जा सकता है, जो अप्रिय तथ्यों के सामने आने पर आक्रमणकारी भी बन सकता है। यह सब न सिर्फ अनुशासनहीनता होगी, बल्कि एक झूठ या धोखा भी होगा। इसके अलावा, वहाँ एक मजबूत मौका होगा कि आपके सहकर्मचारीगण भी आप पर शक करने लगेंगे। इसलिए मुझे इन सब दोषारोपण से बहुत कष्ट पहुँचा था और मैंने उम्मीद खोनी शुरू कर दी थी। शायद यह वही था, जो कि साजिशकर्ताओं का मकसद था। मेरा आत्मविश्वास तोड़ना ही शायद उनका पहला लक्ष्य था। वे सफल भी हो गए होते, यदि मेरे परिवार ने आरोपों का सबूतों के साथ प्रतिकार करना आरंभ नहीं कर दिया होता।

''अरे, ऐसी चीजें होती रहती हैं। अपना मन मत तोड़ो। ऐसी चालें इस बात का प्रमाण हैं कि हम सही रास्ते पर हैं।'' मेरे परिवार ने कहा था।

मेरे परिवार ने आरोपों का जवाब सबूतों के साथ देना शुरू कर दिया था। यद्यपि मैंने अपना प्रमाण-पत्रोंवाला प्लास्टिक बैग और मोबाइल दुर्घटना में खो दिया था, वह टिकट, जो मैंने लखनऊ रेलवे स्टेशन पर आरक्षण खिड़की पर मौजूद पगड़ीधारी सिख से खरीदा था, अभी भी मेरे बैग में था। आगामी रेलवे जाँच ने इस आरोप का खोखलापन उजागर कर दिया था कि मैं साधारण डिब्बे में पायदान पर बैठकर यात्रा कर रही थी और नीचे गिर गई थी। यदि साहब ने मुझे सचमुच धक्का दिया होता तो उनके लिए टैक्सी किराए पर लेकर लखनऊ से बरेली आना असंभव होता। उनका लखनऊ से टैक्सी किराए पर लेने का समय दर्ज था। यह जी.आर.पी. बरेली का बेतुका

आरोप था कि साहब ने जैसे ही मुझे बरेली के पास ट्रेन के बाहर धक्का दिया, उसी समय उन्होंने राज्य की राजधानी में जी.आर.पी. प्री-पैड टैक्सी बूथ से लखनऊ-बरेली की टैक्सी किराए पर ले ली थी। एक बार पुन: हम मीडिया पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए निर्भर थे। जैसे ही मीडिया ने हमारे जवाब और खंडन प्रसारित करने शुरू किए, विरोधी खेमा, जिसमें कुछ उत्तर प्रदेश सरकार के वरिष्ठ अधिकारी और जान-पहचानवाले भी थे, पीछे हटने लगे थे।

उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी कि मैं उनके हमले से सँभलकर एक जवाबी हमला चालू कर दूँगी। मेरा परिवार मजबूती से मेरे पीछे खड़ा था। ऐसा ही केंद्रीय मंत्री अजय माकन और वे लोग भी मेरे साथ थे, जिन पर मेरी देखभाल की जिम्मेदारी सौंपी गई थी।

जब कोई संकटकाल में अपने परिवार से साथ की उम्मीद करता है, वैसा ही श्री माकन और उनके लोगों का व्यवहार था, जो कि बहुत सुखदायक था। उनके लिए यह कहकर मेरा त्याग करना बहुत आसान होता कि अब मैं अविश्वसनीय थी। परंतु उन्होंने मुझे काफी करीब से देखा था। मेरी दृढ राय थी कि यद्यपि आप कुछ भेंटों में एक व्यक्ति के बारे में सबकुछ नहीं जान जाते, तो भी कुछ सावधानी से आपको समझ में आ जाता है कि एक व्यक्ति किस तरह का है। एक व्यक्ति, जिसके पास छुपाने को कुछ नहीं है, निश्चित रूप से एक खास प्रकार की बेगुनाही उत्सर्जित करता है, जो कि तुरंत ही पसंद आ जाती है।

शायद मंत्री और उनके लोगों, जो दुनिया के तौर-तरीके जानते थे, ने अनुभव किया था कि मेरी कहानी एक विश्वसनीय थी, जिसे सहानुभूति जीतने के लिए नहीं बनाया गया था; जैसे कि कुछ कहानियाँ मात्र दिल में जगह बनाने के लिए फर्जी तथ्यों से बनाई जाती हैं। एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने आरोप लगाया था कि मेरा परिवार और मैं एक स्वयं थोपी हुई दुर्घटना का प्रचार कर सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिश कर रहे थे। टी.वी. एंकरों ने साहब से मेरे विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर प्रतिक्रिया माँगी थी। चूँकि आरोप एक वरिष्ठ आई.पी.एस. अधिकारी द्वारा लगाया गया था, इसका प्रभावशाली ढंग से विरोध दर्ज करना आवश्यक था।

साहब की प्रतिक्रिया एकदम सही और सटीक थी। उन्होंने उनसे कहा, ''श्रीमानजी, यदि आपको लगता है कि अरुणिमा अपनी दुर्घटना का व्यवसायीकरण कर सहानुभूति अर्जित करने की कोशिश कर रही है तो मैं आपको सलाह दूँगा कि आप भी अपना पैर कटवाकर ऐसा करने लग जाएँ। आप सुसंबद्ध हैं। मीडिया आपके पास आएगी और तब आपको बहुत सारे लाभ मिलेंगे; क्योंकि आपकी कहानी बहुत दूर तक और व्यापक तौर पर फैलेगी।''

जवाब अवश्य ही चिढ़ाने वाला था। आश्चर्यजनक नहीं था कि आई.पी.एस. अधिकारी ने जल्द ही टी.वी. बहस को बीच में ही यह कहकर छोड़ दिया था कि हम असभ्य हैं। यह बहुत संतोषजनक था। नियमित रूप से मेरे एक पैर खोने पर मुझे लक्षित किया जा रहा था। इस तथ्य पर सभी प्रश्नचिह्न लगा रहे थे कि मुझे एक चलती ट्रेन से चेन छीननेवालों द्वारा फेंका गया था।

इसके अलावा, बेहूदा आरोपों और भयानक अभियोगों का पात्र होने के बावजूद हम अभी भी सामान्यत: व्यवहार किए जाने की उम्मीद रखते थे। गरीब होने का मतलब सिर्फ भूखे पेट नहीं होता है। इसका मतलब अपने ऊपर जबरदस्ती घिनौने इल्जामों, विचित्र आरोपों, अपनी ओर तनी हुई भौहों और उठी हुई अंगुलियों के साथ जबरदस्ती जीना होता है। मैं अपनी बहुत ऊँची आवाजों के साथ चिल्लाना चाहती थी, 'भगवान् की खातिर कृपया राजनीति करना बंद करो। मैंने अपना पैर खोया है। यह नुकसान असल है। मैं किसी भी जाँच का सामना करने के लिए तैयार हूँ, जो मेरे द्वारा वर्णित घटनाक्रम को सही ठहराने में सहायता प्रदान करेगी।'' ठीक उसी समय मैं उन व्यक्तियों को दंड दिलवाना चाहती थी, जिन्होंने मेरी कहानी पर शक किया था और मुझ पर आक्षेप लगाए थे। मैं उनसे

चाहती थी कि वे गलत साबित होने पर खुद के लिए दंड निर्धारित करें।

मैं आलोचना तो समझ सकती हूँ, लेकिन जान-बूझकर मुझे बदनाम करने, नीचे झुकाने और मुझ पर सवाल उठाने की एक कोशिश को नहीं समझ सकती; क्योंकि मेरे सच ने कुछ खास लोगों को ठेस पहुँचाई थी। उसी समय के आस-पास आदर्श महरोत्रा नामक वकील के द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ पीठ में एक जनहित याचिका (पी.आई.एल.) दायर की गई थी। न्यायालय ने मामले को सुनने के बाद रेलवे को मुझे 5 लाख रुपए की एक आर्थिक क्षतिपूर्ति देने के लिए निर्देश दिया था। रेलवे ने भी एक वरिष्ठ वकील नियुक्त किया था। परंतु उसके मेरे विरुद्ध तर्क उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिए गए थे। हर दिन ने नई उमंग और ताजा चुनौतियाँ प्रदान की थीं। प्रतिदिन मैं कुछ नया सीख रही थी। तिथि-पत्र (कैलेंडर) के पन्ने तेजी से लगातार पलट रहे थे। हम नियमित तौर पर वी.वी.आई.पी. वार्ड में जो हमें अखबार मिलते थे, उनके द्वारा जो कुछ दुनिया में घटित हो रहा था, उससे खुद को अवगत करा रहे थे।

एक सुबह साहब ने मुझसे अचानक पूछा, ''एवरेस्ट चढ़ोगी?'' उन्होंने अभी एक दिलचस्प जानकारी का अंश अखबार में पढ़ा था। यद्यपि बहुत से एवरेस्ट की चढ़ाई चढ़ चुके थे, पर किसी भी विकलांग महिला ने अभी तक ऐसा नहीं किया था।

मैं खुश नहीं हुई थी—''मैंने अपना पैर खोया है और आप एवरेस्ट पर्वत की बात कर रहे हो।'

साहब ने मुसकराते हुए कहा, ''शुद्धरूपेण यही कारण है कि मैं एवरेस्ट की बात कर रहा हूँ।''

अब तक मैं भी वही देखने लगी थी, जो कुछ साहब कहना चाह रहे थे। यदि मैं एवरेस्ट पर एक दाँव लगा सफल होती हूँ तो मैं ऐसा करनेवाली विश्व प्रथम विकलांग महिला बन जाऊँगी। अवश्य ही यह एक दुष्कर कार्य था। वार्ड में भी मैं अपने परिवार के सहयोग के बिना नहीं चल सकती थी। एवरेस्ट को जीतने के बारे में सोचना दूर का स्वप्न प्रतीत होता था। साहब ने जोर डाला कि यदि मैं सहमत होकर विश्वास रखती हूँ तो मैं इतिहास बना सकती हूँ। यह वह पल था, जब मैंने अपने विरुद्ध लगाए गए बेबुनियाद आरोपों को याद किया था।

यह इल्जाम कि मैं एक राष्ट्रीय खिलाड़ी नहीं थी, अभी भी ठेस पहुँचा रहा था। एवरेस्ट विजय कर समझ लो, मैं कर सकी तो—मेरे आलोचकों को जवाब देने का यह एक आदर्श तरीका होगा। साहब के कैमरे पर इल्जामों का विरोध करने और जी.आर.पी. अधिकारियों को एक लाइव बहस में चुनौती देने के बाद से भारतीय खेल प्राधिकरण (एस.ए.आई.) के प्रबंधकों ने स्वीकार करना शुरू कर दिया था कि मैं सचमुच में राष्ट्रीय खिलाड़ी थी। मगर हमारे आश्चर्य के लिए उन्होंने यह तथ्य एक संशोधन के साथ स्वीकार किया था कि 'जबकि मैं एक राष्ट्रीय खिलाड़ी थी, यह स्थिति मुझे उसी विभाग द्वारा प्रदान की जाएगी, जिसे अंततः मुझे एक नौकरी देनी होगी।' वहाँ मेरे पास बहुतेरे प्रमाण-पत्र थे, यह साबित करने के लिए कि मैं एक राष्ट्रीय खिलाड़ी थी। परंतु जब एक व्यक्ति आशंका से ग्रसित हो जाता है, तब कुछ भी काम करता प्रतीत नहीं होता है। समय-समय पर मैं अपने आपको निम्न महसूस करती थी।

यह उस समय तक जारी रहा, जब तक एवरेस्ट पर्वत का सुझाव आया था। मैंने साहब को यह चुनौती स्वीकार करने की सम्मति इन शब्दों में व्यक्त कर दी थी, ''ठीक है हम करेंगे।'' अब मेरे पास आगे देखने के लिए कुछ था —एक लक्ष्य, एक उद्देश्य, स्वप्न देखने का एक कारण। यह बहुत आसान नहीं होने वाला था। परंतु, मेरी जिंदगी में आदि से अंत तक कुछ भी आसान नहीं रहा था। जबकि मैं सिर्फ चारदीवारियों पर ही चढ़ी थी, पहली बार मैं खुद को एक पर्वत के विपरीत परखने की योजना बना रही थी। कोई विकलांग महिला पहले सफल नहीं हुई थी। यह एक चुनौती और एक अवसर, दोनों थी। एक गिलास हमेशा ही या तो आधा भरा या आधा खाली होता है।

आपके जीवन का दृष्टिकोण निर्धारित करता है कि आप इसे कैसे देखते हैं! मेरे लिए, और वास्तव में मेरे परिवार के लिए—चाहे कुछ भी हुआ हो, गिलास हमेशा ही आधा भरा होता है। हमारी कोशिश हमेशा यह होती थी कि कैसे गिलास को पूरी तरह भरा जाए। हमें हमेशा उम्मीद के साथ जीना चाहिए।

मुझे लग रहा था कि मैंने पुन: जन्म लिया है।

मैं अब जल्दी ही ठीक होना चाहती थी। वास्तव में, मैं उस दिन का व्याकुलता से इंतजार कर रही थी, जब मुझे मेरा कृत्रिम अंग मिलेगा। आखिरकार जब वह दिन आ गया था तो मैं अत्यधिक प्रसन्न थी। मैं स्वयं नाचती हुई महसूस कर रही थी। इसके अलावा, कृत्रिम पैर बिलकुल मेरे असली पैर की तरह लग रहा था। वास्तव में, मैं कठिनाई से अंतर अनुभव कर पा रही थी। मेरे लिए यह जिंदगी के नए पट्टे के जैसा था। मनो-मस्तिष्क में मैंने पहले से ही खुद को एवरेस्ट के अनुकूल बनाने के लिए सख्त बनाना आरंभ कर दिया था। मैं बहुत खुश थी कि जब मेरे प्रशिक्षकों, जिन्हें मुझे कृत्रिम पैर की आदत पड़ने तक मदद करने के लिए भेजा गया था, ने घोषित किया कि मेरे प्रशिक्षण सत्र आरंभ ही होने वाले हैं। उन्होंने मुझे प्रशिक्षण देना शुरू किया कि कैसे बाहरी पैर को अनुकूलित करना है, कैसे चलना है और मुझे क्या एहतियात बरतनी है। दिन का सत्र समाप्त करने के बाद मेरे प्रशिक्षक कृत्रिम पैर को मेरे बिस्तर के बगल में छोड़ जाते थे। अगली सुबह मैं इसे एक नए प्रशिक्षण सत्र के लिए पुन: पहनती थी।

मैं इस नए अजनबी अंग के साथ प्यार में पड़ने लग गई थी, जिसके साथ मुझे अब पूरी जिंदगी बितानी थी। लेकिन अब मैं अकेले ही चलने की कोशिश करना चाहती थी। मैं ऐसे लोगों से चारों तरफ से घिरी पड़ी थी, जो प्रत्येक क्षण जब मैं बिस्तर छोड़कर चलने की कोशिश के दौरान लड़खड़ाने लगूँ, तो मुझे बचाने के लिए मदद का हाथ तुरंत ही आगे बढ़ा देंगे। रात को मैं अकसर खुद को बेचैन और डाँवाँडोल महसूस कर बिस्तर पर करवटें लिया करती थी। मैं अपने अंदर की खलबली किसी से भी साझा नहीं कर सकती थी। मैं यह भी जानती थी कि मेरे अलावा और कोई भी मेरी व्यथा को समझ नहीं सकता। मुझे बहुत पीड़ा का सामना करना पड़ा, साजिशों से लड़ना पड़ा, निजी ईर्ष्याओं से बची रही थी कि अब मैं सचमुच में कुछ बड़ा करना चाहती थी।

प्रशिक्षण सत्र मुश्किल से ही पर्याप्त थे। मैंने अपनी नजरें एवरेस्ट पर गड़ा दी थी और मुझे उसके लिए खुद को पर्याप्त रूप में तैयार करना था। मुझे कुछ करना था। एक रात जब मेरे आस-पास सब सो रहे थे, मैंने खुद अपने आप चलने का संकट मोल लिया था। मैं जानती थी कि मैं नीचे गिरना नहीं सह सकती थी। चलने का प्रयास करते हुए यदि मैं गिर गई और खुद को घायल कर लिया तो यह मेरे एवरेस्ट चढ़ने के सपने का अंत हो जाएगा। मैंने एक छोटी प्रार्थना की और अपने हाथ बिस्तर के किनारे पर टिकाए। सतर्कता से अपना दायाँ पैर जमीन पर रखा था। धरती का स्पर्श अजीब था। मैंने तुरंत ही निर्धारित किया कि मैं दीवार से दीवार चलूँगी। इस तरह से मैं गिरने का संकट लिये बिना चल पाऊँगी। हुर्रे! मैं चल पा रही थी...अपने दम पर चल पा रही थी...कोई भी मेरे आस-पास नहीं था। मुझे लगा जैसे कि मैं हवा में उड़ रही थी। मैं बहुत खुश थी। बिना मेरे ध्यान दिए बहुत सी आँखों के जोड़े मेरी गतिविधि दर्ज करने में व्यस्त थे। मुझे ध्यान नहीं था कि वार्ड में हर ओर सी.सी. टी.वी. कैमरे लगे हुए थे।

रेलवे स्टेशन पर लगे सी.सी. टी.वी. कैमरों की तरह नहीं, जो ज्यादातर काम नहीं करते। यहाँ पर हर कैमरा अच्छे से काम कर रहा था। अगली सुबह डॉक्टरों के एक दल, जिसमें एम्स के निदेशक भी थे, ने मुझे अकेले चलने के विरुद्ध सलाह दी थी। उन्होंने मुझे अकेले चलने के जोखिम और खतरे के बारे में चेतावनी दी थी। उन्होंने रात को कृत्रिम पैर को भी हटा दिया था, ताकि मैं उनके आदेशों की अवहेलना न कर सकूँ। परंतु अकेले चलने ने मेरे विश्वास को पंख लगा दिए थे। मेरे मुँह को खून लग चुका था। चेतावनी दिए जाने के बावजूद मैं पुन: चलने के

लिए मरी जा रही थी, वह भी अकेले? अगले दिन मैंने एम्स के निदेशक और उनकी टीम से बात की थी। मैंने उन्हें बताया मैं खुद से चलने के लिए अपने आपको काफी स्वस्थ समझती हूँ और एक संक्षिप्त प्रदर्शन दिखाया था कि मैं वास्तव में अकेले चलने के दौरान भी सुरक्षित व अत्यधिक विश्वस्त थी।

उन्होंने कहा कि लोगों को एक कृत्रिम अंग का अभ्यस्त होने में तकरीबन एक साल लग जाता है। परंतु मैंने उन्हें बताया था कि दूसरे रोगियों, जो ठीक होने में अपना समय लेते थे, से विपरीत मेरे पास पूरा करने के लिए एक ध्येय था। मैंने वास्तव में प्रकट नहीं किया था कि मैंने किस पर आँखें गड़ा रखी थीं; क्योंकि मैं जानती थी कि मेरे इरादे सुनने के बाद वे मुझे मानसिक रूप से अस्थिर समझेंगे। बिना पूर्ण सत्य उद्घाटित किए मैं अपने इरादों के साथ डटी रही थी। मैं काफी विश्वसनीय दिखाई दे रही थी। चिकित्सकों के चेहरे की आकृति यह तथ्य बता रही थी कि वे काफी कठिनाई से यकीन कर पा रहे थे कि मात्र कुछ दिनों के प्रशिक्षण के बाद कोई एक बाहरी पैर के साथ सहज रूप से चल पा रहा था। अनिच्छा से, एक शीघ्र विचार-विमर्श के बाद, उन्होंने 'हाँ' में सिर हिलाया था। मुझे बहुत ज्यादा जोखिम उठाने के खिलाफ चेतावनी दी गई थी। मुझे अकेले मगर निगरानी में चलने की आज्ञा दी गई थी। मैं मान गई थी। जितना अधिक मैं चलती थी, उतनी ही विश्वस्त होती जा रही थी। वस्तुत: मैं मुक्त महसूस करती थी।

जुलाई में, अस्पताल में मुझे पहिएदार कुरसी पर लाने के चार महीनों के बाद अंतत: मुझे अस्पताल के बंधन से छुटकारा मिल रहा था। मैंने इस विख्यात अस्पताल में ज्यादातर समय मुख्यतया शल्य प्रक्रियाओं और शल्य क्रिया के बाद की देखभाल के दौर से गुजरने में बिताए थे। मुझे चलने को सिर्फ मेरे एम्स में ठहराव के अंत में ही मिला था प्रशिक्षण अवधि मात्र कुछ ही दिनों चली थी। एम्स के चिकित्सकगण यह पता कर भौंचक्के रह गए थे कि मैं एक कृत्रिम अंग के साथ कुछ दिनों में ही चलना सीख गई थी जबकि बहुतों को एक साल या इससे भी ज्यादा का समय लग जाता है। उनके विस्मय ने कदाचित् असंभव कार्यों को पूरा करने की मेरी क्षमता में मेरे विश्वास को बढ़ा दिया था।

जैसे ही मैं अस्पताल से बाहर निकली थी, मैंने मीडिया और चिर-परिचित कैमरों को देखा था। मीडिया मेरे परिवार की तरह बन गया था। मैंने मुसकराकर उनकी तरफ हाथ हिलाया था। उन्होंने भी उसी हाव-भाव में इशारा कर मेरे शीघ्र स्वस्थ होने की कामना की थी। हो सकता था कि वे मुझे कवर करने की पेशेवर मान्यताओं से चालित हों, फिर भी मेरे परिवार के बाद वे ही थे, जिन्होंने मेरे साथ ज्यादा वक्त बिताया था।

मुश्किल से ही ऐसा दिन बीतता होगा, जब मुझसे एक सूचनांश नहीं लिया जाता होगा, क्योंकि मैं उनसे रोजाना मिलती थी। उनके चेहरे बदल रहे थे, जैसे शहर बदल रहे थे—बरेली से दिल्ली, लखनऊ होते हुए—फिर भी मेरे लिए एक बड़े संयुक्त परिवार की तरह थे वे सत्य तक जाने और प्राधिकरणों से सुधार के लिए काम करवाने के एक समान प्रयोजन के लिए एकजुट थे। वहाँ पर कई ऐसे अवसर थे, जब मैं उन्हें बिना खाना खाए कई घंटों तक काम करते देखती थी, ताकि वह एक कहानी को समय पर दिखा सकें।

मुझे याद है कि एक पत्रकार ने मुझसे कहा था कि वह अपनी कहानियों के साथ खाता, पीता और सोता है।

❑

''तुम्हें बछेंद्री पाल का मोबाइल नंबर क्यों चाहिए?''

यह सवाल सी.एन.एन.-आई.बी.एन., प्रख्यात समाचार चैनल की एक महिला पत्रकार ने किया था, जिनसे मैंने प्रार्थना की थी। वह मेरा साक्षात्कार लेने कोटला मुबारकपुर के अतिथि गृह की पाँचवीं मंजिल पर आई थी, जिसे अजय माकन के सहायकों ने हमारे लिए व्यवस्थित किया था। महिला पत्रकार को जिस बात ने आश्चर्यचकित किया था, मेरा एक पर्वतारोही से संपर्क के लिए पूछना था। एक कृत्रिम बायाँ पैर और एक टूटे हुए दाएँ पैर, जिसमें एक स्टील रॉड लगी हुई थी, वाली एक लड़की द्वारा कदाचित् ही एक पर्वतारोही को खोजने की उम्मीद की जा सकती है। बछेंद्री पाल भारत की सबसे प्रख्यात महिला पर्वतारोही हैं और एवरेस्ट पर्वत पर चढ़नेवाली देश की पहली महिला रही हैं।

बछेंद्री पाल को गूगल पर सर्च करो और आप पाएँगे कि कैसे वह बहुत सी लड़कियों और औरतों को पर्वतारोहण करने के लिए प्रेरित कर रही हैं। समस्या थी कि उनका संपर्क वर्णन इंटरनेट पर उपलब्ध नहीं था। जब से मैंने अपनी मनोवृत्ति को एवरेस्ट पर चढ़ने के लिए बनाया था, मैं बड़ी बेताबी से उनसे मिलना चाहती थी। लेकिन कैसे और कहाँ मैं उनसे मिल पाऊँगी? मुझे कोई अंदाजा नहीं था कि वह कहाँ रहती थीं? मेरी समस्या थी कि मैं किसी से भी पूछने में थोड़ी अनिच्छुक थी। कुछ लोग, जिन पर मैंने विश्वास कर एवरेस्ट चढ़ने की अपनी बात बताई थी, उन्होंने मुझे पागल करार दिया था। उन्हें लगता था कि मेरा दिमाग खराब हो गया है।

तब से मैंने अपनी योजानाएँ खुद तक ही रखनी शुरू कर दी थीं। मैं उन औरतों से मिली थी, जो सहानुभूति प्रकट करती थीं, मेरे पैर खोने पर रोना-पीटना करती, खेद प्रकट करना—और उन्हें हैरानी होती थी कि मैं अब कैसे अपनी बची हुई जिंदगी बिताऊँगी। वे मुझे यह कहकर छेड़ती थीं कि 'भगवान् में भरोसा रखो। भगवान् तुम्हारी मदद करेगा।' यह वह समय था, जब मैं एक पत्रकार से मिली थी। मैं अभी एम्स से इस अतिथि गृह में पहुँची थी। हम हैरान हो रहे थे कि कैसे मैं पाँचवीं मंजिल तक पहुँचूँगी, क्योंकि अतिथि गृह में एक भी लिफ्ट नहीं थी।

मैंने स्ट्रेचर ले जाने से मना कर दिया था, जैसाकि मेरा परिवार और मित्र सुझा रहे थे। मैंने उनसे कहा था कि एवरेस्ट पर्वत पर अपनी दृष्टि रखने के लिए मुझे इन सीढ़ियों पर स्वयं ही चढ़ना होगा। मैं अभी भी सीढ़ियाँ चढ़ रही थी, जब पत्रकार ने मेरा साक्षात्कार लेने के लिए मुझे एक आवाज लगाई थी। मैंने उसे पहले ही बताया था कि मैं इस अतिथि गृह में स्थानांतरित होने वाली हूँ और उसे सीधे वहीं आने के लिए कहा था। पत्रकार आ गई थी और उसने, यदि मैं वहाँ थी, यह जाँचने के लिए आवाज लगाई थी।

उसने मेरा आधे घंटे का साक्षात्कार लिया था और अंत में मेरे नजरिए पर उसे सुखद आश्चर्य हुआ था। उसने कहा, ''तुम मुझसे किसी भी मदद के लिए पूछ सकती हो। जिंदगी में मौका दो बार दरवाजा नहीं खटखटाता है। आपको इसे समझकर समय के क्रूर पंजों से छीनना होता है।'' पत्रकार के द्वारा दिए गए प्रस्ताव में मुझे आशा की एक किरण नजर आई थी। तत्काल मैंने उसे कहा कि यदि वह कोई मदद करना चाहती है वह तो उसे मुझे बछेंद्री पाल का सेलफोन नंबर दिलवाना चाहिए। जब उसने मुझसे पूछा कि मुझे नंबर क्यों चाहिए, तो मैंने झूठ बोलते हुए कहा, ''मैं सिर्फ उनसे मिलना चाहती हूँ।''

पत्रकार ने मुझसे वायदा किया कि वह नंबर ढूँढ़कर देगी और फिर चली गई।

अब हम तीनों—राहुल, साहब और मैं—अकेले थे मिशन एवरेस्ट को सफल बनाने के लिए सोचने हेतु। तीन घंटे के बाद मुझे पत्रकार ने फोन किया था। उसने बछेंद्री पाल का नंबर जैसे-तैसे प्राप्त कर लिया था। उससे नंबर लेकर हमने तत्काल बछेंद्री पाल को फोन किया था। हमने लगातार पाँच दिन फोन किया था, परंतु वहाँ से कोई जवाब

नहीं मिल रहा था। छठे दिन उन्होंने कॉल का जवाब दिया था। मैंने खुद का परिचय दिया था। उन्होंने कहा कि उन्होंने मेरे बारे में सुना था—और मुझे जमशेदपुर आने का न्योता दिया था। मैंने उन्हें कारण नहीं बताया था कि क्यों मैं उनसे मिलना चाहती थी। यह केवल इसलिए था, क्योंकि मैं उनको अपनी एवरेस्ट इच्छा के बारे में फोन के बजाय स्वयं मिलकर बताना चाहती थी।

स्वयं पर लगे आरोपों से चिढ़कर अब मैं पहले से भी ज्यादा खुद को साबित करने के लिए दृढ संकल्प थी। देश मुझे एक पीड़ित के रूप में जानता था। मैं अब उसके समक्ष एक विजेता के रूप में पहचान बनाना चाहती थी। मुझे कोई अंदाजा नहीं था कि मैं अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल होऊँगी। लेकिन मेरे लिए यह साफ था कि यद्यपि मुझे नीचे जाना हुआ तो भी मैं एक लड़ाई लड़ने के बाद ही ऐसा करूँगी। हमारे सारे धार्मिक शास्त्र ऐसी सलाह के साथ भरे हुए हैं—एक व्यक्ति को सिर्फ अपना कर्म करना चाहिए और बाकी सब सर्वशक्तिमान ईश्वर पर छोड़ देना चाहिए।

मेरा मन अब शांत हो गया था। बछेंद्री पाल से बात करके मैं प्रफुल्लित महसूस कर रही थी। मैंने एवरेस्ट पर चढ़नेवाली पहली भारतीय महिला से बात की थी। परंतु जमशेदपुर जाने से पहले कहीं और जाना भी जरूरी थी। मैं कृतज्ञता जताने के लिए बरेली जाना चाहती थी। यह वही था, जहाँ मैं पिंटू कश्यप और बी.सी. यादव से मिली थी—वे लोग, जिन्होंने मेरी जान बचाई थी। यह बरेली में हुआ था, जब एक गरीब औरत ने मुझे अपना कंबल दिया था, जब मैं ट्रैक साइड में पड़ी ठंड से ठिठुर रही थी। मैं यह सब लोगों को प्रेरित करने हेतु करना चाहती थी, ताकि लोग कष्ट में पड़े हुए व्यक्तियों की मदद लगातार करते रहें। अतएव एम्स से छूटने के कुछ दिनों के बाद मैं वहाँ के रास्ते पर थी।

वह यात्रा आँख खोलनेवाली साबित हुई थी। चनेती जाने के बाद, जहाँ मुझे 'पद्मावती एक्सप्रेस' से फेंक दिया गया था, मैं पिंटू कश्यप से मिली थी। उसने मुझे बताया था कि कैसे पुलिस, खासकर जी.आर.पी., उसे परेशान कर रही थी वह भी सिर्फ इसलिए कि उसने टी.वी. पर मेरे बारे में प्रशंसात्मक ढंग से बोला था। मैं खुश थी कि मैं बरेली आई, क्योंकि पिंटू जैसे लोगों को सहारा देने के लिए कोई भी नहीं था। साहब ने टी.वी. पर भी जी.आर.पी. के द्वारा प्रकरण सँभालने और उस तरीके की आलोचना भी की थी, जिससे चिढ़कर वह गरीब लोगों को केवल सच बताने के लिए अपने निशाने पर ले रही थी। कानून की पुस्तक में मौजूद प्रत्येक चाल से मुझे फँसाने के लिए जी.आर.पी. और उसके अधिकारियों ने कोशिश की थी।

वे जानते थे कि मेरे प्रकरण ने उन्हें कठघरे में खड़ा कर दिया था, क्योंकि ट्रेनों में महिलाओं की सुरक्षा का प्रश्न अब चर्चा में था। एक धन्यवाद यात्रा बुलवाई गई थी,और मैं खुश थी कि मैं आई थी। मैं बी.सी. यादव से भी मिली थी, जो मुझे देखकर प्रसन्न थे।

''यह तथ्य कि तुम हमसे मिलने आई हो, यह दरशाता है कि तुम दिल की भली हो।'' उन्होंने कहा। यहाँ मैं एक गूँगे और बहरे बच्चों के एक प्रतिनिधिमंडल से मिलने गई थी, जो मेरे साथ अपनी समन्वयता दिखाने आए थे, जब मैं बरेली अस्पताल में भरती थी। वे बोल नहीं सकते थे, फिर भी उन्होंने अपनी चिंता मुझे व्यक्त कर दी थी और मुझे अपनी मुसकराहटों व इशारों से खुश कर दिया था। उनकी आँखों ने उनके विचारों की शुद्धता कह दी थी।

यह ऐसी विडंबना थी कि जब वे बच्चे मुझे हार पहना रहे थे और पुरस्कार दे रहे थे, तब रेलवे पुलिस के अधिकारी मेरी नीयत पर प्रश्न उठाने में व्यस्त थे। उस समय मैं एक सकारात्मक ऊर्जा से भर गई थी, जब वे अस्पताल में मेरे बिस्तर के पास मुझे खुश करने के लिए आए थे। अब वे मुझे अपने हार्दिक स्वागत से पुनः प्रेरित कर रहे थे। मैंने उनके प्रति अपना आभार प्रकट किया था। वे मुसकरा रहे थे, मुझ पर हाथ लहरा रहे थे और मुझे

अपने उड़न चुंबन (फ्लाइंग किस) देकर चले गए थे। अब यह चलने का समय था। हमने लखनऊ के लिए ट्रेन ली थी।

एक दिन बिताने के बाद मैंने के.डी. सिंह बाबू स्टेडियम जाने का निर्णय लिया था। यहाँ से मेरे पहुँचने के बारे में सबको मालूम पड़ गया था। मुझको चलायमान और बोलते देखने के लिए आए बहुत से लोगों में 'हिंदुस्तान टाइम्स' के कुछ पत्रकार भी थे। उन्होंने मुझे खेलते देखा और मेरी विभिन्न कोणों से कई तसवीरें भी खींची।

मेरी तसवीरें प्रमुख रूप से पृष्ठ 1 पर छपी थीं। इसने अमृत तुल्य कार्य किया था—मुझे विश्वास से भर दिया। शुभारंभ, मतलब आधा कार्य हो गया। अब मैं बछेंद्री पाल से मिलने के लिए और ज्यादा बेचैन थी। मेरा परिवार अब मेरे साथ एक बार पुन: यात्रा पर जाने के लिए तैयार था—अबकी बार जमशेदपुर। चूँकि हमें सीधी ट्रेन नहीं मिल रही थी, हमने सुबह-सुबह लखनऊ से नई दिल्ली की 'गोमती एक्सप्रेस' पकड़ी थी।

वहाँ से हमने जमशेदपुर के लिए 'पुरुषोत्तम एक्सप्रेस' पकड़ी, जिसमें मैं विकलांग लोगों के लिए आरक्षित बोगी में बैठी थी। मैं साधारण टिकट पर यात्रा कर रही थी और मुझे उस डिब्बे में यात्रा करने के नियमों के बारे में कोई अंदाजा नहीं था। जैसे ही ट्रेन चलने वाली थी, कुछ सुरक्षा कर्मचारियों ने डिब्बे में प्रवेश किया और जाँचने लगे कि सभी विकलांग व्यक्ति अपने साथ विकलांगता प्रमाण-पत्र लेकर चल रहे थे या नहीं। यह बहुत अजीब था कि विकलांगता देखने के बजाय सुरक्षा कर्मचारीगण सिर्फ उनके विकलांग होने का प्रमाण-पत्र ही देख रहे थे। मेरे पास एम्स से मिला प्रमाण-पत्र था, जिसमें वर्णित था कि मैं अब एक विकलांग व्यक्ति हूँ। परंतु सुरक्षा कर्मचारियों ने उसे स्वीकार करने से मना कर दिया था। वे केवल जिला प्राधिकरण से जारी प्रमाण-पत्र को मान्यता दे रहे थे, जो अभी तक तैयार नहीं हुआ था। मुझे रूखे तौर पर डिब्बा छोड़ने को कह दिया गया था। मैंने मना कर दिया था और बहस करने लग गई थी।

उनके अनुचित व्यवहार पर अत्यधिक गुस्से के क्षण में मैंने यह दिखाने का निर्णय किया था कि मैं अपनी विकलांगता झूठी नहीं दिखा रही थी। मैंने अपना कृत्रिम अंग निकाल उसे सुरक्षा कर्मचारियों की तरफ फेंक दिया था—''देखो, यह रहा सबूत। मैं नीचे नहीं उतरूँगी। जाओ और अपने अफसरों को बुलाकर लाओ, यदि तुम्हें अभी भी संदेह है तो।'' मैंने कहा। टिकट चैकिंग कर्मचारियों को हड़बड़ाकर वापस भागना पड़ा। मैंने सचमुच उनका चिल्लाते हुए पीछा किया था, ''देखो, यह सबूत है...।''

परंतु हालात यहाँ तक पहुँचते कैसे हैं? नियम पालन करने के लिए होते हैं, परंतु लोगों को अपनी बुद्धि भी लगानी चाहिए। कम-से-कम मेरे जैसे पूर्णतया दिखाई देनेवाले विकलांगों को लोगों को सिर्फ इसलिए परेशान नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनके पास जिला प्राधिकरण द्वारा जारी एक कागज का टुकड़ा नहीं है। प्रमाण-पत्र झूठ भी बोल सकते हैं, परंतु आँखें नहीं। मुझे लगता है कि रेलवे अधिकारियों को इस पहलू के बारे में भी ध्यान देना चाहिए। रोजाना बहुत से लोगों को इस परेशानी का सामना करना पड़ता होगा। किसी भी शिष्ट समाज को सुनिश्चित करना पड़ेगा कि ऐसा कभी न हो। स्टेशन से ट्रेन चलते ही मैं टूट गई थी। विकलांग व्यक्तियों के लिए बने डिब्बे में यात्रा करने की बात ने मुझे उदास कर दिया था।

आँसू मेरी आँखों से उमड़ पड़े, जैसे ही मेरे मस्तिष्क ने वापस जा उस ट्रेन यात्रा की झलकियाँ दिखाईं, जो मैंने 'पद्मावती एक्सप्रेस' में शुरू की थी और बरेली के पास चनेती पर खत्म हुई थी। हाल ही में हुई उस खौफनाक घटना के दृश्य मेरी आँखों के सामने तैर गए, जो कि वर्तमान के दृश्यों से ज्यादा सुस्पष्ट थे। भावुक होने के साथ ही कमजोरी महसूस होने से मैं जल्द ही सो गई थी। अगली सुबह हम जमशेदपुर पहुँच चुके थे।

हमने बछेंद्री पाल को फोन किया था—''मैडम, हम स्टेशन पहुँच चुके हैं।''

देश की पहली महिला पर्वतारोही ने सोचा था कि हम उन्हें नई दिल्ली स्टेशन पहुँचकर फोन कर सूचित कर रहे हैं कि हम जमशेदपुर आने के लिए यात्रा शुरू करने वाले हैं।

''मैडम, हम जमशेदपुर स्टेशन पर खड़े हैं।''

बछेंद्री पाल की आवाज वास्तव में आश्चर्य से भरी हुई थी। उन्होंने नहीं सोचा होगा कि मैं उनसे मिलने के लिए इतनी उत्सुक और प्रतिबद्ध हूँ। ''ओह! अच्छा, बहुत अच्छा। वहाँ पर कुछ क्षण प्रतीक्षा करो। मैं अपनी कार आपको लाने के लिए भेज रही हूँ।''

मैंने शिष्टतापूर्वक उनके प्रस्ताव को स्वीकारने से मना किया था—''मैडम, आप सिर्फ यह बताएँ कि हमें कहाँ पहुँचना है? हम वहाँ आ जाएँगे।''

पता मिलने के बाद हमने एक ऑटो किराए पर लिया, जिसके चालक ने बछेंद्री पाल का कार्यालय ढूँढ़ने में हमारी मदद की थी। मुझे उनके कार्यालय पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ीं, जो मैंने साहब का हाथ पकड़कर चढ़ी थीं, क्योंकि मुझे अभी तक कृत्रिम अंग का पूरी तरह अभ्यस्त होना था। दायाँ पैर, जिसमें रॉड डली हुई थी, पर विभिन्न टाँकों के साथ मेरी दोनों टाँगों पर फुंसी और छाले थे। बछेंद्री पाल मुझे सीढ़ियाँ चढ़ते और मेरी टाँगों की हालत देखकर जोर से चिल्ला पड़ी थी। कुछ समय के बाद उन्होंने मुझसे पूछा कि मुझे क्या उन तक लेकर आया था? अभी तक मैंने उनसे केवल इतना ही कहा था कि मैं उनसे प्रेरित थी, इसलिए मिलना चाहती थी। मूलत: यह सशंकित सवालों को मेरे रास्ते में आने से रोकने के लिए था। अब पहली बार मैंने उन्हें अपनी योजना के बारे में बताया। ''मैडम, मैं उस पर्वत पर चढ़ना चाहती हूँ, जिसपर आपने काफी समय पहले चढ़ाई की थी।''

यदि वह आश्चर्यचकित थीं तो भी उन्होंने उसे प्रकट नहीं किया था। इसके स्थान पर वह मुसकराई थीं। वह उससे भी ज्यादा प्रोत्साहित थीं, जितनी मैंने कल्पना की थी। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं एक बहादुर लड़की हूँ और पर्वत चढ़ने का लक्ष्य, जो कुछ भी मेरे साथ हुआ था, मुझे उसके बाद प्रशंसनीय था। बात करने के दौरान अचानक वे रुकीं, एक क्षण सोचा और अपना मोबाइल फोन निकाला, जिससे उन्होंने 'द टेलीग्राफ' और 'द टाइम्स ऑफ इंडिया' के पत्रकारों को कॉल किया था; क्योंकि वहाँ उनका बहुत सम्मान व प्रशंसा थी, अतएव पत्रकारों ने उन्हें गंभीरता से लिया था। इससे यह रास्ता दिखा कि कैसे प्रसिद्ध अखबारों के प्रतिनिधि ऐसी अल्प सूचना पर उनसे मिलने आ गए थे।

जब वे पहुँचे तो बछेंद्री पाल ने मुझ पर प्रशंसाओं की बौछार की थी। ''देखो, यह ऐसे हालात में भी एवरेस्ट चढ़ने को सोच रही है। क्या यह एक अदम्य साहस का उत्कृष्ट उदाहरण नहीं है?''

पत्रकारों ने 'हाँ' में सिर हिलाया था।

तब मेरी तरफ मुड़कर उन्होंने एक टिप्पणी की थी, जो मुझे आज भी याद है—''तुम्हारे दिल में तुम पहले ही एवरेस्ट पर चढ़ चुकी हो। अब तुम्हें मात्र इसे दुनिया के समक्ष साबित करना है।''

पत्रकारों के जाने के बाद बछेंद्री पाल ने मुझसे कहा, ''सुनो बेटी, मुझे तुमसे पूरी सहानुभूति है। परंतु एवरेस्ट एक कठिन कार्य है। यह तुम्हें हतोत्साहित करने के लिए नहीं है, बल्कि तुम्हें तुम्हारे द्वारा लिये गए निर्णय के हानि और लाभ समझाने के लिए है।''

मैं जानती थी कि बछेंद्री पाल ऐसा क्यों कह रही थीं। यह सामान्य भी था। आखिरकार कौन सोच सकता है कि एक विकलांग महिला खुद को एवरेस्ट के सामने टिका सकेगी? मैंने उनसे मुझे एक मौका देने के लिए कहा। वह सहमत हुई थीं।

''हमारे उत्तरकाशी स्थित टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन से जुड़ो। मेरे कर्मचारी तुम्हें प्रशिक्षण देंगे। हम देखेंगे कि

तुम कितनी सफल होती हो, जिसके बाद हम अंतिम फैसला लेंगे। जैसा कि मैंने कहा, तुमने पहले ही अपने दिल में एवरेस्ट पर विजय प्राप्त कर ली है। अब तुम्हें इसे सिर्फ दुनिया के समक्ष साबित करना है। अन्यथा अभी से तुम मेरे लिए एक विजेता हो। बेस्ट ऑफ लक!''

जिस समय तक मैं लखनऊ पहुँची, मेरी कानून की पढ़ाई की अंतिम छह माही परीक्षा शेष थीं। मैंने अपनी परीक्षाएँ दे दी थीं, क्योंकि मैंने हमेशा ही पढ़ाई की महत्ता में, विशेषतया औरतों के लिए, विश्वास किया है। उत्तर प्रदेश में, निश्चित ही पूरे देश में, बहुत सी लड़कियों को इस आदिम मान्यता की वजह से पढ़ाई छोड़ने के लिए मजबूर किया जाता है कि लड़कों को कमाने के लिए पढ़ाई पर ध्यान देना चाहिए और लड़कियों को घरेलू काम काज ही सीखना चाहिए, ताकि वे एक सुघड़ गृहिणी बन सकें। हमारी शिक्षा का भी लिंग भेद का नशा हो गया है। प्राथमिक कक्षाओं की पुस्तकें ऐसे वर्णनों से पटी पड़ी हैं कि 'राम पाठशाला जाता है, लक्ष्मी पाकशाला में काम करती है', जो कि लिंग रूढ़िवादिता को बढ़ावा देती हैं।

हमारे गाँवों में औरतों को अभी भी खाना बनाने और बच्चे पैदा करनेवाली, आज्ञाकारी पत्नी का किरदार निभानेवाली, अच्छी बहन और आज्ञानुवर्ती पुत्री समझा जाता है। लड़के ज्यादा देर तक बाहर रह सकते हैं, लेकिन लड़कियों को सूर्यास्त से पूर्व घर में आना होता है। लड़के जैसे चाहें वैसे कपड़े पहन सकते हैं, परंतु लड़कियों के लिए हर कोई कपड़े पहनने के नियम बनाना चाहता है। लड़कों के लिए किसी भी प्रकार की टिप्पणी करना शान की बात है, परंतु हमारे लिए यह निषिद्ध है। अब औरतें यत्र-तत्र—सर्वत्र हैं। वे टैक्सी से लेकर ट्रेन चला रही हैं, चाँद पर कदम रख रही हैं और अंतरिक्ष में जा रही हैं। वे सशस्त्र बलों में हैं और राजनीति में भी हैं। यहाँ औरतें मुक्केबाज, खिलाड़ी (एथलीट), क्रिकेटर और जिमनास्ट हैं। आज औरतें चित्रकार, लेखक और फिल्म निर्माता के रूप में अपनी छाप छोड़ रही हैं।

अब तक औरतों को आदमियों से दूसरे पायदान पर समझा जाता है। यह दु:ख पहुँचाता है। यह बदलना ही चाहिए और इसके लिए औरतों को मजबूत होना सीखना होगा। मैं ज्वलंत अंत:वस्त्रों वाले नारीवाद की वकालत नहीं कर रही हूँ। यह बदलाव सिर्फ शिक्षा के द्वारा ही आ सकता है। मेरे पास कदाचित् ही कानून को प्रश्न-पत्रों की तैयारी करने का समय था। तब भी मैं अपने प्रदर्शन से संतुष्ट थी।

पर्वतारोहण, जिसका मैंने बीड़ा उठाया था, के रोमांच से पूर्व मेरे शरीर को आराम देते हुए मैंने अपना कुछ समय लखनऊ में बिताया। साहब और राहुल को छोड़कर कोई भी मुझे गंभीरता से लेने को तैयार नहीं था। लेकिन अब तक मैं ऐसे निराशावाद पर हँसना सीख चुकी थी। मेरे परिवार के दो सदस्यों को छोड़कर मुझे बछेंद्री पाल के अतिरिक्त मीडिया भी मुझे प्रोत्साहित कर रहा था, जो लगातार मेरे पीछे खड़ा था। वास्तव में, एक बिंदु पर मीडिया को मुझे सिर्फ टी.आर.पी. बढ़ाने के लिए अनावश्यकरूपेण चिह्नांकित करने और प्रचारित करने का आरोप लगाया गया था।

न सिर्फ मेरे आलोचकों को चुप कराने के लिए, बल्कि मेरी क्षमताओं के बारे में मेरे अपने संदेहों को हटाने के लिए मैं ऐसी आलोचनाओं का जवाब कुछ बड़ा करके देना चाहती थी। मेरे संदेह तब प्रकट हुए थे, जब मुझ पर उन झूठों की बमबारी की गई थी। यद्यपि मैं जानती थी कि यह मुझे बदनाम करने की एक गहरी जड़ोंवाली साजिश का हिस्सा थे, लेकिन मैं इस हमले के सदमे से बाहर नहीं निकल पा रही थी। मैं हमेशा से ही एक सकारात्मक व्यक्ति और एक योद्धा रही थी। जबकि मैं मुसकराती थी और सकारात्मक व्यवहार करती थी, मुझे इस पर हमेशा विश्वास नहीं होता था। अंतत: मैं खुद में पुन: विश्वास करने हेतु एवरेस्ट पर चढ़ना चाहती थी।

लगभग एक महीने के बाद हमने उत्तरकाशी के लिए यात्रा शुरू कर दी थी, जहाँ बछेंद्री पाल ने अपना सामयिक

प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया था। 28 फरवरी, 2012 को मुझे ट्रेन से धक्का दिए जाने के बाद मैं वहाँ पहुँची थी। मैंने बछेंद्री पाल को यह बताने के लिए फोन किया था कि हम उत्तरकाशी पहुँच चुके हैं। वह मेरे वहाँ जल्दी पहुँचने पर पुन: आश्चर्यचकित हुई थी। उन्होंने अपनी टीम में किसी को मुझे संस्थान ले जाने के लिए कहा, जो कि वहाँ से 20 किलोमीटर दूर सुरम्य संगम चट्टी घाटी की सीमा पर स्थित था।

संस्थान लगभग 250 फीट नीचे एक चट्टानी क्षेत्र में स्थापित था। यह चोटियों से घिरा हुआ था और असी गंगा नदी के तट पर स्थित था। टाटा के कर्मचारियों को वहाँ टीम भावना और नेतृत्व के पाठ पढ़ाए जाते थे। मुझे एक खास जगह पर गाड़ी में लाया गया, जिसके बाद हमारा सामान उतारा गया और हमें 250 फीट नीचे 60 किलोग्राम भारी सामान के साथ आने के लिए कहा गया था। पहाड़ियों में प्रकृति द्वारा ऐसे असमतल स्थान बनाए गए हैं। यहाँ, एक तीन मंजिला मकान में सबसे ऊपरी मंजिल से प्रवेश कर भूतल तक का अपना रास्ता बनाना पर्याप्त रूप से सामान्य था।

मुझे स्थानीय लोगों के द्वारा सलाह दी गई कि सामान यहीं सड़क पर छोड़कर पहले कैंप पहुँच जाओ। मेरे चेहरे पर शंका की लकीरें देख स्थानीय लोग हँसने लगे। उन्होंने मुझे सामान के बारे में चिंता नहीं करने के लिए कहा था, ''चिंता मत करो। यहाँ के लोग भगवान् से डरते हैं। हर हालत में कोई भी पहाड़ों पर हलके से हलका बोझ लिए चढ़ना चाहता है। भले ही कोई भारी सामान को चुराने के बारे में ये सोचता भी है तो भी वह इसके साथ काफी दूर नहीं जा सकता है।'' एक स्थानीय व्यक्ति ने कहा। इन पहाड़ियों को देवताओं का निवास-स्थान ऐसे ही नहीं माना जाता है।

साहब का हाथ पकड़े मैं धीरे-धीरे कैंप के अपने रास्ते पर अधिकतर फिसलते और रेंगते हुए उतरने लगी थी। साहब ने सुनिश्चित किया था कि मैं वहाँ सुरक्षित पहुँच जाऊँ। और फिर वह सामान लाने पुन: ऊपर गए। साहब ऐसे हालातों में पैरामिलिट्री फोर्स के साथ कार्यावधि में रहने के आदी थे, अतएव उन्होंने कैंप के चारों ओर बहुत जल्दी एक छोटी सी नाली बना दी थी। ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिए किया गया था कि न ही बारिश का पानी और न ही सर्प जैसे जंतु आदि कैंप में प्रवेश कर सकें। साहब की पुरुष खेमे में रहने की व्यवस्था की गई थी। हमने चाय साथ में पी थी।

तत्पश्चात् एक प्रशिक्षक ने हमारा स्वागत किया था, ''मैं प्रतीक भौमिक हूँ।'' उसने कहा और हमें बाहर आमंत्रित किया था।

भौमिक ने मेरे दोनों पैरों का परीक्षण किया और उनका स्तर जाँचा—''ठीक है, अब तुम्हारा प्रशिक्षण का श्रीगणेश होता है।'' उसने एक विशिष्ट फौजी अंदाज में कहा और मुझे 250 फीट ऊँचे पथ पर जाने का निर्देश दिया, जिससे मैं अभी नीचे आई थी।

''क्या?'' मैं पूरे रास्ते पर दुबारा जाने के सुझाव पर भौंचक्की रह गई थी। लेकिन भौमिक की मनोदशा नर्म होनेवाली नहीं दिखती थी। बेमन से मैं चढ़ने के लिए तैयार हुई थी। मैं जानती थी कि सारे रास्ते अकेले जाना बिलकुल ही नामुमकिन होगा। अतएव, मैंने साहब से अपने साथ चलने के लिए आग्रह किया था।

दो घंटे से कुछ ऊपर में मैं 250 फीट ऊपर जाकर नीचे आ गई थी। अगली सुबह हमें इस क्षेत्र का दोगुना चढ़ने को कहा गया था। मैंने वह भी किया था।

उसी समय एक दूसरे प्रशिक्षक हमारे पास आए थे। उन्होंने हमें कहा कि मुझे एक समूह से जुड़ना है, जो एक ट्रैक पर जाने ही वाला था। अगले दिन हम अपने प्रथम ट्रैक पर जाने के लिए तैयार थे। समूह को एक दिन बाद जाना था, लेकिन मेरी विकलांगता की वजह से उन्हें एक दिन पहले जाना पड़ रहा था।

''हम अपना पड़ाव 9 किलोमीटर के बाद ही डालेंगे। आपके पास एक विकलांग है, इसलिए मैं आपको एक दिन पहले जाने का सुझाव देता हूँ।'' उसने मुझसे कहा।

साहब और एक महिला सहायक के साथ हम रास्ते पर निकल पड़े थे, जिसके बारे में हमें कागज पर स्पष्ट किया गया था। साहब ने 15 साल सी.आई.एस.एफ. में काम किया था, अतएव वे ऐसे रास्तों पर सही से प्रशिक्षित था। मैंने सिर्फ उनका अनुकरण किया था। हर कदम उठाने में काफी उद्यम लगता था। प्रत्येक क्षण, जब मैं खुद से प्रयास करती थी तो मेरे कृत्रिम अंग पर दबाव उस जगह एक घाव बना देता था, जहाँ से मेरा पैर काटा गया था। मैं दर्द से लड़ती रही; लेकिन 2.5 किलोमीटर के बाद मैं एक खड़ी चढ़ाई के ठीक आगे टूट गई थी।

पर्वतों पर ऐसे भावनात्मक होकर रोना काफी बार होता था। निराशा में जो मुझे चाहिए था, वे मुझमें ऊर्जा भरने के लिए प्रोत्साहन के कुछ शब्द थे। सौभाग्य से साहब यह किरदार निभाने के लिए वहीं थे। उन्होंने मुझसे कहा कि एवरेस्ट पर्वत पर चढ़ने की इच्छा रखनेवाले के लिए ऐसी बाधाओं का कुछ मतलब नहीं होना चाहिए। ऐसे प्रोत्साहन ने मुझे आवश्यक ऊर्जा दे दी थी। मैं अपने डर को छोड़ सहमत हो गई थी। कुछ समय आराम कर मैं अगले 3 किलोमीटर चढ़ सायंकाल तक एक गाँव में पहुँच गई थी। उस गाँव के मुखिया मुझे और एक महिला प्रशिक्षक को अपने घर में रहने देने के लिए सहमत हो गए थे। साहब ने एक खलिहान में रात गुजारी थी।

अगली सुबह हम अपने अगले ध्येय की प्राप्ति के लिए यात्रा शुरू कर चुके थे। मेरे हृष्ट-पुष्ट दल के सदस्यगण अभी तक ध्येय-स्थल तक नहीं पहुँचे थे, जब हमने उनसे पहले शाम तक अपने 9 किलोमीटर के लक्ष्य की प्राप्ति कर ली थी। साहब ने वहाँ एक तंबू लगाया था। दो घंटे के बाद सारा दल वहाँ हमारे पास पहुँच गया था। वे यह जान कर आश्चर्यचकित थे कि हम पहले ही उस स्थल—हमारे पहले ठिकाने—पर सफलतापूर्वक पहुँच गए थे। शाम को पाठ्यक्रम के प्रभारियों में से एक पहुँचे और मुझसे और साहब से रास्ते के बारे में चर्चा की, जिससे हमें वापसी में जाना था।

''दूसरे एक अन्य रास्ते से जाएँगे। मैं आपको सलाह देता हूँ कि आप उसी रास्ते से वापस जाओ।'' उसने कहा।

उसने कहा कि बाकी का समूह मुश्किल रास्ता लेने के लिए पूर्णतया सक्षम था, जबकि मुझे सुरक्षित पुराने रास्ते का प्रयोग कर वापस जाना चाहिए। मैंने अपना पैर नीचे रखा—''नहीं, मैं भी उसी रास्ते से जाऊँगी, जिसका तुम प्रयोग करोगे। अधिक-से-अधिक मैं पीछे छूट जाऊँगी। लेकिन मैं अपना इरादा नहीं बदलूँगी।''

बाकी के समूह का प्रात: 8 बजे जाना तय था। हमने प्रात: 4 बजे निकलने का निर्णय लिया था वह भी बिना महिला सहायक के, जिसने कहा था कि उसे मेरी धीमी गति से असुविधा होती थी। एक तरीके से उसने उस रास्ते पर मेरी मदद करने से इनकार दिया था, जिसके बारे में वह जानती थी कि वो उस रास्ते से बहुत ज्यादा कठिन है, जिसे हमने यहाँ आने के लिए चुना था।

सहायक बहुत कमजोर थी। मैंने सोचा कि यदि आवश्यकता पड़ेगी तो वह मुझे उठाने के लायक भी नहीं होगी, क्योंकि उसके शरीर का भार मुझसे काफी कम था। वस्तुत: यही तो उसने मेरे सामने कुछ महीने बाद कबूल किया था।

''मैं माफी चाहती हूँ कि मैंने तुम्हें तुम्हारे भरोसे ही छोड़ दिया था। परंतु असलियत यह थी कि मैं डरी हुई थी; क्योंकि तुमने मुश्किल रास्ते को चुना था। इसलिए मैं जानती थी कि मेरा कार्य और भी मुश्किल होगा।'' उसने कहा था।

अब मेरे पास सहारा लेने के लिए सिर्फ साहब थे। संकल्प लेने के बाद मैंने आगे बढ़ना शुरू कर दिया था। प्रात: 6 बजे तक हम एक ऐसे स्थान पर पहुँच चुके थे, जिसको भयानक समझा जाता था। उस क्षेत्र में जंगली जानवर थे

और पूरा इलाका पहाड़ी था। इससे भी बुरा, हाल ही में वहाँ भूस्खलन हुआ था। अब हमसे उसे पार करने की अपेक्षा की जाती थी। हमारे प्रशिक्षक ने वास्तव में हमें इस स्थान पर प्रतीक्षा करने के लिए कहा था। लेकिन अब इतनी दूर आने के बाद हम रुकने वाले नहीं थे। हम दोनों ही अब आगे बढ़ना चाहते थे।

साहब ने मुझसे कहा कि वह मुझे साथ ले जाने से पहले खुद जाकर रास्ते की जाँच करेंगे। लगभग 90 मिनट के बाद वह वापस आए और मुझसे कहा कि यद्यपि रास्ता बहुत ही जोखिम भरा है, फिर भी यदि दूसरे इसे पार कर सकते हैं तो मैं भी कर सकूँगी।

''हम खुद जाएँगे।'' उसने स्पष्ट कर दिया था।

मैंने 'हाँ' में सिर हिलाया था। साहब ने मेरा बैग उठाया और खतरनाक विस्तार को पार करना शुरू कर दिया था। हमने रस्सियों और पर्वतीय उपकरणों का प्रयोग रास्ता पार करने के लिए किया था। प्रात: 10 बजे तक हमने 1 किलोमीटर का रास्ता तय कर लिया था। अब आगे जाने की अपनी क्षमता पर विश्वास करते हुए हमने सारा कठिन रास्ता खुद से तय करने का फैसला किया था।

उन्होंने हमारी इस मुश्किल दौर में मदद नहीं की, इसलिए हमें अब खुद ही यात्रा करनी होगी। हमने खुद से कहा कि यह हमारे लिए जंगली माहौल को जाँचने का एक अच्छा अवसर था। हम कभी-कभार रास्ता खोते हुए आगे बढ़ने लगे। पर्वतीय फिल्में और डिस्कवरी चैनल देखने से हमें थोड़ा अंदाजा था कि जब रास्ता ढूँढ़ने में संदेह हो तो नदी का पीछा करना चाहिए। इसलिए हमने महज असी गंगा नदी का पीछा किया और उसके किनारों पर चलते हुए हम अंतत: संगम चेट्टी के आधार शिविर (बेस कैंप) पहुँच गए थे। वहाँ आधार शिविर पर कोलाहल मचा हुआ था। हमें ढूँढ़ने के लिए एक बचाव दल तभी भेजा जाने वाला था, क्योंकि हम काफी लंबे समय से गुम चल रहे थे। अत: चिंता होनी स्वाभाविक थी।

हमें बाद में मालूम पड़ा कि दल के अन्य दक्ष सदस्यों ने वह रास्ता छोड़ दिया था, क्योंकि वह बहुत खतरनाक था। असल में, जिस दल के सदस्यों ने वह खतरनाक रास्ता छोड़ दिया था, उन्होंने पहले मुझे यह सफाई देने में काफी समय बिताया था कि क्यों मुझे नहीं, बल्कि उन्हें उस क्षेत्र से जाना चाहिए था। स्वाभाविक रूप से हमें इसे पार करने में ज्यादा समय लगा था। कैंप पर हर कोई यह सुनकर ठगा-सा महसूस कर रहा था कि हम सफल हुए थे और एक विकलांग लड़की के दृढ संकल्प की बात आधार शिविर में जंगल की आग की तरह फैल गई थी।

बछेंद्री पाल को भी सूचना मिल गई थी कि मैंने एक कठिन रास्ते में उन बाधाओं को जीत लिया था, जिन्हें दल के अन्य सदस्यों ने काफी कठिन पाया था। इस अनुभव के बाद मेरा विश्वास आसमान छूने लगा था। सचमुच एक मजबूत इच्छा-शक्ति का व्यक्ति कुछ भी जीत सकता है। एक सच्ची निर्धारित आत्मा को कोई नहीं रोक सकता है। मुझमें सदैव ताजा विश्वास भरनेवाली बछेंद्री पाल ने बाद में मुझसे कहा, ''अरुणिमा, तुम उनसे बहुत ही अच्छी हो। वास्तव में, ये व्यक्ति एक विकलांगता से पीड़ित दिखाई देते हैं, तुम नहीं। मुझे तुम पर गर्व है।''

मैं प्रसन्न थी। हालाँकि मेरे पैर बुरी हालत में थे। उनपर छाले पड़े हुए थे और चोट लगी हुई थी। परंतु जीतने की उमंग से दर्द की तीव्रता कम हो गई थी। मैं उस खिलाड़ी की तरह प्रसन्न और संतुष्ट थी, जो ओलंपिक मेडल जीतने के बाद अपनी पीड़ा को भूल जाता है, उस तरह जैसे एक विद्यार्थी उन जागी हुई रातों को; जिन्हें पेचीदा समीकरणों को याद करने में बिताता है, को सभी प्रश्नों का सही जवाब देने के बाद भूलकर आह्लादित होता है; उस शुद्ध खुशी के साथ, जिससे किसान अपनी फसल को तैयार देख अपने पसीने पोंछता है। दो दिनों तक मैं अपनी उपलब्धि के यश में आनंद उठा रही थी। अब अत्यधिक विश्वस्त होते हुए हमने खुद ही यात्रा करना शुरू कर दिया था। यद्यपि हम अन्य पर्वतारोहियों से कुछ अंतर से पीछे रह जाते थे, परंतु हम अब इस फासले को पूरा

करने के बारे में निश्चिंत थे।

हमने अब पहाड़ों पर अधिक-से-अधिक समय बिताना आरंभ कर दिया था। अब कुछ भी महत्त्व नहीं रखता था। मुझे महसूस होता था कि जैसे कि मुझ पर दुनिया के शीर्ष पर होने के एक अजनबी आकर्षक स्वप्न का साया है। और इसको घटित करने के लिए मुझे कई बाधाओं को पराजित करना पड़ेगा, खुद को चुनौती देनी होगी और अपने शरीर को एक सीमा से आगे तक ले जाना पड़ेगा। अकेली चीज, जो मुझे अब चालित कर रही थी, वह थी—अंतिम सीमा के लिए पूरी तैयारी करना। हमारे जैसे गरीब और अनुभवहीन पर्वतारोही कैसे संसाधन-युक्त साधारण और धनी पर्वत-उत्साहियों से मेल कर सकते हैं? हमें अपने सीमित भंडार का बंदोबस्त करना पड़ेगा—कुछ ऐसा, जो हमने सारी जिंदगी किया है। हमने दृढता से अभ्यास करना जारी रखा था।

एक दिन प्रशिक्षण के दौरान मेरा सामना एक खड़ी चढ़ाई से हुआ था। साहब और मैंने कुछ भी नहीं खाया था। दल ने हमें पीछे छोड़ दिया था और हमारी समस्या बढ़ाने के लिए वहाँ अधिक हिमपात भी हुआ था। हम रास्ता भटक गए थे। मेरी आँखों से आँसू गिर आए थे। मैं थक गई थी, भूखी थी और भयभीत भी थी। उस अवसर पर साहब ने जो कुछ कहा, उसने मेरे होंठों पर मुसकराहट ला दी थी—''न तुम्हारे पिता, न मेरे पिता ने हमारे लिए कुछ छोड़ा है। हमारा ध्येय एवरेस्ट है। हमने अपना मार्ग अस्थायी रूप से खो दिया है। परंतु हम उसे ढूँढ़ लेंगे। महत्त्वपूर्ण चीज यह है कि हमें अपने ध्येय का पथ नहीं खोना है।''

साहब ने कुछ लकड़ियों को ढूँढ़ आग जलाई और कुछ मैगी बनाई थी। उसे खा कर, मैंने कुछ ताजगी महसूस की थी और एक बार पुन: हम अपने रास्ते पर निकल पड़े थे। जल्द ही हम अपनी मंजिल पर पहुँच गए थे। मैंने तकरीबन दो महीने पर्वतों में बिताए थे। अब मैं रस्सियों का प्रयोग चढ़ने के लिए सीख रही थी।

मुझे चढ़ने के लिए साहब के हाथों की सहायता लेने की जरूरत भी नहीं पड़ती थी। मैंने धीरे-धीरे पाया था कि ढलान की यात्रा चढ़ाई से ज्यादा मुश्किल होती है। मुझे भी 5 से लेकर 10 किलोग्राम और कभी 20 किलोग्राम तक वजन उठाना पड़ता था। मैं अच्छा कर रही थी, परंतु यह मुझे दु:ख देता था कि यद्यपि मैं आधार शिविर, नियमित प्रशिक्षणार्थियों से जल्दी छोड़ रही थी, फिर भी वे मुझसे बहुधा आगे निकल जाते थे। मैं खुद से पूछती थी कि यदि मैं अन्यों से इसी तरह लगातार पीछे रहने लगी तो क्या मैं कभी अपने एवरेस्ट पर्वतवाले स्वप्न को सत्य कर पाने में समर्थ हो पाऊँगी?

मैंने खुद से कहा था कि मुझे मेरा काल-मापन (टाइमिंग) ठीक करना होगा। यह सत्य था कि मैं एक विकलांगता से कष्ट उठा रही थी, परंतु तब मैं यहाँ सहानुभूति पाने नहीं आई थी। मैं यहाँ एक ध्येय पूरा करने आई थी। पर्वत हर एक से समान व्यवहार करते हैं। केवल प्रतिबद्ध व्यक्ति ही मार्ग में आने वाली चुनौतियों से निकल पाते हैं। प्रत्येक दिन मैं अपने लिए कोशिश करती थी और प्रत्येक अन्य से अधिक मुश्किल हो, ऐसे नए उद्देश्य स्थापित करती थी; कभी-कभी यह कुंठित करता था, कभी-कभी उबाऊ लगता था। परंतु मैं कोशिश करती रही। शनै:-शनै: मेरी निष्ठा फलने लगी थी।

मैं अन्यों के साथ पकड़ बनाने लगी थी। इससे भी अधिक अब कोई भी मुझसे आगे नहीं निकल सकता था। और इसका साफ मतलब था कि मैंने हमारे स्थल पर उनसे काफी पहले पहुँचना आरंभ कर दिया था। जब मैंने ऐसा काफी हद तक नियमित रूप से करना शुरू कर दिया था, तब साधारण प्रशिक्षणार्थी मुझसे पूछा करते थे कि मैं क्या खाती हूँ? ऐसे प्रश्नों ने मुझे अनुभव करा दिया था कि मैं उनसे काफी अच्छा कर रही थी और अन्य शब्दों में, अपने सपने को साकार करने के लिए तैयार होने लग गई थी। बछेंद्री पाल संस्थान में समय बिताने के लिए कुछ दिन के बाद पहुँची थी। उनके वहाँ आने का एक कारण यह भी था कि वे जाँचना चाहती थी कि मैं वास्तव में

प्रशिक्षण ले रही थी या ऐसे ही समय व्यर्थ गँवा रही थी।

यह परीक्षण करने के लिए कि मैं एवरेस्ट के बारे में कितनी गंभीर थी, बछेंद्री पाल हमारी नियमित यात्राओं पर मेरे साथ चलने लगी थी। प्रत्येक दिन वे हमें एक नए रास्ते पर ले जाने लगी थीं। जब वे देखती थीं कि मैं कैसे सफलतापूर्वक वो सब कर रही हूँ, जिसे मुझे करने के लिए कहा जा रहा था तो वह कहती, ''अरुणिमा, जितना एक पर्वतारोही को पता होना चाहिए, तुम उसका 40 प्रतिशत सीख गई हो। अब मैं चाहती हूँ कि तुम्हें एक मूल (बेसिक) पर्वतारोहण का औपचारिक पाठ्यक्रम (कोर्स) कर लेना चाहिए। यह एक पेशेवर पर्वतारोही बनने के लिए पहला कदम होगा।''

मैं जानती थी कि वे सही हैं। पर्वतों में कुछ समय बिताने से मुझे अहसास हुआ था कि एक छोटी फिसलन भी हानिकारक हो सकती है। अतएव, पाल के निर्देशों का पालन करते हुए मैं 'नेहरू पर्वतारोहण संस्थान' (एन.आई.एम.), जो उत्तरकाशी में भी है, गई थी। वहाँ हम यह खोजकर स्तंभित थे कि एन.आई.एम. विकलांग व्यक्तियों को भरती नहीं करती है। प्रधानाचार्य ने कहा कि उन्होंने कभी भी एक विकलांग व्यक्ति को प्रशिक्षण नहीं दिया था और वे नियम उद्धृत किए, जो उन्हें विकलांगतावाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने से मना करते हैं।

परंतु हम हारने की मन:स्थिति में कतई नहीं थे। साहब ने संस्थान के प्रधानाचार्य, प्रशिक्षक और चिकित्सकों से बात कर उन्हें मनाने की कोशिश की थी कि मुझे प्रशिक्षण देना मेरे साथ-साथ उनके हित में भी होगा। उसने यह लालच दिया, ''क्या आप एक विश्व रिकॉर्ड नहीं बनाना चाहते हैं? कल्पना कीजिए कि आपके संस्थान से प्रशिक्षित एक लड़की एक ऐसा ही रिकॉर्ड बनाने जा रही है। ऐसा करना एन.आई.एम. के लिए एक अच्छा अर्जिन करेगा।''

इस चाल ने काम कर दिया था। एन.आई.एम. के प्रधानाचार्य झिझकते हुए मान गए थे। परंतु डॉक्टर अभी भी अड़े हुए थे। उन्होंने एक 'सेफ आई' प्रमाण-पत्र देने से मना कर दिया था, जो कि प्रशिक्षण लेने के लिए अत्यंत आवश्यक था।

''अगर किसी हालात में कुछ हो जाता है तो उसके लिए कौन जिम्मेदार होगा?'' डॉक्टर ने हमारे हठ करने पर कहा था।

मैंने उनसे कहा, ''श्रीमानजी, पाठ्यक्रम में पर्वत पर 10 दिन के बाद जाएँगे। तब तक कृपा कर मुझे देखें और तभी अनुमति दें, जब आप मेरी प्रगति से संतुष्ट हों।''

एन.आई.एम. के लोगों ने मेरे तथ्यों की जाँच भी की थी। अतएव यह सहमति हुई थी कि पर्वतों तक जाने से पहले मुझे दस दिन के एक प्रशिक्षण से गुजरना होगा और उसको सफलतापूर्वक उत्तीर्ण करने के बाद मैं 'सेफ आई' प्रमाण-पत्र पाने के लिए योग्य हो पाऊँगी। अगले दिन से मेरा बेसिक प्रशिक्षण आरंभ हो गया था। मेरा साथ देने के लिए देश और विदेश की 75 लड़कियाँ थीं। उनमें से मैं अकेली ही विकलांग लड़की थी।

प्रशिक्षण की अवधि के दौरान मेरे साथ एक साधारण लड़की की तरह व्यवहार किया जा रहा था और वहाँ मेरी सहायता के लिए कोई उपलब्ध नहीं था। एक दिन एक दिलचस्प वाकया हुआ था। हमारे प्रशिक्षकों ने सभी लड़कियों को पाँच से आठ के समूहों में बाँट दिया था। मेरे दल की लड़कियाँ दिल्ली, महाराष्ट्र और उत्तराखंड से संबंध रखती थीं। मैं अकेली उत्तर प्रदेश से थी। विभिन्न राज्यों से होने के बावजूद हम जल्द ही अच्छी दोस्त बन गई थीं। प्रत्येक दिन मुझे संस्थान से टेकला, एक चट्टानी चढ़ाई का क्षेत्र, तक 10 किलोमीटर के फासले पर चलना पड़ता था, जहाँ मुझे पर्वत पर चढ़ने का प्रशिक्षण दिया गया था। मुझे तकरीबन 20 किलोग्राम वजनी भारी पर्वतारोहण औजार, जिसमें एक 40 मीटर 9 मिलीमीटर की रस्सी भी होती थी, प्रशिक्षण क्षेत्र तक लेकर चलना

होता था। मेरे दल की लड़कियाँ मेरी अच्छी देखभाल करती थी। मुझे अभी भी याद है कि कैसे अमेरिका की एक लड़की, जिसका नाम सुजाननाह बजाज था, अपनी सीमा से भी बाहर जाकर मेरी मदद करती थी।

एक दिन जब मैं टेकला के रास्ते पर जा रही थी, मेरे कृत्रिम अंग का पेंच (स्क्रू) ढीला हो गया था, जिसके कारण मैं नीचे गिर रही थी। मेरे दल की लड़कियाँ मुझे बचाने आगे आईं और मुझे ऊपर उठाने की कोशिश की थी। जब वे ऐसा करने लगी, तब मेरे पैर का टुकड़ा खिसक गया था। मेरे दल की लड़कियाँ उस दृश्य से डर गई थीं और मुझे अनैच्छिक नीचे गिरा दिया था। मैं पूरी तरह से पुन: गिर गई थी। मैं देख सकती थी कि लड़कियाँ मेरे पैर के टुकड़े के दृश्य से किस तरह भयभीत थी। मैंने उनसे शांत रहने को कहा और अपने कृत्रिम पैर के स्क्रू को कसने लग गई थी। जल्द ही मैं पुन: चलने के लिए तैयार थी। टेकला के रास्ते पर हम इस पर बड़ा हँसे थे कि कैसे समूह मेरे कृत्रिम पैर से डर गया था।

मैं प्रत्येक दिन एक नई उमंग के साथ पहुँचती थी। दस दिन के गहन और दुष्कर प्रशिक्षण के बाद एन.आई.एम. डॉक्टर मुझे 'सेफ आई' प्रमाण-पत्र देने को सहमत हो गए थे। हम भुक्खी रोड से पर्वतों में स्थित 'तेल' नामक स्थान की ओर जाने के लिए निकले थे। वह एक बहुत ही कष्टकर चढ़ाई थी। मेरे समूह में सभी पाँच लड़कियों के बीच दोस्ती हो जाने से काफी मदद हुई थी। मुझे अपने समूह का नेतृत्व करने का सम्मान दिया गया था। दूसरे समूहों की लड़कियाँ, जो काफी उत्साही नजर नहीं आ रही थीं उनसे भिन्न मेरा समूह पूरी तरफ ऊर्जावान और उत्साह में चरम पर था। हम पाँच सभी आँखों के लिए आकर्षण बिंदु थे, क्योंकि सभी 75 लड़कियों में हमारे ग्रुप का तालमेल सबसे उत्तम था।

वास्तव में, हमें प्राय: अन्य समूहों की लड़कियों को प्रेरित करने के लिए नियुक्त किया जाता था। हम उन्हें आगे बढ़ने के लिए तब तक प्रेरित करती थीं, जब तक वे हमें कुपित होकर उन्हें अकेला छोड़ने की विनती नहीं करती थीं। वहाँ मधुवंती गोडसे नामक एक लड़की थी, जो थोड़ी मोटी थी और इसलिए धीरे-धीरे आगे बढ़ती थी। जब मैं उसे तेजी से चलने के लिए उकसाती थी, तब वह एक मुसकराहट के साथ हँसते हुए कहा करती थी, ''अरुणिमा, कौन कहेगा कि तुम विकलांग हो? तुम इसे एक पैर के साथ करने में सक्षम हो, जबकि हम इसे दोनों पैरों के साथ भी कर पाने में असमर्थ हैं।''

अब तक हम आधार शिविर पहुँच चुके थे, जो सुंदर फूलों से पटा पड़ा था। हम वहाँ समय व्यतीत करना और फूल तोड़कर अपने बालों में लगाना चाहती थीं। परंतु एक पर्वतारोही से अनुशासन का पालन करने की उम्मीद की जाती है। अतएव, फूलों को तोड़ने के बजाय हम उनको देखकर प्रसन्न हो रहे थे। हम पाँचों की रहने की व्यवस्था वहाँ एक सामूहिक शिविर में हुई थी। हम वस्तुत: एक-दूसरे के सान्निध्य में आनंद प्राप्त कर रहे थे। इसके साथ ही हम पर्वतों पर जीवित रहना भी सीख रहे थे। हम आधार शिविर पर दो दिनों तक टिके, जिसके बाद हमें 18,000 फीट ऊँचे मुख्य शिखर के लिए प्रस्थान करना था। एक मेघ युक्त दिन हम शिखर पर चढ़े थे। जोश में हमने एक-दूसरे को गले लगाया और एक सेल्फी भी खींची थी। उसी दिन शाम 7 बजे तक हम आधार शिविर पर वापस आ गए थे। हमारा समूह शिखर पर चढ़नेवाला सबसे प्रथम था।

जिस क्षण मैं आधार शिविर पहुँची थी, दिगंबर जो दल के मुख्य प्रशिक्षक थे, ने मुझे सूचना दी थी कि मुझे एक नौकरी के साक्षात्कार के लिए दिल्ली स्थित सी.आई.एस.एफ. मुख्यालय में जल्दी पहुँचना होगा।

''तुम्हें वहाँ परसों पहुँचना पड़ेगा।'' प्रशिक्षक ने कहा था। सी.आई.एस.एफ. के एक मुख्य सिपाही की नौकरी के लिए साक्षात्कार था। निर्मलजीत सिंह कलसी, संयुक्त सचिव (गृह मंत्रालय), जो मुझसे एम्स में मिलने आए थे, के प्रयासों के फलस्वरूप साक्षात्कार आया था। अस्पताल से छुट्टी पाने के बाद मैंने शिष्टाचार के नाते उनके नॉर्थ

ब्लॉक के कार्यालय में एक कॉल की थी। अधिकारी महोदय ने पुन: मदद का प्रस्ताव दिया था। इस पर मैंने उन्हें बताया था कि मैंने बिना अपनी गलती के सी.आई.सी.एफ. में नौकरी पाने का अवसर खो दिया था। अगर मुझे दिल्ली जानेवाली गाड़ी से नीचे नहीं फेंका गया होता तो मैं शायद अभी तक एक हेड कांस्टेबल बन जाती। अतएव, मैंने अधिकारी से कहा कि यह बहुत उपयुक्त होगा, यदि वह उस नौकरी के प्रस्ताव को पुन: सजीव कर सकें। श्री कलसी ने वादा किया था कि वह कुछ करेंगे और आज उन्होंने अपना वादा पूरा कर दिया था।

मेरा प्रशिक्षण पूरा हो चुका था, मगर सी.आई.सी.एफ. की समय-सीमा काफी नजदीक थी। मुझे 16,000 फीट की ऊँचाई से नीचे लगभग 29 किलोमीटर की यात्रा एक दिन में करनी थी, जिसे साधारणतया लोग पाँच दिन में पूरी कर पाते हैं। और तब भी मुझे अगले दिन एक लिखित परीक्षा देनी थी। इसी बीच साहब ने मुझे उत्तरकाशी से सैटेलाइट फोन द्वारा बताया कि उसने सी.आई.सी.एफ. के व्यक्तियों को समय-सीमा बढ़ाने हेतु एक इ-मेल भेजा है। यह उम्मीद थी कि सी.आई.सी.एफ. प्रार्थना स्वीकार करेगी। हालाँकि वहाँ इ-मेल का कोई जवाब इस बात की पुष्टि के लिए नहीं मिला था कि साक्षात्कार पुनर्निर्धारित किया गया था।

मैं खुद को किसी भी कीमत और हालात के हिसाब से जाँचना चाहती थी। अतएव, मैंने 29 किलोमीटर का फासला एक दिन में तय करने की कोशिश करने का निर्णय लिया था। मैंने चढ़ाई उतरना सुबह 6 बजे आरंभ किया और सायं 4 बजे तक मैं भुक्खी रोड पहुँच चुकी थी। बहुत से लोग विचार करेंगे कि यह एक आश्चर्यजनक उपलब्धि होगी। मैं अब तक ऐसे पर्वतारोहियों से मिल चुकी हूँ, जिन्हें समझाने की जरूरत पड़ती है कि मैंने वास्तव में 16,000 फीट नीचे 29 किलोमीटर का सफर एक दिन में पूरा किया था। भुक्खी में मैंने साहब को एक टैक्सी के साथ मेरी प्रतीक्षा करते हुए पाया था। बिना कोई समय बरबाद किए हम हरिद्वार के लिए उसी रात निकल पड़े थे।

उस रास्ते पर रात को हरिद्वार या देहरादून के लिए यात्रा करने हेतु प्रोत्साहित नहीं किया जाता। हमें कई स्थानों पर रोका गया था और आगे बढ़ने की अनुमति, हमें रात में इस समय यात्रा करने का ब्योरा देने के बाद मिलती थी। सुबह 2 बजे तक हम ऋषिकेश बस स्टैंड पहुँचे थे और बिना कोई अधिक समय बरबाद किए हम तुरंत ही दिल्ली के लिए निकल पड़े थे। रात को लगातार चलते रहने से हम दिल्ली स्थित सी.आई.एस.एफ. मुख्यालय सुबह 9 बजे तक पहुँच गए थे। मेरे पैर की वजह से मैं अब 27 घंटे के रिकॉर्ड सफर के बाद बिना रुके दिल्ली पहुँच चुकी थी।

सी.आई.एस.एफ. के डी.आई.जी. मुझे देखकर आश्चर्यचकित थे। वह इसलिए, क्योंकि उन्हें मात्र 27 घंटे पहले बताया गया था कि मैं उत्तरकाशी के गहरे पर्वतीय क्षेत्र में थी। सी.आई.एस.एफ. अधिकारी भी स्वयं एक पर्वतारोही रह चुके थे और उन्हें भी मुझ पर विश्वास करने में समस्या हुई थी। हमारे कथन की पुष्टि करने के लिए उन्होंने एन.आई.एम. प्रधानाचार्य से भी बात की थी। पुष्टि करने बाद सी.आई.एस.एफ. अधिकारी काफी प्रभावित हुए थे। उक्त अधिकारी ने पहले ही साहब के अनुरोध को मानकर मेरा साक्षात्कार एक सप्ताह के बाद का करवा दिया था। मेरे पास वापस जाने के अलावा कोई चारा नहीं था।

उसी दिन शाम को 6 बजे तक ऋषिकेश पहुँचने के लिए हमने दिल्ली से प्रात: 10 बजे बस पकड़ी थी। वहाँ से हमने उत्तरकाशी के लिए एक टैक्सी किराए पर ली, जिससे हम सुबह 3 बजे एन.आई.एम. पहुँचे थे। उस सुबह मैंने लिखित परीक्षा दी थी, जो मैं पहले देने में सफल नहीं हो पाई थी। मैं आश्चर्यचकित थी कि सक्षम पुरुषों और महिलाओं का दल, जो 16, 000 फीट की ऊँचाई चढ़कर गया था, अभी मेरे दिल्ली से वापस आने तक भी वापस नहीं आया था।

प्रधानाचार्य ने मुझे बताया कि दल दो घंटों के बाद वापस आएगा। अगले दिन मैंने प्रशिक्षण समारोह में हिस्सा

लिया और 'टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन' के लिए प्रस्थान किया था। वहाँ मैंने ऊँचाई पर चढ़ने और नीचे उतरने की अपनी साधारण समय-सारणी की शुरुआत की थी। मुझे अगले महीने के लिए प्रशिक्षण दिया गया था। बछेंद्री पाल की सलाह पर मैंने गौमुख की यात्रा की थी, जहाँ से गंगा उत्पन्न होती है।

वह एक चित्ताकर्षक यात्रा थी। हमारे मार्गदर्शक के साथ हम उस स्थान के लिए प्रात: 4 बजे निकले थे और गंगोत्री सायं 2 बजे तक पहुँचे थे। निरंतर सफर करने से हम कुछ आराम करना चाहते थे, परंतु मार्गदर्शक ने हमें अनवरत चलते रहने के लिए कहा था। हम उस तरीके से प्रसन्न नहीं थे, जिसके साथ वह शर्तें लगा रहा था। परंतु पर्वतों में मार्गदर्शक ही मालिक होता है। उसकी बात मानना ही बुद्धिमत्ता थी। अतएव, दर्द और छालों की परवाह किए बिना मैं चीर बासा तक पहुँचने तक चलती रही थी। अब सायं के 7 बज चुके थे। हमें भोज बासा के आधार शिविर तक पहुँचने से पहले अन्य 6 किलोमीटर का रास्ता तय करना था, जहाँ हमें पड़ाव डालना था।

अब मार्गदर्शक भी इस स्थान पर यात्रा रोकने के लिए मान गए थे। हालाँकि उन्होंने घोषणा की कि वहाँ चीर बासा पर कोई सुविधाएँ नहीं थी। हम रात गुजारने के लिए एक जगह ढूँढ़ने के लिए संघर्ष कर रहे थे कि एक वन उप-निरीक्षक ने हमें सूचित किया था कि नंगू बाबा नामक एक उदासीन एवं रहस्यमयी संत, जो कि गंगा किनारे रहते हैं, हमें शरण दे सकते हैं।

''वह एक रहस्यमय साधु हैं। यदि आप भाग्यशाली हैं तो वह आपको अपनी गुफा में रात गुजारने की अनुमति दे सकते हैं, जहाँ उन्होंने मूलभूत व्यवस्थाएँ कर रखी हैं।''

संत का पता लगाना मुश्किल नहीं था। नंगू बाबा हमसे गर्मजोशी से मिले—''अरुणिमा, मेरे पास तुम्हें देने के लिए कुछ नहीं है। तुम इस गुफा में जब तक चाहो, तब तक रह सकती हो और मैं तुम्हारे लिए अपने पास मौजूद थोड़े से आटे से रोटियाँ बनाऊँगा।''

उन्होंने हम तीन के लिए छह रोटियाँ बनाईं और हमें गुड़ के साथ परोसी थी। वहाँ संत के बारे में कुछ दैवी था। साधारण सी रोटियाँ भी जो उन्होंने हमारे लिए बनाई थीं, बहुत ही बढ़िया थीं। रात के खाने के बाद हमने खुद को अँधेरी गुफा में जितना आरामदेह बना सकते थे, उतना बनाया। बाहर मौसम वस्तुत: खराब हो गया था। आसमान खुला था और जल्द ही वहाँ भारी हिमपात हो रहा था, जिसने ठंड बढ़ा दी थी। पृष्ठभूमि में पवित्र गंगा नदी ने जोरदार और डरावना शोरगुल शुरू कर दिया था।

हमने नंगू बाबा को पुकारना शुरू कर दिया था, जो हमें कहीं भी नजर नहीं आ रहे थे। यद्यपि हमने उनका नाम कई बार पुकारा था, लेकिन वहाँ कोई जवाब नहीं था। ठंड और डर ने हमें पूरी रात जगाए रखा था।

हम भोज बासा के लिए प्रात:काल 4 बजे के आस-पास निकले थे। जब हम दूर जा रहे थे, हमारा ध्यान किसी पर गया, जो भगवान् शिव के नाम का जप कर रहा था। वह नंगू बाबा थे, जो 'ऊँ नम: शिवाय' पंचाक्षरी मंत्र का जप तकरीबन जमी हुई ठंडी नदी में खड़े होकर कर रहे थे। हम सिर से पाँव तक ऊनी वस्त्रों में ढके हुए थे, लेकिन ठंड का कोई प्रभाव पर्वतीय संत पर होता नहीं प्रतीत हो रहा था। मैं उनकी तरफ चलकर गई और उनसे जाने की आज्ञा माँगी थी।

बाबा मुसकराए और कहा, ''ठीक है, तुम मुझे अपनी वापसी पर मिलकर जाना।''

अब हम लगातार सात घंटे चलकर 6 किलोमीटर का फासला तय कर भोज बासा 11 बजे तक पहुँचे थे। हमारा अगला ठिकाना गोमुख था, जो वहाँ से 4 किलोमीटर से कुछ अधिक था। पुन: मार्गदर्शक ने कुछ आराम करने की हमारी प्रार्थना ठुकरा दी थी। मौसम काफी अच्छा नहीं था। इसलिए हमने सोचा था कि अगले दिन ही निकलना सुरक्षित होगा। परंतु मार्गदर्शक ने हमें रुखाई से बताया था कि हम आराम नहीं कर सकते और हमें चलना ही होगा।

वह एक सेनाधिकारी की तरह 'न' नहीं सुनना चाहता था। निष्ठावान् फौजी की तरह हमारा सारा सामान एक अन्य पर्वतीय संत लाल बाबा के पास छोड़कर, जो भोज बासा के एक मंदिर के पुजारी हैं, हम गोमुख के लिए निकल पड़े थे।

लगातार चलने से हम सायं 4 बजे तक गोमुख पहुँच गए थे, जहाँ हम विस्मयकारी नजारा देखकर भौंचक्के रह गए थे। हिमनद (ग्लेशियर) मुझे इशारे करते लगे थे और मैं आगे के खतरों की परवाह किए बिना उनकी तरफ बढ़ रही थी। उस समय जब तक मार्गदर्शक और साहब ने मुझे देखा, तब तक मैं ग्लेशियर की कगार तक चलकर गई थी। मैं गंगा के उद्गम स्थल के जितना संभव हो सके, नजदीक पहुँचना चाहती थी। वास्तव में, मैं एक अजीब खिंचाव महसूस कर रही थी, जैसे कि कोई दिव्य बल मुझे चला रहा था और प्रकृति के साथ एक होने के लिए धकेल रहा था। पीछे से मैं साहब और मार्गदर्शक को चिल्लाते हुए सुन सकती थी, जो मुझे तुरंत वापस आने के लिए कह रहे थे।

केवल हम ही इस समय वहाँ आस-पास थे, क्योंकि पर्वत यात्रा का समय खत्म हो चुका था।
''कृपया वापस आ जाओ, कृपया आगे मत जाओ।'' उन्होंने मुझे पुकारा था। अब मुझे भी खतरे का अहसास हो गया था और मैं धीरे-धीरे पीछे हटने लगी थी। ज्यों ही मैंने पीछे कदम रखा, हिमनद (ग्लेशियर) जिस पर मैं खड़ी थी, टुकड़े-टुकड़े हो गया और तकरीबन 500 फीट नीचे जा गिरा था। यदि मैं एक सेकंड के लिए भी और उस हिमनद (ग्लेशियर) पर खड़ी रहती तो मेरा एक बर्फीला अंत हो जाता। मार्गदर्शक और साहब पीले पड़ गए थे।

मैंने माफी माँगी थी, ''मैं गंगा के उद्गम स्थल को जाँचना चाहती थी कि क्या वह वाकई गाय के मुँह जैसा दिखता है।'' मैंने उन्हें बताया था। गोमुख—गाय और मुख।

मौसम पुन: खराब हो गया था। भारी हिमपात आरंभ हो गया था। वहाँ शरण लेने के लिए कोई स्थान नहीं था। हम अभी भी विस्मित थे कि क्या करें? इतने में बर्फीली हवाएँ चलने लगी थीं। हमारे मार्गदर्शक, जो सारी यात्रा के दौरान असामान्य रूप से खराब मिजाज में थे, अब अपनी जान के लिए डरने लगे थे और भाग गए थे। एक बार पुन: साहब और मैं हमारा बचाव करने के लिए एकदम अकेले बच गए थे। हम हिम्मत करके भूमि से ऊपर निकले एक चट्टानी तोरण के नीचे शरण लेकर कैसे भी जीवित बच गए थे। एक घंटे या उससे अधिक, जैसे ही हिमपात थोड़ा रुका, हमने निकलने का निर्णय किया था। लेकिन समस्या यह थी कि सारा क्षेत्र अब बर्फ की एक मोटी परत से ढक चुका था। इसका मतलब था कि वापसी के रास्ते को खोजना लगभग नामुमकिन था, क्योंकि अब हमारे पदचिह्न बर्फ के नीचे दब चुके थे। एक तरफ वहाँ पर्वत थे और दूसरी तरफ निर्बाध बहती गंगा नदी थी।

सौभाग्य से हमें उस स्थान पर पहाड़ी बकरियाँ दिखी थीं। हमने उनका पीछा करने का निर्णय यह सोचकर लिया था कि वे हमें किसी जगह पर तो ले जाएँगी, संभवत: एक गाँव में। यह बहुत ही सही कदम निकला था। उनका पीछा करके हम अपने रास्ते पर वापस आ गए थे। जब तक हम भोज बासा पहुँचे, रात्रि के 11 बज चुके थे और मैं वास्तव में बुरी हालत में थी। हम लाल बाबा के स्थान पर पहुँचे, जहाँ हमने अपने मार्गदर्शक को भी पाया, जिसने हमें छोड़ दिया था। यह जानने के बाद कि मार्गदर्शक ने क्या किया था, लाल बाबा ने उसे खूब सुनाई थी। लाला बाबा ने इसके बाद उसे हमारे साथ रहने दिया और हमें भोजन परोसा था। हमने रात उसके मंदिर में गुजारी थी। अगले दिन प्रात: 6 बजे उसने हमसे कहा कि हम जा सकते हैं। हम गंगोत्री शाम को 5 बजे पहुँच गए थे। वहाँ से हमने 'टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन' के लिए टैक्सी ली थी।

अगले दिन हम बछेंद्री पाल से मिले और उन्हें अपनी गोमुख यात्रा और मैं कैसे तकरीबन मर चुकी थी, के बारे

में सूचित किया था। उस शानदार पर्वतारोही ने हमें धैर्यपूर्वक सुना था। मेरे वक्तव्य को खत्म करने के बाद उन्होंने त्रुटियाँ स्पष्ट की उदाहरण के लिए, हम एक हेडलाइट नहीं ले गए थे।

''यदि तुम उसे लेकर जातीं तो तुम अनवरत चल सकती थीं और नंगू बाबा के पास रुकना नहीं पड़ता।'' उन्होंने कहा। वो सही थीं। थक जाने से अलग बाबा की गुफा में शरण लेने का एक कारण यह था कि हम रात में कुछ भी नहीं देख सकते थे। बछेंद्री पाल ने हमें धैर्यबल के बारे में बताया था कि धैर्य एक पर्वतारोही की प्रमुख विशेषताओं में से एक होता है।

''धैर्य और योग्यता से सभी प्रकार के हालातों को अपने अनुकूल कर और मार्गदर्शक को सदैव सुनना ही सफलता की कुंजी है'', उन्होंने कहा था।

मैंने 'हाँ' में सर हिलाया था। साहब ने शाम को बछेंद्री पाल से बोला, ''मैडम, अब अरुणिमा ने आपके द्वारा उसके लिए स्थापित सभी कामों को सफलतापूर्वक पूरा कर लिया है। वह अब एवरेस्ट पर चढ़ाई के लिए तैयार है।''

परंतु बछेंद्री पाल को अभी भी संशय था। उन्होंने सुझाव दिया था कि हमें वर्ष 2014 या 2015 तक इंतजार करना चाहिए। इस पर साहब ने मजबूती से उन्हें बताया था कि हमारी निर्धारित समय-सीमा वर्ष 2013 थी। बछेंद्री पाल को अहसास हो गया था कि हम हमारी योजना पर स्थिर थे। अतएव, वह मान गई थीं। हालाँकि उन्होंने एक शर्त रखी थी। उन्होंने कहा कि एवरेस्ट से पहले मुझे लद्दाख में चीन-तिब्बत सीमा रेखा पर चमसर काँगड़ी चढ़कर खुद को साबित करना होगा।

''यदि तुम उस 21,798 फीट ऊँची पहाड़ी पर सफलता चढ़ गईं तो तुम अपने एवरेस्ट के रास्ते पर होगी।'' उन्होंने हमें कहा था।

हम मान गए थे और तुरंत ही अपनी नई मंजिल—लद्दाख के लिए निकल चुके थे। तीन दिन की यात्रा के बाद हम कार्जोक, चीन-तिब्बत सीमा से पहले आखिरी गाँव मेंस पहुँचे थे। कार्जेक से चीन सीमा मात्र 40 किलोमीटर दूर है। कार्जोक के बाद वस्तुत: 'नो मेंस लैंड' (किसी इनसान की भूमि नहीं) है। वहाँ आर्मी पोस्ट है, परंतु कोई नागरिक नहीं हैं। हमारी टीम में 21 लोग थे और आधार शिविर 18,000 फीट की ऊँचाई पर स्थित था। जब तक हम आधार शिविर पहुँचे, टोली के 19 में से 16 सदस्य बाहर हो गए थे। साहब खुद बहुत से लोगों को 20,000 फीट की ऊँचाई पर लाए थे, जिनमें से एक बछेंद्री पाल के बड़े भाई थे। हालाँकि बछेंद्री पाल के अन्य भाई राजेंद्र पाल, जो कि एक अत्यधिक दुरुस्त पर्वतारोही थे और दो अन्य भी थे। मैंने ऊपर-ऊपर चलना जारी रखा था और अंतत: शीर्ष शिखर पर पहुँच गई थी और भारत का राष्ट्रीय ध्वज लहराया था।

बछेंद्री पाल आधार शिविर तक अभी तक पहुँच गई थीं और वे हमारे लिए प्यार से आलू के परांठे बनाकर 20, 000 फीट की ऊँचाई तक लाई थीं, जहाँ हमने ऊपरी आधार शिविर स्थापित किया था। मैंने ठंडी ऊँचाई पर परांठों का आनंद लिया था; लेकिन मैं बछेंद्री पाल से नहीं मिल सकी, क्योंकि हमारे ऊपरी आधार शिविर पहुँचने तक अँधेरा हो गया था। बछेंद्री पाल को निचले आधार शिविर के लिए तब तक निकलना था। हमने रात्रि ऊपरी आधार शिविर में बिताई थी और अगले दिन बछेंद्री पाल ने निचले आधार शिविर में मेरा स्वागत किया था।

''मेरी शेरनी!'' उन्होंने कहा और मुझे अपने गले से लगा लिया था। अब हम नीचे मार्गस्थ शिविर (ट्रांजिट कैंप) में आ गए थे, जहाँ बछेंद्री पाल के बड़े भाई, जो शिखर के रास्ते में बीमार पड़ गए थे, का इलाज चल रहा था।

शाम को बछेंद्री पाल ने घोषणा की थी कि मैं एवरेस्ट के लिए अंतत: तैयार थी। उन्होंने मुझे आश्वस्त किया था कि वह टाटा स्टील के अधिकारियों से बात करेंगी और उन्हें उम्मीद थी कि मैं उनसे मेरे एवेरस्ट के स्वप्न के लिए

आर्थिक संरक्षण प्राप्त कर लूँगी। उनकी अनुमति का मेरे लिए बहुत मतलब था। वास्तव में, ऐसे समय, जब तक बछेंद्री पाल मुझे हरी झंडी नहीं दिखाएँगी, मेरे पास एवरेस्ट योजना के बारे में खुद के संदेह भी होंगे। मैं जानती थी कि उनकी एवरेस्ट की जानकारी अपूर्व थी। उनकी सलाह मेरे लिए सबसे अधिक थी, क्योंकि वह एक स्त्री थीं और शायद मेरी चिंताओं को किसी अन्य के मुकाबले बेहतर तरीके से निपटा सकती थीं।

''कभी मत भूलो कि तुम पर्वतों पर किसी भी चीज को स्वीकार नहीं कर सकती हो।'' पाल ने मुझे बताया था। मैंने उनको काफी ध्यानपूर्वक सुना था। अभी तक उनकी सलाह ने मुझे अच्छी राह दिखाई थी।

मुझे अभी भी वे दिन याद हैं, जब मेरे उत्तरकाशी में प्रशिक्षण के दौरान हमारा सामना नवंबर में जंगली बंदरों से हुआ था। हम शिविर को गरम रखने के लिए आग जलाने हेतु बाहर लकड़ियाँ एकत्रित करने गए थे। जब हम एक सूखे वृक्ष से लकड़ियाँ चुनने में व्यस्त थे, जंगली बंदरों ने हमारे शिविर पर धावा बोल दिया था। उन्होंने हमारे कपड़े फाड़ दिए थे और जिस चीज पर भी उनका हाथ पड़ा, उसे नष्ट कर दिया था।

हमारे पास कुछ भी नहीं बचा था, वास्तव में कुछ भी नहीं। परिस्थिति को और बुरा बनाने के लिए जब हमने भोजन और शरण के लिए सबसे नजदीकी गाँव की तरफ चलना शुरू किया तो भारी हिमपात आरंभ हो गया था। हम असहाय थे। हमारे पास कोई चारा नहीं था, सिवाय इसके कि बर्फबारी खत्म होने तक इंतजार करें। यह पूरी रात चलता रहा था। अंतत: हिमपात जब सुबह तक रुका था तो उस समय तक सारा क्षेत्र बर्फ से ढक चुका था। हमारे पदचिह्नों को ढूँढ़ना हमारे लिए असंभव हो चुका था। हम रास्ता भूलकर जंगलों में भटक गए थे और आखिरकार हम एक गुफा में शरण लेने को मजबूर हुए थे। भूखे और प्यासे हमने गुफा में पानी के कुछ स्त्रोत खोज निकाले थे। उसके उद्‌गम को खोज निकाला था, जहाँ से गुफा के अंदर पानी की छोटी बूँदें टपक रही थीं। हमने तकरीबन आधे घंटे में 200 मिलीलीटर पानी एकत्रित कर लिया था। हमने कुछ कठोर बर्फ भी पिघला ली थी, जो हमें अंदर मिली थी।

परंतु हमें कुछ खाने के लिए चाहिए था। उस गुफा में ठहरे हुए हम विचारों की कमी से जूझ रहे थे, जब मुझे अचानक याद आया कि बछेंद्री पाल ने सिखाया था कि यदि ऐसी किसी स्थिति में फँस जाए तो क्या करना चाहिए! उन्होंने मुझे सिखाया था कि कैसे पर्वतीय पौधों को पहचानते हैं, जो खाद्य होते थे और ऊर्जा भी देते थे। मैंने गुफा में ऐसे पौधों को तलाशना आरंभ कर दिया और जल्द ही कुछ को चिह्नित कर लिया था। यहाँ इस बात पर बल देना महत्त्वपूर्ण है कि यदि किसी को ऐसे पौधों की सही जानकारी न हो तो उसे किसी भी तरीके के अनुमान लगाने से बचना चाहिए। एक गलत चुनाव अच्छे की बजाय काफी बुरा कर सकता है।

पौधा, जो हमने खाया था, उसे 'लिंगड़ी' कहते हैं। अपनी किशोरावस्था में इसके चमत्कारी लक्षण होते हैं। लेकिन जब यह विकसित हो जाता है तो यह जहरीला बन जाता है और तब इसे मृत घास यानी 'बिच्छू घास' कहते हैं। हिमालय 'यरसागुंबा' (Ophiocordyceps sinensis) का भी घर है, जो कि हिमालयन चमगादड़ी कीट झल्ली का एक प्रकार होता है, जिस पर फंगस के द्‌वारा आक्रमण किया जाता है और जो अपने चिकित्सीय लक्षणों के कारण मशहूर होता है। साधारणतया यह हिमालयी क्षेत्रों में 3,500 मीटर ऊपर मिलता है और भारत ही नहीं, बल्कि चीन जैसे देशों में इसे एक शक्तिशाली कामोत्तेजक माना जाता है, जहाँ इसकी काफी माँग होती है। बहुत से वार्षिक तौर पर इन पहाड़ियों में एक जादुई झिल्ली जैसे दिखनेवाले पौधे की खोज में आते हैं, जिसका 1 किलोग्राम भी अंतरराष्ट्रीय बाजार में अच्छे दाम ला सकता है।

इसी बीच तीन दिनों तक गुफा में 'लिंगड़ी' पर जिंदा रहने के बाद हमने अंतत: निकटतम गाँव का अपना रास्ता खोज लिया था, जहाँ एक दयालु ग्रामीण ने हमें शरण दी थी। उसके पास मुश्किल से अपनी भूख मिटाने के लिए

पर्याप्त अनाज था, फिर भी उसने हमें चावल दिए थे। हमने वहाँ चावल नमक के साथ खाए थे। चौथे दिन हम 15,000 फीट की ऊँचाई पर स्थित आधार शिविर पर गए थे। एक अन्य अवसर पर भी, जब हम एक आधार शिविर जाने के लिए एक अन्य 16,000 फीट की ऊँचाई पर स्थित दरवा पास से जा रहे थे, तब हमारा सामना भारी बर्फबारी से हुआ था। सारा रास्ता बर्फ से ढका हुआ था। वह फरवरी का महीना था। साहब और मैं उस रास्ते पर एक रसोइए और अन्नू मैडम के साथ जा रहे थे। अन्नू मैडम मुझे लगातार पहाड़ों की दिशा में रहने के लिए कह रही थीं, न कि खड़ी चढ़ाई की तरफ।

हालाँकि एक स्थान पर मैंने उनकी सलाह को नजरअंदाज कर दिया था और खड़ी चढ़ाई की तरफ चलना शुरू कर दिया था, जहाँ मैं फिसल गई थी और अपना संतुलन खो दिया था। मुझे याद है कि बछेंद्री पाल ने एक बार मुझे हर चीज के लिए भगवान् को धन्यवाद कहने के लिए कहा था। सही मायने में, यदि मुझे सर्वशक्तिमान को विकलांग बनाने के लिए धन्यवाद कहना था तो वह यह पल था, जब मेरा कृत्रिम पैर नरम बर्फ में फँस गया था। उसने मुझे बचाया, क्योंकि उससे मेरा नीचे खिसकना रुक गया था। अन्नू मैडम मेरे सामने थीं और साहब एवं एक कुली, जो एक स्थान से लौट रहा था, हमारे साथ शामिल हो गए थे, पीछे थे। कुली ने मुझे मेरे बालों से पकड़ने के लिए कुदाक लगाई, जबकि अन्नू मैडम ने मेरे पैर पकड़ लिये थे। साहब ने मेरे हाथ थामे थे; लेकिन जब उन्होंने मुझे खींचा, वह भी फिसलने लगे थे।

जैसे-तैसे मैं बच गई और मैंने ढंग से व्यवहार किया था। मैं जानती थी कि मैं अपने अंत के कितने नजदीक थी। मेरे लिए तो कुली भगवान् का भेजा हुआ बंदा था, जिसकी मदद के बिना मैं जीवित नहीं रह सकती थी।

इसी बीच मैं पुन: उत्तरकाशी अपना प्रशिक्षण जारी रखने हेतु लौट आई थी। मैं यह इसलिए कर रही थी कि वहाँ मेरी योग्यता के स्तर में कोई कमी न रह जाए। मैंने दिसंबर-जनवरी में भी प्रशिक्षण लेना और पर्वतों में अभ्यास करना जारी रखा, जब 'टाटा स्टील एडवेंचर' बंद हो रहा था। हमने पूरे फरवरी और 15 मार्च, 2013 तक प्रशिक्षण लिया था, जिसके बाद मुझे बछेंद्री पाल से एक कॉल आई थी, जो अब जमशेदपुर में थीं।

उन्होंने मुझे दिल्ली में 25 मार्च तक पहुँचने के लिए कहा था। मैं जानती थी कि बड़ा क्षण आ गया था, इसलिए तुरंत उत्तराखंड की पहाड़ियों को छोड़कर लखनऊ के लिए चल पड़ी थी, जहाँ मैं अपने रिश्तेदारों से मिली और एक सप्ताह रुकने के बाद दिल्ली के लिए रवाना हो गई थी। मैं जम्मू में वैष्णो देवी के पवित्र मंदिर में चार घंटे में सीढ़ियाँ चढ़कर पहुँची थी। सी.आर.पी.एफ., जो मंदिर की रक्षा करती है, ने मेरे लिए एक विशेष दर्शन का प्रबंध किया था। मैंने प्रार्थना की थी कि यदि मेरी एवरेस्ट यात्रा सफल हुई तो मैं पुन: आऊँगी। देवी का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद मैंने वापसी के लिए भी सीढ़ियाँ ली थीं।

वहाँ से मैंने लखनऊ के लिए एक ट्रेन ली थी। राज्य की राजधानी पहुँचने के बाद हमने राष्ट्रीय राजधानी के लिए रवाना होने में कोई समय खराब नहीं किया था, जहाँ मुझे राष्ट्र को एक जवाब देना था कि मैं इसे कर पाने में सक्षम होऊँगी।

दिल्ली के प्रेस क्लब में मीडिया के लोग हमारा इंतजार कर रहे थे।

मैं मीडिया की अभ्यस्त थी, मगर यह देसी और विदेशी पत्रकारों की भीड़ जो सामन्यत: प्रतिष्ठित और शीर्ष राजनेताओं के लिए जुटी हुई जैसी लगती थी। चेहरे पर एक बेचैन मुसकराहट लिये और नुकीला स्पर्श महसूस करते हुए, मैंने सभागृह के अंदर मेरी निकटतम दो औरतें जो (मेरी माँ और मेरी बड़ी बहन) जैसी थी। मेरे पास उनको वहाँ उड़ाकर लाने के लिए पर्याप्त धनराशि नहीं थी और एक हवाई यात्रा पर उनकी अल्प बचत उड़ाना उनके लिए अकल्पनीय होता।

मुझे अपना एवरेस्ट अभियान प्रेस मुलाकात के बाद ही शुरू करना होगा—कौन जानता था कि मैं उन्हें दुबारा देख भी पाऊँगी या नहीं! बछेंद्री पाल शायद उस भावनात्मक उथल-पुथल को समझ सकती थी, जिससे मैं गुजर रही थी। इसलिए वह सभी माध्यमों से मेरे लिए अधिक सहायक हो रही थी और मेरा उत्साहवर्धन करने के साथ ही प्रेरित भी कर रही थी। अपनी क्षमता से अधिक मुझे प्रशिक्षण तथा पर्वतों के विभिन्न मिजाजों का संक्षिप्त विवरण देकर, उन्होंने मुझे पुन: अति आत्मविश्वास का जोखिम लेने से सावधान किया।

''एक छोटी सी गलती भी प्राणघातक सिद्ध हो सकती है। वहाँ कोई दूसरा मौका नहीं मिलता है।'' उन्होंने कहा था।

मेरे परिवार का प्रतिनिधित्व मेरा भाई कर रहा था, जो लखनऊ से गुंजिया, बिस्कुट और लड्डू लेकर आया था। क्योंकि मेरी माँ और बहन नहीं आ सकती थीं। अत: उन्होंने सोचा था कि घर का बना खाना मेरा उत्साहवर्धन करेगा। एक लड़की के लिए ये सभी चीजें बहुत महत्त्व रखती थीं। मेरे भाई ने अपनी इस भावनात्मक चेष्टा से मुझे जीत लिया था।

यह मुझे विस्मित करता था कि क्यों रसोई को औरतों के साथ जोड़ा गया था! आदमी भी अच्छा खाना बना सकते हैं। यहाँ बहुत से मशहूर पुरुष शेफ हैं और मैं सोचती हूँ कि यह पुरुष रूढ़िवादिता से पीछा छुड़ाने का सही समय था। यहाँ बहुत से पति हैं, जो अपनी पत्नियों और परिवार के लिए खाना बनाना पसंद करेंगे; लेकिन पुराने दकियानूसी विचार के कारण नहीं करते हैं, जैसे कि औरतों से खाना बनाने, जबकि आदमियों से कमाने की अपेक्षा की जाती है। जब तक हम अपनी मानसिकता नहीं बदलेंगे, तब तक नारी सशक्तीकरण की बातें, जो हम हर समय सुनते रहते हैं, दिखावा ही रहेंगी।

मेरी माँ और बहन यहाँ उपस्थित होने में भले ही समर्थ न हों, लेकिन मेरे लिए भाग्यवश उन्होंने उस दिन प्रेस क्लब में मेरे अन्य मित्र आए थे। वहाँ बाबा जगदेव प्रसाद थे (लखनऊ में बंथारा के रहनेवाले स्थानीय, जो मेरे लिए दादा के जैसे थे), राज किशोर (एक दयालु बैंकर, जो मेरे भाई जैसे थे)—दोनों ने ही मुझे अतिरिक्त कृत्रिम अंग लेने हेतु ब्याज-मुक्त ऋण दिया था—और हाँ, हर क्षण विश्वसनीय बने रहनेवाले साहब भी वहाँ थे। मेरी बहन कितनी धैर्यवान् रही होंगी कि उन्होंने प्रशिक्षण के 14 महीनों के लिए साहब को भेज दिया था। यदि ऐसा न होता तो मैं यहाँ तक पहुँच पाने में समर्थ न हो पाती। ये तीन बेहतरीन व्यक्ति और राहुल मेरे साथ काठमांडू आने वाले थे, जहाँ से मैं अपनी चढ़ाई शुरू करूँगी।

अजनबियों की समुद्र जैसी भीड़ में उनके चेहरे देखकर मुझे उन सभी व्यक्तियों की याद आ गई थी, जिन्होंने इतनी दूर आने में मेरी मदद की थी। वहाँ स्वामी निखिलेश्वरानंदजी थे, स्वामी विवेकानंद मेमोरियल हॉल, वडोदरा के सचिव थे, जिन्होंने मुझे रामकृष्ण परमहंस और माँ शारदा देवी की तसवीरें दी थीं और मुझे विश्वास रखने के लिए कहा था।

''तुम उनसे शक्ति प्राप्त करोगी, यदि तुम उनमें और खुद में विश्वास रखोगी।'' उन्होंने मुझसे कहा था, जब उन्हें मेरी एवरेस्ट योजना के बारे में पता चला था। उन्होंने मुझे दिल्ली प्रेस कॉन्फ्रेंस से कुछ पहले ही बुलाया था और मदद की पेशकश की थी, ''यदि आपको कुछ चाहिए तो कृपया मुझे बताएँ।'' उन्होंने प्रस्ताव देते हुए कहा था। इस समय मैंने उनके साथ अपनी सबसे बड़ी चिंता साझा की थी।

राज किशोर और अन्य से एक सुलभ ऋण लेने के बाद भी एक अतिरिक्त कृत्रिम अंग लेने के लिए मेरे पास तकरीबन 70,000 रुपए कम पड़ रहे थे। स्वामीजी ने मुझसे मदद का वायदा किया और उन्होंने तुरंत सारा धन एकत्रित कर प्रदान कर दिया था। वे इतने तत्पर थे कि जब तक मैं प्रेस से मिलने पहुँचती, मेरे पास एक अतिरिक्त

कृत्रिम अंग था।

वहाँ और भी थे, दो चिकित्सक भाई—अमेरिका के डॉ. राकेश श्रीवास्तव और दिल्ली के डॉ. शैलेश श्रीवास्तव। बचपन में डॉ. राकेश को डिब्बे में अपना माल बेचनेवाले विक्रेता ने चलती ट्रेन से फेंक दिया था। एक ट्रेन उनके पैर के ऊपर से ठीक उसी तरह गुजर गई थी, जैसे मेरे पैर के ऊपर से गुजरी थी। इस घटना ने उसे अंदर तक तोड़ दिया था। बजाय खत्म होने के उसने अधिक मेहनत की और जैसे भाग्य ने लिखा होगा, वह कृत्रिम अंगों के एक विशेषीकृत चिकित्सक बन गए थे।

उन्हें कैलिफोर्निया में एक प्रतिष्ठित नौकरी मिल गई थी और अपने दिल्ली स्थित चिकित्सक भाई की मदद से उन्होंने भारत में जरूरतमंदों को, दोनों भाइयों द्वारा स्थापित कंपनी 'इन्नोवेटिव' के जरिए, सस्ते और हलके वजनवाले कृत्रिम अंग प्रदान करने एक नई तकनीक विकसित की थी। डॉ. राकेश को मेरे प्रकरण के बारे में इंटरनेट पर एक रिपोर्ट पढ़कर मालूम पड़ा था और उन्होंने तुरंत डॉ. शैलेश को मुझसे संपर्क करने के लिए कहा था। वह मुझसे एम्स में कृत्रिम अंग का प्रस्ताव लेकर मिले थे। उस क्षण बहुत सी बड़ी कंपनियाँ भी मुझे एक अंग दान में देने के लिए उत्सुक थीं। हालाँकि एम्स के डॉक्टरों और मेरे परिवार ने इन दो अद्‌भुत डॉक्टरों के द्वारा प्रस्तावित अंग लेने का फैसला किया था। अपने चारों तरफ एकत्र परिचित चेहरों को देखकर और उनकी दयालुता याद कर मैं द्रवित और कृतज्ञ हो रही थी। कार्यक्रम में भावनाओं का रंग उमड़ पड़ा था। मुझे अच्छे से याद नहीं है कि मीडिया के प्रश्न किस तरह के थे! वहाँ पर्वत, उसकी चुनौतियों, मेरी विकलांगता और इसी तरह के बहुत से प्रश्न थे। मीडिया के कुछ लोग जानना चाहते थे कि क्या यह लोक-प्रसिद्धि पाने का प्रयास था? उनके पास दोषदर्शी होने का पूर्ण अधिकार था। किसी को नहीं लगता था कि मेरे पास एक अवसर था। मुझे याद है कि मैंने सभी प्रश्नों का उपयुक्त जवाब दिया था। आखिरकार, कैमरों का सामना विश्वासपूर्वक करना मुझसे ही अपेक्षित था। एक लड़की, जिसे एवरेस्ट की चढ़ाई चढ़नी हो, उससे बहादुर होने की उम्मीद रखी जाती है। मैं हमेशा से ही मानती थी कि यदि आपको रोना है तो आप ऐसा अकेले में ही करें, सबके सामने नहीं। दुनिया एक विजेता को देखना चाहती है, हारे हुए और टूट जानेवाले लोगों की हँसी उड़ाती है।

जब एक पत्रकार ने मुझसे पूछा कि मैं कैसा महसूस कर रही हूँ, तो मैंने उसे एक मुसकराहट के साथ कहा था कि मैं बहुत अच्छा महसूस कर रही हूँ। संकल्प के साथ ही लोग कठोरतम परीक्षाओं को सफलता से पार कर पाते हैं। लेकिन सारा समय मेरे पेट में तितलियाँ उड़ रही थीं, मतलब भूख लगी थी। मैं बेचैन, भयभीत और तनावग्रस्त थी। जैसे ही मैं ये बड़े बयान दे रही थी, मैं जानती थी कि पर्वतीय क्रिया—मान लो, जिसे मैं पार कर पाऊँगी—ही मेरे आलोचकों के लिए अंततः मेरी सबसे विश्वसनीय प्रतिक्रिया होगी। कार्यक्रम के बाद मुझे कपड़े और अन्य उपकरणों के साथ अन्य वस्तुओं की खरीदारी करनी थी, जिनकी मुझे बर्फीली ऊँचाई पर जरूरत पड़ेगी। मेरे पास भगवान् शंकर का एक त्रिशूल भी था, जिसे हमने अपने एम्स से निकलने के एक दिन बाद खरीदा था। दिल्ली में मैंने एक लाल कपड़ा खरीदा था, जिसमें मैंने उस त्रिशूल को लपेटा था। सांसारिक से लेकर आध्यात्मिक तक सभी सामान खरीदने के बाद मैं एवरेस्ट पर जाने के लिए तैयार थी।एयरपोर्ट के अपने रास्ते पर मैंने आकाश में एक हवाई जहाज देखा था। मैं जहाज में इससे पहले सिर्फ एक ही बार बैठी थी; लेकिन वह एक एयर एंबुलेंस थी, जो मुझे लखनऊ से उड़ाकर एम्स (दिल्ली) ले आई थी।

उस दृश्य ने मुझे सीधे मेरे बचपन में पहुँचा दिया था, जब मैं अंबेडकर नगर में अपने घर के ऊपर उड़ते हुए हवाई जहाजों को देखकर रोमांचित हो जाती थी। जब भी मैं उन्हें देखती थी, विशेषतया रात्रि में, उत्तेजित होकर यह कहते हुए तालियाँ बजाती थी, ''चंदा मामा उड़ा जा रहा है।'' वह इसलिए, क्योंकि मैं मानती थी कि हवाई जहाजों

की टिमटिमाती हुई रोशनी खुद चंद्रमा थे।

मैं अब यह भी जानती थी कि जो हवाई जहाज, जो सिर के ऊपर से एकदम शोरगुल कर अपने पीछे धुएँ की एक लकीर छोड़ते हैं, वे लड़ाकू विमान होते हैं; जबकि जो कम शोर कर मनोहर ढंग से चलते हैं, वे यात्री विमान होते हैं। पीछे तब बचपन में, सभी जहाज एक जैसे दिखते थे। उन्हें देखकर मुझे इतना मजा आता था, लेकिन मैंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि मैं एक दिन इसमें यात्रा करूँगी। मेरे लिए आकाश में जहाज का होना मानव की उस प्रज्वलित इच्छा का प्रतीक होना है, जिससे किसी के सपनों को पंख लग जाते हैं।

अब से कुछ घंटों के बाद मैं एक अन्य जहाज पर काठमांडू के लिए जा रही थी। यह मेरे पेशे को परिभाषित करनेवाली उड़ान होगी, जो मुझे या तो जमीन पर ला पटकेगी या ऊँची उड़ान भरवाएगी।

जैसे ही मेरे विमान ने उड़ान भरी, मैं फिर से अपने बचपन की अभिव्यक्ति पुनः याद करने लगी थी, 'चंद्रमा उड़ा जा रहा है...'।

मैं सिर्फ खिड़की से झाँकना चाहती थी कि धरती ऊपर से कैसे छोटी सी दिखती है। दुर्भाग्यवश मैं बीच की सीट पर बैठी थी और खिड़की के पास एक विदेशी व्यक्ति बैठा हुआ था। लेकिन मैं खुद को समय-समय पर खिड़की की तरफ झुककर नीचे धरती का पूरा दृश्य देखने से नहीं रोक पा रही थी। ढाई घंटे के बाद हम नेपाल की राजधानी काठमांडू के ऊपर उड़ रहे थे। जब विमान नीचे उतर रहा था, एक समय के लिए तो मैं बहुत घबरा गई थी। लेकिन शुक्र है कि विमान कर्मियों का दल और बछेंद्री पाल, जो मेरे ठीक पीछे बैठी थीं, वहाँ मुझे शांत करने के लिए थे।

नीचे उतरने के बाद की काररवाइयाँ पूरी करने के बाद हम एयरपोर्ट से निकले तो 'एशियन ट्रेकिंग एजेंसी' ने हमारा नेपाली तरीके से स्वागत किया, जिसे टाटा ने मेरी देखभाल के लिए भाड़े पर रखा था।

वे मुझे 'एशियन ट्रेकिंग' के कार्यालय गाड़ी में ले गए थे, जहाँ उन्होंने मुझसे बीमा का एक फॉर्म भरवाया था, जो एजेंसी के द्वारा जानेवाले प्रत्येक पर्वतारोही को भरना पड़ता था तथा मुझे नियमों के बारे में विस्तार से बताया था।

मुझसे शिखर पर चढ़ाई करने की जिद नहीं करने के लिए कहा गया था, यदि मार्गदर्शक या शेरपा मौसम या अन्य हालात के अनुकूल नहीं होने के कारण ऐसा फैसला करें। संदेश साफ था कि वहाँ ऊपर शेरपा ही सर्वेसर्वा हैं। वह जिन फैसलों को लेता है, उसका आरोहियों को पालन करना पड़ता है। तब मुझे मेरे होनेवाले प्रशासक छोटे कदवाले मजबूत शेरपा नीमा कांचा से मिलवाया गया, जो शिखर पर चढ़ने और वापस आने में मेरे साथ होंगे। लोगों को पर्वत की उपस्थिति महसूस कराने के लिए वहाँ कार्यालय में एक कृत्रिम पर्वत की दीवार थी। मैंने कई लोगों को उस पर चढ़ने की कोशिश करते देखा था। अन्य लोगों को चढ़ता देख मैंने भी उस पर चढ़ने की कोशिश करने का निर्णय लिया था।

मुझे चढ़ता देख मेरा भाई राहुल, जिसने कोई औपचारिक प्रशिक्षण नहीं लिया था, ने भी उस पर चढ़ने का फैसला किया था। जैसे ही वह दीवार पर चढ़ने लगा, प्रत्येक, जो वहाँ एकत्र थे, ने तालियाँ बजाई थीं। मुझे अच्छा लगा था।

राहुल ने बाद में बताया था कि उसने मुझसे प्रेरणा ली थी।

''मैं तुम्हारा भाई हूँ। मेरी असफलता तुम्हें शर्मिंदा करेगी, क्योंकि तुम अत्यधिक कठिनाइयों को पार कर सफल हुई हो। इसलिए मुझे जीतना ही होगा।'' उसने कहा था।

मैं धीरे-धीरे समझने लगी थी कि हर किसी को मुझसे बड़ी उम्मीदें हैं। लोगों ने मुझमें विश्वास करना आरंभ कर दिया था। यह अद्भुत और डरावना दोनों ही था। उन सभी की आशाओं के मेरे साथ जुड़ने के साथ अब यहाँ

असफलता की कोई जगह नहीं थी।

एंग तेशरिंग शेरपा, एशियन ट्रेकिंग एजेंसी के अध्यक्ष मुझसे मिलने के लिए पहले ही पहुँच चुके थे। वह एक खुशमिजाज इनसान थे, जिन्होंने मेरे छायाचित्र (फोटो) खींचे थे और निकलने से पहले मुझे शुभकामनाएँ दी थीं। इसके बाद हम काठमांडू के बाजारों में से होते हुए होटल के लिए निकले थे। साहस एवं रोमांच के शौकीनों के लिए नेपाल की राजधानी एक स्वर्ग थी। वहाँ बीयर बार, रेस्तराँ और मसाज पार्लर उनके लिए थे, जो खर्चा कर सकते थे। काठमांडू के लगभग प्रत्येक घर में ऐसे बार या पार्लर थे। मैंने प्रतिष्ठित दुकानों के बाहर सुंदर रंगीन शराब की बोतलें देखी थीं। मुझे मेरे पुरुष साथियों ने बताया था कि इन बोतलों की कीमत इतनी है कि वह आम आदमी की पहुँच से बाहर है। हम तब अपने होटल के लिए बढ़ चले थे, जहाँ थोड़ा आराम करने के बाद हम काठमांडू की भीड़ भरी गलियों में पर्वत की बर्फीली चोटियों में काम आनेवाले उपकरणों की खोज में निकले थे। काठमांडू के इन बाजारों में असली को नकली से भिन्न करने के लिए आपके पास एक पैनी नजर होनी चाहिए—खासकर तब, जब आप उस सामान को खोज रहे हों, जो पर्वतारोहियों को चाहिए होते हैं।

यहाँ पर दुकानें असली जैसे दिखनेवाले नकली सामानों से भरी हुई थीं। एवरेस्ट पर आप खतरा नहीं ले सकते हैं। पूरे दिन हमें यहाँ-वहाँ उपलब्ध सामान को आँकने, उसका मूल्य तौलने और उसकी प्रामाणिकता जाँचने के लिए चलना पड़ा था। बछेंद्री पाल, एक विशेषज्ञ पर्वतारोही होने के नाते, किसी भी अपरीक्षित सामान पर भरोसा नहीं करना चाहती थीं। उन्होंने सुनिश्चित किया था कि हम सबसे बढ़िया उपकरण ही लें। वहाँ बहुत से ऐसे अवसर थे, जब हमने सोचा कि हमें सस्ते स्थानीय सामान से काम चला लेना चाहिए; परंतु पाल ऐसे अवसरों पर एकदम सख्त थीं। उन्होंने हमें बताया था कि पर्वतों पर अपरीक्षित सामान पर निर्भर होने की सलाह नहीं दी जाती; क्योंकि एक छोटी सी गलती भी प्राणघातक सिद्ध होगी। हमने जैकेट, अंतर्वस्त्र, चाकू, हेडलाइटें (माथे पर लगनेवाली टॉर्चें) विशेष पर्वतारोही जूते, क्रैंपोन (जूते के तले पर लगनेवाला एक उपकरण, जो बर्फ में पकड़ बनाए रखता है), बर्फ काटने की कुल्हाड़ियाँ, रस्सी और बहुत सारा अन्य सामान लिया था। हमने कुछ खाद्य पदार्थ भी बाँधा था। पर्वतों पर सबकुछ नहीं खाया जा सकता, इसलिए हमने भुनी हुई मूँगफलियाँ, मैगी और अन्य सूखा सामान लिया था, जो उस ऊँचाई पर अधिक समय तक ठीक रह सकता था।

काठमांडू में आपको रोटियाँ आसानी से नहीं मिलती हैं। शाकाहारी भोजन यहाँ मिलना मुश्किल था और बाबा जगदेव प्रसाद, जो हमारे साथ आए थे, शुद्ध शाकाहारी थे। काफी मुश्किल के बाद हमें एक सरदारजी के द्वारा चलाया जा रहा एक छोटा होटल मिला, जहाँ बाबा ने दाल और चपातियाँ खाई थीं। उनकी कीमत बहुत अधिक थी। लेकिन हमारे पास और कोई चारा नहीं था। बाबा ने इसे समझ लिया था और अपने यहाँ निवास के बाकी समय के लिए—वे चार दिन रुके थे—केवल दिन में दो बार खाना खाते थे और बाकी समय बिस्कुट, नमकीन एवं चना-चबैना पर ही काम चलाया था। एक दिन साहब, बाबा, राज किशोर और राहुल काठमांडू की गलियों में चहलकदमी कर रहे थे, जब बहुत छोटे क्लबों का एक प्रतिनिधि कहीं से आया और बाबा पर एक मसाज लेने के लिए दबाव डालने लगा था। उसने दावा किया था कि उसके क्लब में मालिश करनेवाले माहिर हैं, जो बाबा को फिर से युवा बना देंगे।

''हम आपको मुलायम हाथों से मसाज देंगे।'' उस जिंदगी से पूर्णतया अपरिचित बाबा के मन में उसे जानने की अभिलाषा जागी और वे एक बच्चे की तरह जिद करने लग गए थे कि वे इसे आजमाना चाहते थे।
''मैं एक मसाज करवाना चाहता हूँ। वे वायदा कर रहे हैं कि यह मेरी उम्र कम करने में मदद करेगा।''

उनके गाँव में सिर्फ नाई मसाज देता था, वे भी बाल कटवाने के बाद। उन्होंने अब तक ऐसी बहुत सी मसाजें ली थीं, लेकिन किसी से भी जवान नहीं बने थे। स्वाभाविक रूप से वो बहुत ही अधिक उत्साहित थे। आखिरकार साहब ने बताया कि वे उन्हें एक सवारी के लिए ले जा रहे थे और उनका सारा पैसा गँवा दिया जाएगा। बाबा जल्दबाजी में वापस आए और खुद को बचाया। हम सभी उनके भोलेपन पर हँस पड़े थे।

काठमांडू में मैं दो औरतों से मिली थी, जिन्हें मैंने बहुत पसंद किया था। चिनमोई मुखर्जी, कोलकाता से बछेंद्री पाल की मित्र, जो काठमांडू उनके निमंत्रण पर आई थीं। श्रीमती मुखर्जी एक स्वयं-स्वीकारनेवाली पर्वत-प्रेमी थीं। ''जब आप किसी पर्वत की मुहिम करने जाओ तो कृपया मुझे हर समय अपने साथ लेकर जाया करो।'' उसने बछेंद्री पाल से कहा था।

एक अच्छी प्रेरक भी थीं। श्रीमती मुखर्जी अपने साथ कुछ गंगाजल भी लेकर आई थीं, ताकि वे प्रसिद्ध पशुपतिनाथ मंदिर में पूजा कर सकें। उनका भगवान् में बहुत विश्वास था और इसलिए वे पुरोहिती विधि के साथ पूजा कर पाने में सक्षम थीं।
''प्रत्येक क्षण जब तुम किसी समस्या में पड़ जाओ तो कृपया सर्वशक्तिमान को याद अवश्य करना। पर्वत से, वे बहुत पास होते हैं।''

मैं मुसकरा दी थी। श्रीमती मुखर्जी वास्तव में एक दयालु औरत थीं। उनके पास एक स्पर्शनीय मुसकराहट थी। एक शाम एलिजाबेथ हॉवले नामक, तकरीबन 70 साल की एक बूढ़ी औरत, कुछ पत्रकारों के समूह के साथ आई थीं। वे एवरेस्ट के बारे में चलती-फिरती विश्वकोश (इनसाइक्लोपीडिया) थीं। वे काठमांडू में ही रहती थीं तथा हमेशा उनसे मिलना और उनका साक्षात्कार लेना ध्यान में रखती थीं, जो उस महान् पर्वतीय चोटी पर चढ़ने के लिए निकलते थे।

हमें बताया कि यदि मैं अपने ध्येय में सफल होती हूँ तो मैं उस शक्तिमान पर्वत को जीतनेवाली पहली विकलांग महिला होऊँगी। हमने उनके साथ रात्रि भोजन पर एक अच्छी बातचीत की थी, जो कि वे विदेशी पत्रकारों को अनुवाद कर बता रही थीं। जल्द ही मेरा रवानगी का समय आ गया था। एक शेरपा को मेरे साथ एवरेस्ट आधार शिविर तक जाने के लिए कहा गया था, जहाँ से मेरे पूर्णकालिक शेरपा नीमा कांचा आगे के लिए कार्य-भार ग्रहण करेंगे। मुझे उन लोगों को भी अलविदा कहना था, जो मुझे विदा करने आए थे।

वहाँ साहब थे, जिन्हें कोई प्रायोजक नहीं मिला था और इसलिए वे मेरे साथ नहीं आ सकते थे; जबकि मैं चाहती थी कि वे मेरे साथ आएँ। वहाँ श्रीमती मुखर्जी थीं, जिनके साथ मैं बहुत अच्छे से जुड़ गई थी। लेकिन उनके पास न तो धन था और न ही उनकी पर्वत यात्रा के लिए पैसा लगाने हेतु प्रायोजक। मेरे भाई राहुल और राज किशोर की भी आर्थिक मजबूरियाँ थीं। बाबा के पास धन था, मगर वे उम्र और सेहत से मजबूर थे। इस सबका यही मतलब था कि मैं अकेले ही पर्वत पर जा रही थी। जैसे ही मैं 52 दिन के कठिन अभियान पर गई, मेरे साथ उन सबकी शुभकामनाएँ थीं—सर्वशक्तिमान में मेरा विश्वास, साहब के उत्साहवर्धक शब्द, बाबा का आशीर्वाद, श्रीमती मुखर्जी की सलाह, राहुल की भ्रातृ-सुलभ झप्पी, मेरी माँ की यादें और बड़ी बहन के साथ मेरा मजबूत रिश्ता।

मैंने अपने परिवार को अलविदा कहा और काठमांडू हवाई अड्डे के अंदर चली गई थी और वहाँ दो घंटे साथी आरोहियों सुसेन महतो एवं हेमंत गुप्ता के साथ बिताए थे। महतो 'टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन' में एक प्रशिक्षक

थे, जबकि श्री गुप्ता आई.आई.टी. मुंबई के पूर्व छात्र और टाटा स्टील के प्रबंधक थे। उड़ान देर से थी और हम तीनों ने लुकला के रास्ते और कैसे पर्वतों पर जाते हुए रास्ते में बहुत से विमान दुर्घटनाग्रस्त हो जाते हैं, के बारे में बातचीत करते हुए समय बिताया था। मैं लगातार उड़ान की स्थिति डिस्प्ले बोर्ड पर देख रही थी। दो घंटे से भी ज्यादा उड़ान में देरी होने के बाद, डिस्प्ले बोर्ड ने उस दिन के लिए अंतिम परिवर्तन दरशाया था—रद्द (कैंसल्ड)।

यह जैसे ही हुआ, सिर्फ हमारी उड़ान ही रद्द नहीं हुई थी। उस दिन के लिए बाकी सभी उड़ानें भी रद्द हो गई थीं और मैं यह अधिलाभ समय अपने परिवार के साथ बिताना चाहती थी। जिस समय तक मैं उन्हें कॉल करती, वे सड़क के रास्ते भारत के लिए निकल चुके थे। चूँकि वे कुछ फासला तय कर चुके थे, मैंने उन्हें वापस नहीं बुलाने का निश्चय किया था।

एकदम अकेला महसूस करते हुए मैं होटल पहुँची, जहाँ मैं बछेंद्री पाल को पाकर काफी आश्चर्यचकित थी। उन्हें अगली सुबह दिल्ली के लिए हवाई जहाज द्वारा निकलना था। लुकला के लिए निकलने से पहले इस घटना ने मुझे उनका महत्त्वपूर्ण साथ पाने में सक्षम बना दिया था। वे भी मुझे देखकर प्रसन्न हुईं और कहा कि इस देरी ने तुम्हें खुद को और मजबूत करने का अतिरिक्त समय दे दिया है। वे मेरी शारीरिक शक्ति से ज्यादा मेरी मानसिक शक्ति की बात कर रही थीं। शारीरिक पहलू का महत्त्व था, लेकिन यह सारा निचोड़ मानसिक योग्यता का होता है। बछेंद्री पाल ने पुन: धैर्य की महत्ता, पर्वतों में जल्दबाजी नहीं करने पर जोर दिया था। वह उनकी बुद्धिमत्ता के मोती थे और मैंने बिस्तर पर जाने से पहले सब एकत्रित कर लिये थे।

एक बेचैनी भरी नींद के बाद! मैं अगली सुबह हवाई अड्डे जाने के लिए तैयार थी। मेरे जाने से पहले लगभग बछेंद्री पाल ने मुझे गले लगाया था—''जाओ और एवरेस्ट विजय करो!'' उन्होंने कहा था।

वहाँ नवोदित पर्वतारोहियों के गुम होने की अंतहीन घटनाएँ हुई थीं। उनमें से सैकड़ों मारे गए थे या पर्वत की बर्फानी चुनौतियों का सामना नहीं कर पाए थे; जैसे कि ऊँचाई से डर या बीमारी, हिम-स्खलन, चट्टानों का खिसकना, बर्फ के तूफान, गिरना या थककर टूट जाना। मुझे बताया गया था कि कैसे मृत शरीरों को बर्फ में दफनाया गया था, खासकर मृत क्षेत्र (डेड जोन) में, जो कि समुद्र तल से 26,000 फीट से भी अधिक ऊपर स्थित बताया जाता है। वहाँ एवरेस्ट पर बहुत सी त्रासदियाँ हुई थी। मई 1996 में एक पर्वतीय तूफान ने 8 जिंदगियाँ लील ली थीं, जिसे एवरेस्ट पर काफी लंबे समय के बाद हुई एक बड़ी त्रासदी माना गया था। वर्ष 2009-10 में लगभग 20 ऑस्ट्रेलियाई पर्वतों में खोए बताए गए थे। तथापि यह तथ्य था कि अब तक 4,000 के आस-पास लोगों ने सफलतापूर्वक चोटी की चढ़ाई की थी—जब से न्यूजीलैंड के एडमंड हिलेरी और नेपाली तेनसिंग नॉर्गे शेरपा ने 1953 में प्रचलन शुरू किया था। यह साबित करता है कि खतरे पर्वत प्रेमियों के प्रवाह को काबू में कर पाने में असफल हुए हैं। वे यहाँ दुनिया में सबसे ऊपर जाने की उम्मीद लेकर आते हैं। एवरेस्ट को छोड़ो, काठमांडू एयरपोर्ट भी समुद्र तल से 4,429 फीट यानी 1,350 मीटर ऊपर स्थित है, को कोई ऊँचा ही मानेगा।

लुकला की उड़ान यादगार थी। काठमांडू तक की उड़ान से अलग, जहाँ मैं बीच की सीट में सैंडविच की तरह फँस गई थी, इस समय मुझे एक खिड़की के पासवाली सीट मिल गई थी। एक घंटे की उड़ान में विमान अपना रास्ता पर्वतों से होते हुए घुमावदार रास्ते से बना रहा था और आँखों के लिए एक दुर्लभ भोज प्रस्तुत कर रहा था, जैसे ही हम साँस रोकनेवाली भू-दृश्यों के ऊपर उड़ रहे थे। भू-दृश्य शोभायमान था—प्रकृति ने जैसे नीचे जमीन पर एक हरा गलीचा (ग्रीन कारपेट) बिछा रखा हो।

लुकला हवाई अड्डा, जिसका नाम वर्ष 2008 में 'हिलेरी-तेनसिंग एयरपोर्ट' रखा गया था, में हमारा विमान उतरा था। इसे दुनिया में सबसे खतरनाक हवाई अड्डों में से एक माना जाता है। यात्रीगण विमान सुरक्षित उतरने के हर

समय तालियाँ बजाते हैं। वे इसलिए, क्योंकि इसकी पतली हवाई पट्टी 9,325 फीट (2,843 मीटर) की ऊँचाई पर स्थित है। मैंने सुरक्षित उतरने पर सर्वशक्तिमान को धन्यवाद दिया था।

बछेंद्री पाल ने मुझे नीचे उतरने से पहले हमारे ऊनी कपड़े तैयार रखने के लिए चेतावनी दी थी और वे सही थी। बाहर हाड़ कँपानेवाली ठंड थी। हमारा स्वागत स्वर्ग से हमारे ऊपर हिमकणों की बौछार से हुआ था। हम अपने सामान उठाए हुए होटल के लिए निकल पड़े थे। पर्वत आपको सबसे पहला यह सबक सिखाते हैं कि किसी के आर्थिक स्तर से पृथक् प्रत्येक व्यक्ति समान है। जितनी जल्दी जो अपना अभिमान त्याग देता है, उतना अच्छा होता है। कोई भी पर्वतों को अभिमान नहीं दिखा सकता है। मैंने एक घंटे के लिए आराम किया था, जब 'एशियन ट्रैकिंग एजेंसी' के लोगों ने उद्घोषित किया था कि यह अब मेरे एवरेस्ट पर चढ़ने का समय शुरू हो गया था। एक छोटी प्रार्थना के बाद मैंने अपना प्रयास आरंभ कर दिया था।

हम समुद्र तल से 2,622 मीटर ऊपर फकडिंग नामक स्थान के लिए पैदल निकले थे। यह वह स्थान है, जहाँ से तकनीकी रूप से एवरेस्ट की चढ़ाई का श्रीगणेश होता है। मुझे वहाँ पहुँचने में तकरीबन तीन घंटे लग गए थे। मोबाइल नेटवर्क अभी भी काम कर रहे थे, अतएव मैं अपने परिवार, मेरे प्रशिक्षकों, बछेंद्री पाल और अन्यों से लगातार बात करती रही थी।

एक शेरपा मेरे साथ यहाँ जुड़ा था, जिसने मुझे स्थान की महत्ता के बारे में बताया और उसका काम मुझे मानसिक तौर पर उन कष्टों के लिए तैयार करना था, जिनका किसी को भी रास्ते में सामना करना पड़ता है। हालाँकि वह उस नीमा कांचा का सहायक था, जो ऊपर की चोटी तक मेरा नियमित शेरपा था। जिस समय तक मैं अतिथि गृह पहुँची थी मेरे पैर सूज चुके थे, विशेषकर बाएँवाला। मैंने अपने पैर धोने के लिए कुछ गरम पानी माँगा और सूजन को ठीक करने की जितनी कोशिश कर सकती थी, की।

अतिथि गृह यशराज की फिल्मों के सैट जैसा था। स्थान सुरम्य था। प्राकृतिक दृश्य सुंदर थे, पर्वतों और एक नदी की पृष्ठभूमि में हरियाली मिली हुई थी। ठंड तेज थी, लेकिन प्राकृतिक सुरम्यता ने मुझे मेरा दर्द और बाहर का मौसम भुला दिया था।

बछेंद्री पाल ने हमें सलाह दी थी कि हमें ज्यादा-से-ज्यादा वक्त बाहर बिताना चाहिए, ताकि हम ठंड के अनुकूल बने रहे सुंदर अतिथि गृह, जहाँ हमें ठहराया गया था, पूर्णतया लकड़ी का बना हुआ था। उसका नाम उस स्थान के ऊपर रखा गया था, जहाँ वह स्थित था। यद्यपि बाहर काफी ठंड थी, उसके मध्य में कमरों को गरम रखने के लिए एक चिमनी लगी हुई थी। इस क्षेत्र में कोई बिजली उपलब्ध नहीं थी। फिर भी कमरों को स्वदेशी निर्मित कोयले से भरी चिमनी की मदद से रात में भी गरम रखा जाता था। हमने यहाँ तड़केवाले चावल खाए थे। हमने पाया था कि पहाड़ों में चावल मुख्य भोज्य पदार्थ होता है।

सुबह चाय पीने के बाद हम पर्वतों के लिए निकल पड़े थे। शाम को 4 बजे के आस-पास, हम नामचे बाजार पहुँचे थे, जो कि समुद्र तल से 3,340 मीटर ऊपर स्थित था और जिसे दुनिया में सबसे ऊँचा बाजार समझा जाता था।

पर्वतारोही, जो आखिरी मिनट में किसी भी सामान की आपूर्ति चाहते हैं, को यहाँ सबकुछ मिल जाता है। लेकिन यह बहुत अधिक महँगा है। मैंने इसे तब जाना, जब मैंने एक परंपरागत ऊनी टोपी खरीदी थी। टोपी बेचनेवाले ने असल में 1,000 नेपाली रुपए माँगे थे, परंतु मैंने मोल-भाव कर 450 नेपाली रुपए तय किए थे। बाजार में घूमकर मैंने महसूस किया कि मेरा शरीर धीरे-धीरे जलवायु के अनुकूल होता जा रहा था। इस बाजार में ज्यादातर होटल और अतिथि गृह महिलाओं के द्वारा पुरुषों से भी अच्छे तरीके से चलाए जा रहे थे। मुझे यह देखकर अच्छा लगा

था। इसे मेरा पक्षपात कहें, लेकिन जब कभी भी मैं औरतों को अच्छा कार्य करती, सुज्ञात निर्णय लेने में नेतृत्व करती या पुरुषों के द्वारा प्रदत्त बाधाओं को तोड़ती देखती हूँ तो मेरे अंदर की स्त्री हमेशा मुसकराती है।

एक दुकान लाइव फोटो के सत्र दे रही थी। यह बहुत महँगा था। उनके पास कुछ प्रतिरूप फोटो थे, जो बहुत बढ़िया दिख रहे थे। मैंने उनकी कुछ तसवीरें खींचीं, लेकिन दुकानदार के आपत्ति जताने के बाद मुझे उन्हें मजबूरन मिटाना पड़ा था। लेकिन मैंने वायदा किया था कि मैं वापसी में एक फोटो खिंचवाऊँगी। नामचे बाजार से थोड़ा ऊपर नेपाली सेना का क्षेत्र था। यहाँ थल सेना ने अपनी एक प्रदर्शनी लगा रखी थी। मैंने एक येती—हिम मानव—की खोपड़ी देखी थी। कमरों को गरम रखने के लिए इस कस्बे में होटलों में ठीक वैसी चिमनी की व्यवस्था थी, जैसा हमने फडकिंग में पहले देखा था।

अगली सुबह हम एक काफी अधिक खड़ी चढ़ाई के लिए निकले थे। मैंने रास्ते में बौद्ध मठों को देख प्रार्थना करनी आरंभ कर दी थी। खुमजुंग, समुद्र तल से 3,790 मीटर ऊपर, हमारी अगली मंजिल थी, जो कि खड़ी चढ़ाइयों और खतरनाक ढलानों से भरी हुई थी। यह मेरे लिए बहुत मुश्किल था। जिनके पास अपने दोनों पैर थे, वे भी चढ़ाई के दौरान आराम करते, लेकिन मैं लगातार चली थी। यद्यपि मैं काफी अच्छी चाल से चल रही थी, फिर भी मुझे लग रहा था कि मुझे हमारे अगले पड़ाव पर पहुँचने में पूरा दिन लग जाएगा। हम छोटे रेस्तराँओं पर लंच और गरम पानी लेते थे। कफ और ठंड से बचने के लिए मैंने लुकला से ही गरम पानी पीना शुरू कर दिया था।

यदि आपको पर्वतों में ठंड लग जाए तो शिखर तक आपका पहुँच पाना असंभव होता है। खाँसी तीखे झटकों में होती है, जो किसी के भी चढ़ने को प्राय: असंभव बना देती है। मैंने ये चीजें बछेंद्री पाल के भाई राजेंद्र पाल सिंह (राजू) से सीखी थीं, जो खुद एक कुशल पर्वतारोही थे। उनका अनुभव एवं सलाह मेरे दिमाग में ठहर गई थी और मैं स्वस्थ रहने के लिए दृढ़ संकल्प थी।

मैं एवरेस्ट के बारे में सूचनात्मक अंशों से खुद को अभ्यस्त करवा रही थी। यहाँ कुछ ऐसे अंश प्रस्तुत हैं—पर्वतों पर एक चाय 200 नेपाली रुपए और चिकन चावल (जिसमें शायद ही चावल हो) 500 नेपाली रुपए का पड़ता था। मैंने उनमें से कुछ बिलों को सँभालकर रखा हुआ था। जब हम ऊपर चढ़ गए थे, एक लीटर गरम पानी, जो मैं अपनी बोतल में भरती थी, 200 नेपाली रुपए का पड़ता था। परंतु वह एक अमृत की तरह था।

मैंने शेरपाओं के संसार के बारे में काफी कुछ जान लिया था। उदाहरण के लिए, वहाँ नामचे बाजार के पास एक गाँव था, जिसे 'शेरपाओं के गाँव' के नाम से जाना जाता था। सन् 1953 से पहले पर्वतों पर चढ़ना पाप माना जाता था। लेकिन तेनजिंग नॉर्गे की चढ़ाई के बाद आम तौर पर पर्वतारोहियों के साथ जाने से उनका मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक बनने से इन शेरपाओं को आजीविका का एक ताजा स्रोत मिल गया था।

जैसाकि मैंने जाना, शेरपा आम तौर पर पूर्वी नेपाल से होते हैं और एवरेस्ट के ऊपर काम करनेवाली 27 में से किसी एक नेपाली एजेंसी से रोजगार पाते हैं। 'एशियन ट्रैकिंग एजेंसी' जिससे टाटा स्टील ने मेरे लिए अनुबंध किया था, उनमें से एक थी। उन्हें मेरी उन सभी 52 दिनों तक देखभाल करनी थी, जो मुझे पर्वत पर गुजारने थे।

जबकि प्रत्येक एजेंसी अधिकाधिक आरोहियों को अपने साथ जोड़ना चाहती थी, शेरपाओं का आरोहियों के साथ सहयोग करने का मित्रभाव एवं क्षमता तथा उनकी सुरक्षित वापसी ही असल में एक एजेंसी के द्वारा उत्पन्न व्यापार को निश्चित करती है। संकल्प, हुनर एवं दृढता के साथ एक पर्वतारोही को भी एक अच्छा शेरपा पर्वतों में जिंदा रहने के लिए चाहिए होता है।

वर्ष 2013 में लगभग 297 लोगों ने एवरेस्ट पर चढ़ने की कोशिश की थी। मात्र 97-98 आरोही ही सफल हुए थे। मैं अकेली विकलांग थी। 2011 से कोई विकलांग महिला या पुरुष नहीं चढ़ा था। वहाँ कुछ लोग थे, जिन्होंने

कोशिश तो की थी, मगर वे आधार शिविर से आगे नहीं जा पाए थे।

खुमजमग के बाद हम तेंबोचे (समुद्र तल से 3,837 मीटर ऊपर) पहुँचे थे। मैं पहले ही थकावट महसूस कर रही थी। तेंगबोचे पर वहाँ बड़ा बौद्ध मठ था। मैं सबकुछ काफी नजदीक से देख रही थी। मुझे अभी भी कुछ मंत्र याद हैं, जो वहाँ जपे जा रहे थे। यह आखिरी स्थान भी है, जहाँ किसी को मोबाइल फोन से संपर्क साधने हेतु नेटवर्क मिलते हैं। हिलेरी और तेनजिंग नॉर्गे ने भी एवरेस्ट पर्वत के लिए यही रास्ता अपनाया था और यह तेंगबोचे का प्रसिद्ध होने हेतु दावा था।

यहाँ मैंने एक निस्संदेह रोचक प्रसंग देखा था। मैंने देखा कि एक पीले चोंच एवं लाल पैरोंवाला कौए जैसा पक्षी टेलीफोन के एक खंभे पर बैठने की कोशिश कर रहा था, मगर तेज हवाएँ उसे दूर धक्का दे रही थीं। खंभे पर उतरने की कोशिश करने की बजाय वह उड़ा और उससे थोड़ा आगे होकर बैठ गया था। एवरेस्ट और उसके आस-पास की चोटियों का निचला क्षेत्र बहुत प्रकार के पशु व पक्षियों का घर था। एवरेस्ट के आँचल में स्थित सागरमाथा राष्ट्रीय पार्क में 150 से भी अधिक प्रजातियों के पक्षी रहते हैं, सारे केवल निचले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। कूदती मक़डियाँ, जो 20,000 फीट के बाद भी मिल जाती हैं और कुछ अन्य बर्फ-रोधी प्रजातियाँ, जैसे कि पट्टीमाथे वाले हंस (बार-हैडिड हंस) के जोड़ों के अलावा कोई और कीट, पशु या स्तनपायी जीव इस ऊँचाई के बाद नहीं दिखाई देते।

जैसे-जैसे मैं ज्यादा ऊँचाई चढ़ रही थी, मुझे चीजें काफी मुश्किल लग रही थीं। जैसे ऑक्सीजन का स्तर गिरता है और अंततः वह गायब हो जाती है। पर्वत असल में सर्वश्रेष्ठ आरोहियों की परीक्षाएँ लेते हैं। मुझे तेंगबोचे से दिंगबोचे (समुद्र तल से 4,343 मीटर ऊपर) तक यात्रा करने में एक पूरा दिन लग गया था। हालाँकि यहाँ फोन संपर्क क्षेत्र नहीं है, फिर भी शेरपा एक ऐसे स्थान के बारे में जानते हैं, जहाँ से कोई खड़ा होकर बाहरी दुनिया से संपर्क साध सकता है। यह अद्भुत है। यदि आप एक इंच भी आगे बढ़ेंगे तो सिग्नल नहीं आएगा; लेकिन जब आप पुनः उसी स्थान पर जाएँगे तो बात कर पाएँगे।

दिंगबोचे को तेनजिंग नॉर्गे के गाँव के नाम से भी जाना जाता है। यहाँ से दो रास्ते हैं। एक लोगों को एवरेस्ट आधार शिविर ले जाता है, जबकि दूसरा रास्ता आइसलैंड पीक जाता है। मैंने वातावरण और ट्रैक से अनुकूलता बनाने के लिए एवरेस्ट आधार शिविर जाने से पूर्व आइसलैंड पीक जाने का फैसला किया था।

बहुत से लोग ऐसा नहीं करते, क्योंकि हर कोई पर्वत पर यात्रा का समय घटाना चाहता है। लेकिन बछेंद्री पाल ने मुझे पर्वत पर कोई शॉर्ट कट न अपनाने की सलाह दी थी। इसलिए मैं मानसिक रूप से इस लंबी खिंचाई के लिए तैयार थी।

दिंगबोचे से हमारी अगली मंजिल छुकुंग (समुद्र तल से 4,730 मीटर ऊपर) थी। वहाँ हम एक परिवार के साथ रुके थे, क्षेत्र में जिनका घर केवल एक ही दिखता था। घर की व्यवस्था एक औरत के द्वारा की जाती थी, जबकि उसका पति सारा दिन सोता रहता था। उसके परिवार की आय का स्रोत, जैसे कि औरों के लिए है, मेरे जैसे पर्वतारोहियों के द्वारा मिलता था। मार्च और मध्य जून के समय में उनका व्यापार फलता था। उस जोड़ी की एक छोटी, नटखट लाल गालोंवाली लड़की था। ऐसा लगता था कि वह काफी समय से नहीं नहाई थी। बर्फीला परिवेश देखकर यह साफ था कि नहाना इतना आसान नहीं था। और जितना मैं और ऊँचा चढ़ती गई, गरम पानी उतना ही महँगा होता गया।

छुकुंग से अब मैं आइसलैंड पीक (समुद्र तल से 20,299 फीट यानी 6,189 मीटर ऊपर स्थित) तक खुद को अनुकूल बनाने के लिए यात्रा कर रही थी। आइसलैंड पीक से पहले मैंने एक रात आइसलैंड आधार शिविर पर

गुजारी, जहाँ मैं बहुत से विदेशियों से मिली, जिनमें कुछ बड़े आदमी भी थे जैसे कि ऑडी ग्रुप के चेयरमैन। मुझे बहुत से प्रभावशाली लोगों से मिलना याद है; लेकिन पता नहीं क्यों बर्फीली और चट्टानी परिवेश में महत्त्वपूर्ण पदवियाँ पिघलने लगती हैं। आखिरकार पर्वत से कोई भी बड़ा नहीं है।

आइसलैंड आधार शिविर से हमने अंतहीन ट्रैक पर आइसलैंड पीक के लिए रात को यात्रा शुरू की थी। सभी आरोहीगण हेड मास्क, गियर्स और हेडलाइट के साथ ऊपर की ओर एक ही रेखा में निकले थे। यह एक शानदार नजारा था; वे लोग एक लाइन में चल रहे थे। उनके माथे पर बँधे हेडलाइट से उनके चारों तरफ तेजोपुंज का चमत्कृत प्रभाव दिखता था। प्रकृति की गोद में मुझे ऐसा प्रतीत होता था कि जितना ऊपर हम चढ़ेंगे, उतना ही हम सर्वशक्तिमान की शक्ति के नजदीक आ जाएँगे।

कुछ लोग मेरे पीछे थे, जबकि कुछ आगे थे। कुछ समय बाद जो पीछे थे, उन्होंने भी मुझे पार करना शुरू कर दिया था। हम आइसलैंड पीक के कँटीले क्षेत्र में पहुँच गए थे, जिसके बाद हमें बर्फीले क्षेत्र से गुजरना था।

इस स्थान से चलना अत्यधिक मुश्किल हो गया था, क्योंकि सारा क्षेत्र बहुत ही फिसलन भरा था। एक लापरवाह कदम और वहाँ चट्टानी क्षेत्र में नीचे गिरने की संभावना हो जाएगी—एक ऐसे बल के साथ, जिससे मेरे शरीर की सारी हड्डियाँ टूट जाएँगी। मैं चलते हुए प्रार्थना कर रही थी। कहते हैं कि भगवान् यहाँ सबकी परीक्षा लेता है। मैंने भी कुछ फासला या तो नीचे फिसलकर या रस्सी के सहारे ऊपर आते हुए पार किया था। रस्सी का रास्ता इतना आसान नहीं है, विशेषतया यदि आप चढ़ रहे हों। कल्पना करो कि बहुत से लोग एक पहाड़ की चोटी से एक रस्सी के सहारे लटके हुए हैं। 9 मिलीमीटर की एक रस्सी 2,000 किलोग्राम का वजन सहन कर सकती है।

मुझे ऊपर तक अपना रास्ता बनाने में काफी मुश्किल हो रही थी, क्योंकि बर्फ पर पकड़ बनाने में ही कठिनाई आ रही थी। काफी प्रहारों के बाद मेरे पैर बर्फ में पकड़ बना पाए थे। चूँकि मेरे दाएँ पैर में रॉड थी, मेरे लिए उस तरह की शक्ति लगा पाना आसान नहीं था, जो सख्त बर्फ को हटाकर पैर रखने का स्थान बना सके। समय-समय पर जब मैं बर्फ पर अपने कृत्रिम पैर से प्रहार करती थी तो यह 180 डिग्री के कोण पर बल के प्रभाव के कारण घूम जाती थी। एक चट्टान के साथ इस अवस्था में लटकने की कल्पना करें! अब, जब तक मैं उस पैर को साधारण अवस्था में लाती, चलना आसान नहीं था। अपने शरीर को विषम कोणों में घुमाकर और मोड़कर बाएँ पैर से पकड़ बना और स्टंप को अपने शरीर से अलग करके उसे गाड़ना पड़ता था और पुनः उसे व्यवस्थित करना पड़ता था। यह सब करते हुए हवा में लटके रहना पड़ता था।

अभी भी मेरी कँपकँपी छूट जाती है, जब मैं यह सोचती हूँ कि क्या हो सकता था, यदि स्टंप फिसलकर हजारों फीट नीचे घाटी में गिर जाता! यदि वेसा हो गया होता तो मैं वहाँ कम हवा में अटकी रहती, शायद हमेशा के लिए। वहाँ एक और समस्या थी। मेरे हाथों से रस्सी को पकड़ना काफी मुश्किल था, खासकर तब जबकि मैं अपने पैर से बर्फ पर प्रहार कर रही थी और अपने शरीर को ऊपर खींच रही थी। अब मैं 'कठिन कार्य' का सही अर्थ जान गई थी। वहाँ ऐसे क्षण थे, जब मेरे पैरों से काफी ज्यादा खून बह रहा था।

मेरे दर्द और खून बहने को देखकर मेरा शेरपा डर गया था और उसने सलाह दी कि मुझे वापस लौट जाना चाहिए। मैं उसकी सलाह पर हँस पड़ी थी। मैं इतनी दूर वापस जाने के लिए नहीं आई थी। तीन घंटों के सही-गलत प्रहारों के बाद मैं तकरीबन 500 फीट चढ़ चुकी थी।

मैं ग्रसित थी और सोचती थी कि आगे बढ़ पाने में सक्षम हो पाऊँगी! रस्सी पर जब मैं अटक गई थी, मैंने कुछे देसी तकनीक प्रयोग की, जिसे मैं राहुल से जीतने में प्रयोग करती थी। जब वह मुझे एक पेड़ से नीचे खींचता था तब मैं खुद को डालियों में फँसाकर अपनी पकड़ बनाए रखती थी। जैसे ही मैं अपने डर और दर्द से लड़कर

चलती थी, मैंने ध्यान दिया कि बहुत से लोगों को एक धक्के की जरूरत थी, जो प्रकृति की अनिश्चितताओं के द्वारा झुक गए थे।

रामलाल, हमारे समूह का एक सदस्य, ऐसे ही एक व्यक्ति थे। वह ठीक नहीं थे और निस्संदेह परीक्षण की स्थितियों में उल्टियाँ कर रहे थे। कुछ समय के बाद वस्तुत: उन्होंने और आगे बढ़ने की अपनी अक्षमता का इशारा कर दिया था। मैंने उन्हें बर्फ पर गिरते देखा था। यह एक अच्छा संकेत नहीं था। उनको कुछ प्रोत्साहन चाहिए था और यहाँ यह कुछ ऐसा था, जिसकी उपलब्धि कम थी। इसलिए मैं धीमी गति से नीचे आकर उनके पास पहुँची और कहा कि 'रामलाल' समर्पण मत करो और चुनौती को स्वीकार करो।

रामलाल ने कमजोरी से सिर हिलाया। एक मानसिक छलाँग लगाकर उसने जल्द ही अपनी शारीरिक कमजोरी को भी जीत लिया था और चलना शुरू कर दिया था। कभी-कभी जब आप किसी अन्य की मदद करते हैं तो आप असल में खुद की ही सहायता कर देते हैं। मैंने खुद को काफी प्रेरित पाया, जैसे ही मैंने रामलाल को धकेला था। यद्यपि जब हमने कुछ फासला तय किया था, चमकती हुई बर्फ पर अभी भी पीली उलटी दिखाई दे रही थी। पर्वत पर मिट्टी का एक धब्बा भी दिख जाता है।

अब तक बर्फीली हवाएँ भी चलने लग गई थी। 200 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से बह रही बर्फीली हवाएँ हमारे निश्चय की परीक्षा ले रही थीं, लेकिन कुछ समय के बाद वे नरम पड़ धीमी हो गई थी। मौसम पूरी तरह साफ नहीं हुआ था, जब हम आइसलैंड पीक पहुँचे थे। लेकिन यह उस समय तक साफ होना शुरू हो गया था, जब हम वहाँ पहुँचे थे। मैं यह नहीं जानती थी कि आइसलैंड पीक पर चढ़नेवाली पहली विकलांग बनकर मैंने पहले ही एक रिकॉर्ड बना दिया था। विशेषज्ञ बताते हैं कि इस पीक पर चढ़ना एवरेस्ट पर चढ़ने से ज्यादा मुश्किल है। दोनों को देखने से मैं इस बात की पुष्टि कर सकती हूँ।

मैं यह देखकर बहुत खुश थी कि मेरे साथ-साथ रामलाल भी चढ़ आया था। वह इस बात का गवाह है कि पैरों में सूजन और अधिक रक्त बहने के बावजूद मैं कैसे चलती रही थी! रामलाल के प्रेरित होने के लिए यह एक कारण पर्याप्त था, यही बात उसने कई बार स्वीकार की थी।

पीक पर चढ़ने के तुरंत बाद हम वापस आइसलैंड आधार शिविर की ओर चल पड़े थे। मुझे अब महसूस हुआ था कि मैं बिना कुछ खाए तकरीबन 12 घंटे से चल रही थी। यह पर्वतों में असाधारण नहीं है, क्योंकि यहाँ हर कोई प्रकृति की दया पर निर्भर है। कुछ खाकर भूख को शांत करने की बेचैनी से मुझे अचानक याद आया था कि मेरे पास एक उबला अंडा और कुछ चॉकलेट थी। मैंने बैग को उसे खोजने के लिए खोला तो पाया कि अंडा अब तक जम चुका था। अंडे पर जमी हुई बर्फ को पहले साफ करना पड़ेगा। जब मैं ऐसा करने में व्यस्त थी, मैंने ध्यान दिया कि एक आँखों का जोड़ा भूखी निगाह से मुझे देख रहा था। यह पीली पट्टी और लाल पैर वाला कौए था, जिसे कुछ समय से खाने को कुछ भी नहीं मिला होगा। मैंने अपनी चॉकलेट और अंडे की जर्दी उसके साथ साझा की थी।

मैंने अंधकार में चढ़ना शुरू कर दिया था। अब इसका दिन की रोशनी में सामना करके मैं सचमुच आश्चर्यचकित थी कि मैंने ऐसा एक खतरनाक रास्ता पार कर लिया था। यह सोचकर मेरी रीढ़ की हड्डी में कँपकँपी दौड़ गई थी कि मैं सारा समय मृत्यु के कितने नजदीक थी। हम अंतत: शाम को 6 बजे तक आइसलैंड आधार शिविर पहुँच गए थे। अब काफी अँधेरा छा गया था और मैंने अपना रात का भोजन वहीं पर किया था—कई घंटों में मेरा पहला पूरा खाना।

यहाँ प्रकृति के बुलावे पर जाना मेरे लिए एक चुनौती था। ऐसा इसलिए था, क्योंकि विकलांग होने के कारण मैं

भारतीय रीति की टॉयलेट सीट पर नहीं बैठ सकती थी और मुझे खड़े रहकर निवृत्त होना पड़ा था। दूसरी समस्या—मुझे मासिक धर्म का सामना करना पड़ा था। पर्वतों में इसे कैसे भी करना एक चुनौती थी और मेरी विकलांगता को देखते हुए यह कार्य न केवल दर्द भरा था, अपितु संकोचशील भी था।

मेरा दायाँ पैर सूज गया था। वहाँ आस-पास ऐसा कोई नहीं था, जिसे मैं मदद के लिए बुला सकती थी। इसलिए मैंने खुद अपने पैर की देख-रेख गरम पानी की एक बोतल से की थी। मैं नहीं जानती कब मैं सर्वशक्तिमान भगवान् को याद करते हुए और उनके नाम की माला जपते-जपते सो गई थी। मैंने अपनी बोतल एक स्लीपिंग बैग में यह सुनिश्चित करने के लिए रखी थी कि यह गरम रहे। यदि इसे मैंने बाहर छोड़ दिया होता तो यह जम चुकी होती।

फलत: मैं दर्द को अपने बिस्तर पर ले जाना और उसके साथ सोना सीख गई थी। सुबह में मैं एवरेस्ट के पक्षियों के चहचहाने पर जागी थी, जिनके साथ मैंने एक अनोखा संबंध जोड़ लिया था। बिस्तर से उठने से पहले उन्हें देखना मेरी दैनिक दिनचर्या का एक हिस्सा बन चुका था।

मैं पुन: दिंगबोचे के लिए निकल चुकी थी। छुकुंग में वही विशेष घर से गुजरी थी, वही नटखट बच्चे से मिली और उसके साथ खेली भी थी। निकलने से पहले मैंने उन दोनों के साथ फोटो भी खिंचवाई थी।

अगले दिन शाम 4 बजे तक मैं दिंगबोचे पहुँची थी। वहाँ अतिथि गृह बर्फ से ढक चुका था। मार्च में जैसे ही ट्रैकिंग का मौसम शुरू होता है, वहाँ सभी घर अतिथि गृहों में बदल जाते हैं। उनके बाहर एक जीर्ण-शीर्ण आकृति होती है। परंतु अंदर वे एक पाँच-सितारा होटल की अनुभूति कराते हैं। ऐसे बर्फीले-ठंडे हालात में भी अंदर तापमान गरम रहता है, जो यहाँ ठहरने को लाभप्रद बना देता है।

अवश्य ही वहाँ प्रस्तावित सुविधा का एक मोल होता है; लेकिन तब वहाँ ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं, जब हर कोई धन से आगे देखता है, खासकर एक पर्वत पर, जहाँ बहुत सारे विकल्प वैसे भी मौजूद नहीं होते हैं। मैंने अतिथि गृहों की दीवारों पर काफी हस्ताक्षर की हुई टी-शर्टें और विभिन्न देशों के राष्ट्रीय ध्वज चिपके देखे थे। वे लोगों के द्वारा वापसी पर उनकी यात्रा के एक सबूत की तरह वहाँ छोड़ दिए गए थे।

मैंने भी शहनाज हुसैन के द्वारा उपहार में दी गई टी-शर्ट वहाँ हस्ताक्षर कर के छोड़ दी थी। छुकुंग पर वहाँ एक ही सार्वजनिक शौचालय था। मेरी कमियों को देखते हुए मेरे लिए समझौता करना काफी मुश्किल था, विशेषतया जब हर कोई शौचालय कब्जाने के लिए काफी जल्दी में रहता दिखता था। परंतु अब तक मैं समस्याओं की आदी हो चुकी थी। फेरीचे (समुद्र तल से 4,270 मीटर ऊपर) मैंने भूमि पर हरियाली के कुछ टुकड़े देखे थे। वहाँ पर चोटी के रास्ते पर हरियाली के यही आखिरी टुकड़े थे। वहाँ से हम लोबुचे से होकर एवरेस्ट आधार शिविर के लिए निकले थे। हमें नाममात्र की ही कोई हरियाली दिखी थी।

मैं लोबुचे ज्यादा देर के लिए नहीं रुकी थी और कुछ अल्पाहार के बाद मैं एवरेस्ट आधार शिविर के लिए प्रस्थान कर चुकी थी। पर्वत और बर्फ के बीच में चलते हुए हर किसी को ऐसा लगता था जैसे एक बड़ी बर्फ की सेना लोगों को और आगे जाने से रोकने की कोशिश कर रही है। यह तीखी ठंड थी और यहाँ स्थितियाँ वाकई हर किसी के साहस की परीक्षा ले रही थीं। एवरेस्ट आधार शिविर के रास्ते पर कोई भी साफ आसमान होने पर, एक खास स्थल से एवरेस्ट का शिखर देख सकता था। भाग्यवश, जब मैं उस स्थल पर पहुँची थी तो उस समय मौसम साफ था। जैसे ही मेरे शेरपा ने उस स्थान पर इशारा किया, मैं वहीं जम गई थी।

वह एक रोमांचित कर देनेवाला नजारा था। मैं नहीं जानती थी कि कौन मेरा इंतजार कर रहा था—शिखर की एक सफल यात्रा और सुरक्षित नीचे उतरना या एक बर्फीली चिता! अब मैं केवल उस स्थान पर पहुँचना चाहती थी, जो वहाँ से दिख रहा था। मैंने शांति में प्रार्थना की, ''हम आएँ और आपका दर्शन कर पाएँ।'' हम उस दृश्य से चिपक

गए थे, जब तक शेरपा ने हमसे आगे बढ़ने की प्रार्थना नहीं की थी। उसने कहा, ''अभी तुमने सिर्फ एक नजारा देखा है। लेकिन याद रखो कि तुम्हें वहाँ पहुँचना है। इसलिए चलो!''

सँकरा मार्ग, जिस पर हमने अभी एक बड़ी चुनौती ठान ली थी, शायद जो अब तक सबसे बड़ी थी। वहाँ एक तरफ एक खड़ी चट्टान और दूसरी तरफ पथरीले पर्वत की दीवार थी। पथरीली दीवार की तरफ से छोटे से मध्यम आकार तक के पत्थर नियमित अंतराल से नीचे लुढ़क रहे थे। एक ऊँचाई से गिरकर वे इतनी गति प्राप्त कर रहे थे, जो किसी पर गिरकर उसे गंभीर चोट पहुँचा सकते थे। कोई भी दूर नहीं जा सकता था, क्योंकि दूसरी तरफ खुला स्थान था। यह ऐसे था जैसे घाव और मृत्यु में से किसी को चुनना! यहाँ पर कोई भी प्रकृति के सामने खुद को बौना समझता है।

मैं वास्तव में विश्वास करती हूँ कि यह कोई दिव्य हस्तक्षेप था, जिसने मुझे ऐसे अवसरों पर सुरक्षित रखा था। यदि मैं आज यहाँ हूँ तो यह सबूत है कि कोई शक्ति मेरी रक्षा कर सहायता कर रही थी। उस तनावपूर्ण चरण के बाद जल्दी ही सौभाग्य से आधार शिविर दिखाई पड़ रहा था। अब तक वहाँ नाममात्र को कुछ ही आरोही थे, जो मेरे साथ या मुझसे आगे चल रहे थे। लेकिन अब मुझे मेरी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था, क्योंकि आधार शिविर क्षितिज पर दिखाई दे रहा था।

एक आनंदोत्सव जैसा वातावरण वहाँ पर चल रहा था। शेरपाओं ने वहाँ मंत्रों के ध्वजों को फहरा रखा था, जो कि उनके समूह के पहुँचने का सबूत था। ऐसे ध्वज सभी प्रमुख स्थानों पर लगाए गए थे, जो एक सफल यात्रा के चिह्न थे। एक शेरपा पर्वत पर सबसे ज्यादा खुश व्यक्ति होता है, जब उसका समूह सफलतापूर्वक और सुरक्षित अपनी मंजिल पर पहुँच जाता है। यह इसलिए, क्योंकि उनके आरोही समूह को सँभालने की उनकी कीमत और साख भी प्रत्येक सफल चढ़ाई के साथ बढ़ जाती है। उनकी कीमत भी उस आरोही की किस्म पर निर्भर करती है, जिसके साथ वे जाते हैं। उदाहरण के लिए, मेरा शेरपा नीमा कांचा, जो मेरे साथ शिखर तक गया और वापस आया था—यह वह आधार शिविर था, जहाँ से वे मेरे साथ चला था—अब निश्चय ही एवरेस्ट के 10 बड़े शेरपाओं में से एक होगा।

एक ध्वज पर लिखा था—'ईको एवरेस्ट 2013'। एक ईको (पर्यावरण-मैत्री) एवरेस्ट अभियान, जिसकी मैं भी एक हिस्सेदार थी, वह होता है जिसमें आरोहियों से यह सुनिश्चित करना अपेक्षित होता है कि वे पर्वतों को गंदा नहीं करेंगे। यहाँ प्रकृति का बुलावा आने के बाद एक व्यक्ति को गंदगी को एक थैली में एकत्रित कर और उस पर अपना नाम लिखकर बर्फ में दबाना होता है। वापसी के समय हमें उसे खोदकर निकालकर और अपनी थैली पहचानकर पर्वत के नीचे ले जाना होता है। सचमुच मैं बहुत खुश थी कि मैं ईको (पर्यावरण-मैत्री) अभियान की हिस्सेदार थी। यह एवरेस्ट के लिए बहुत अच्छा था, जो अब टनों से भरा हुआ था, जिसमें ज्यादातर खाली ऑक्सीजन की बोतलें, मानव मल-मूत्र, क्षतिग्रस्त या अनुपयोगी पर्वतारोहण उपकरण शामिल थे। अब नेपाल सरकार इस समस्या पर जाग्रत् हो गई है और पर्वतों को साफ करने/रखने का अपना दायित्व निभा रही है। मुझे खबर मिली है कि अब वहाँ गंदगी जलानेवाला एक यंत्र भी स्थापित किया गया है। ये सभी बहुत जरूरी कदम हैं और मैं अन्य व्यक्तियों को पर्वतों को साफ रखने की आवश्यकता हेतु जागरूक करने के कार्य से खुद को जोड़ना पसंद करूँगी।

यह एक अद्भुत संयोग था। जैसे ही मैं एवरेस्ट आधार शिविर पहुँची, मुझे याद आया कि उस दिन की तारीख 11 अप्रैल, 2013 थी। यथार्थत: दो साल बीत गए थे, जब से मुझे चलती ट्रेन से फेंका गया था। याद रखो, कोई भी तुम्हें नहीं हरा सकता, जब तक तुम खुद हार नहीं मानते हो। हाँ, यदा-कदा असफलताएँ आपकी परीक्षा लेती हैं,

लेकिन कोशिश करती रहनी चाहिए। अवसर के कुछ दरवाजे अवश्य ही खुलेंगे।

आधार शिविर पर मुझे सीधे एशियन ट्रैकिंग के भोजन कैंप में जाना था। मैं कहीं नहीं लड़खड़ाई थी, यद्यपि वह एक बहुत ही कठिन मार्ग था। लेकिन भोजन शिविर के रास्ते पर मैं फिसली थी और खुद को चोट पहुँचा ली थी। यह एक खरोंच से ज्यादा कुछ नहीं था, परंतु उससे मुझे अहसास हुआ कि पर्वतों में किसी को कुछ भी मानकर नहीं चलना चाहिए।

कैंप पर मैं 'एशियन ट्रैकिंग एजेंसी' के बुजुर्गों और बहुत से विदेशियों से मिली थी। उनमें से बहुत से नहीं जानते थे कि मैं एक विकलांग थी। मैंने भी नहीं सोचा था कि इसके बारे में उनको बताना महत्त्वपूर्ण था। यह पूरी तरह संयोगवश था कि यह तथ्य उद्घाटित हो गया था।

जितना संभव हो सके, मैं ज्यादातर समय कैंप के बाहर बिता रही थी, ताकि मेरा शरीर अधिक ऊँचाई के साथ सामंजस्य स्थापित कर ले। मैं नियमित तौर पर शाम को देर से पहुँच रही थी। एक दिन जब मैं लौट रही थी, मेरा कृत्रिम पैर बर्फ से भीग गया था, क्योंकि मैं फिसलन भरी सतह पर कई बार फिसली थी।

अगली सुबह मैंने अपना कृत्रिम पैर धूप में सूखने के लिए छोड़ दिया था। मुझे लगता है कि यही समय था, जब विदेशियों को लगा कि मेरे पास केवल एक ही कृत्रिम पैर होगा। इसके बाद मेरी टी.आर.पी. बहुत ऊँची बढ़ गई थी। मेरे पास उनके रिश्तेदारों से स्काइप के द्वारा बात करने के निवेदनों की बाढ़-सी आ गई थी। मैंने बात भी की थी।

लेकिन जब मैं उनके परिवारों से बात कर रही होती थी, मुझे मेरे परिवार से संपर्क करने को भी तरसना पड़ता था। मैंने उनमें से कुछ से मेरे परिवार के साथ स्काइप कॉल की व्यवस्था करवाने के लिए अनुरोध करने को सोचा था। लेकिन तब मुझे अहसास हुआ कि एक ऐसी कॉल करने के लिए मेरे परिवार के पास भी स्काइप होना चाहिए था। जबकि मैं घर पर उपग्रह फोन से एक कॉल कर सकती थी, लेकिन यह सब बहुत ही महँगा और जटिल था। किसी भी परिस्थिति में मैं जानती थी कि मेरा परिवार वास्तव में मुझे एवरेस्ट के शिखर पर देखकर प्रसन्न होगा।

आधार शिविर पर एक विदेशी जोड़ा भी था, जिसका इरादा केवल इसी स्थल तक यात्रा करने का था। वे भी 'एशियन ट्रैकिंग एजेंसी' से थे, अतएव वे भी मेरी तरह उसी शिविर में रह रहे थे। जब उन्होंने मेरे बारे में सुना, वे भी यात्रा करने के लिए तैयार हो गए थे। हालाँकि जब मैं दूर थी, तब वे चले गए थे और एक चिट्ठी, कुछ चॉकलेट, अपना फोन नंबर और अपना आशीर्वाद मेरे लिए छोड़ गए थे। चिट्ठी ने मुझे भावुक कर दिया था। वह इतनी अच्छी तरह लिखी गई थी कि मैं अपने आँसू नहीं रोक पाई थी।

पर्वतों पर एकदम अकेले, रोजाना दर्द और आँसुओं से लड़ते हुए मैं छूने पर भी चिड़चिड़ी हो जाती थी। चिट्ठी एक सुखद राहत की तरह आई थी। अस्त-व्यस्त नसों को शांत कर मेरी भावुक स्थिति को तोड़ दिया था। कम-से-कम कोई एक व्यक्ति मुझसे सही अर्थों में जुड़ गया था। मैं एवरेस्ट आधार शिविर पर एक महीने के लिए हरियाणा की दो पुलिसवाली लड़कियों के साथ रुकी थी। वे भी एवरेस्ट को जीतने की इच्छा रखती थीं। वे रोजाना नहाती थीं —कुछ ऐसा, जो मैं भी करना चाहती थी। लेकिन मैंने कुछ कहानियाँ सुनी थीं कि कैसे लोगों को पर्वत पर ठंड पकड़ लेती है। एक बार आपको यहाँ ठंड ने पकड़ लिया यह आसानी से नहीं जाएगी और चढ़ाई को लगभग असंभव बना देगी। नहाने के बजाय मैं अपने शरीर को गरम पानी से स्पंज के द्वारा धोना पसंद करती थी।

नीम कांचा, मेरा शेरपा, एक अच्छा और मददगार नेपाली था। लेकिन समय-समय पर यदि वह परेशान हो जाता तो मुझे फटकारता भी था। उसका मुख्य योगदान कैंप 4 के बाद आरंभ हुआ था। आप विश्वास नहीं करेंगे कि कैसे रसोई के कर्मचारी वहाँ हमारे लिए पानी लेकर आते थे। जब भी पानी चाहिए होता था, वे बर्फ पर एक विशेष स्थान

तक चलकर जाते, जहाँ वे बर्फीली सतह को खरोंचना शुरू कर देते। धीरे-धीरे बर्फ रास्ता देती और वहाँ नीचे पानी होता।

एक पर्वतारोही के लिए जीवित रहने हेतु ऐसे स्थानों को ढूँढ़ना अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता था। यदि आप ऐसी सतहों पर दबाव डालेंगे तो आप नीचे बर्फीले ठंडे पानी में खिंचे चले जाएँगे और एक बार वहाँ फँसने के बाद बाहर आना आसान नहीं होगा। इसलिए शेरपाओं का किरदार पर्वतों पर इतना महत्त्वपूर्ण होता है।

आधार शिविर पर मैं उद्घोषित किया करती थी कि मैं मैगी बनाऊँगी, जैसे इसे मैदानी क्षेत्र में बनाया जाता है। सब्जियों के अलावा मैं इसमें अच्छे मसाले डाला करती थी। उनमें बहुत से मेरा बनाया हुआ पसंद करते थे। रसोईघर के कर्मचारीगण भी मेरी अच्छी देखभाल करते थे। प्रत्येक समय जब वे एक विशेष व्यंजन, जैसे कि चिकन बनाते थे, यदि मैं दूर होती थी तो मेरे लिए कुछ बचा लिया करते थे।

विदेशियों के साथ रहने से मेरी अंग्रेजी कुछ अच्छी हो गई थी। मैंने भी इस भाषा को सीखने का प्रयास शुरू कर दिया था। जबकि मैं उनसे बातचीत करती थी, मैंने उनमें से कुछ को पर्वतों पर रोमांस करते भी देखा था। एक विदेशी जोड़ा, जो अपनी पर्वत यात्रा के दौरान दोस्त बना था, चर्चा का एक गरम विषय बन गया था। वे प्यार में पागल प्रतीत होते थे। लेकिन उनका प्यार ज्यादा दिनों नहीं चला था। जल्द ही हम उनके झगड़े और तप्त शब्दों के आदान-प्रदान के साक्षी बने थे। लड़की ने लड़के पर उसे धोखा देने का आरोप लगाया था। उन्होंने एक-दूसरे से बातचीत करना बंद कर दिया था। हालात इतने बुरे हो गए थे कि एशियन ट्रैरकिंग एजेंसी के कर्मचारियों को दखल देना पड़ा था। लड़की को लड़के के द्वारा प्रायोजित किया गया था; परंतु अब लड़की को ऐसा करने में उसका छिपा हुआ इरादा लगता था।

चेतावनी के बाद भी दोनों ने अपने तरीके नहीं सुधारे थे, तब अंततः 'एशियन ट्रैरकिंग एजेंसी' के मालिक को हस्तक्षेप करना पड़ा था, ''आपकी यात्रा यहीं समाप्त होती है।'' उसने उद्घोषित कर दिया था। लड़का अपने कंधे झड़काकर मान गया था। उसने एक हेलीकॉप्टर के लिए कहा और उसे एक कीमत पर प्राप्त कर लिया था। लड़की के पास कोई पैसा नहीं था, अतएव उसे नीचे पैदल चलकर रोते हुए एक शेरपा के साथ जाना पड़ा था। मुझे बताया गया था कि ऐसी दोस्ती और संबंध विच्छेद एवरेस्ट पर होना बहुत ही साधारण था।

आधार शिविर और कैंप 1 के मध्य आलीशान और खतरनाक खुंबू हिमनदी (ग्लेशियर) थी, जो शानदार बर्फ गिरने के लिए जाना जाता है। यह दुनिया में सबसे ऊँची हिमनदी (ग्लेशियर) है और यह बहुत सी विजय जुलूसों और त्रासदियों का साक्षी है। ग्लेशियरों पर दरारें घटती-बढ़ती रहती हैं, जिसका मतलब होता है कि कोई भी व्यक्ति एक गलती करने का खतरा नहीं ले सकता है। एक को अपनी कुदाक को सही समय पर निपुण करना होता है। यदि आप दरार में फँस गए तो इसका सीधा सा मतलब बुरी तरह टूटा और चोट पहुँचा शरीर होगा, यदि कोई जी पाया तो! नीमा कांचा, मेरा शेरपा, दरारों को रस्सी और बर्फ काटने की कुल्हाड़ी के साथ पार किया करता था। पार करने के बाद वह मुझे दूसरी तरफ बुलाया करता था। एक साधारण व्यक्ति के लिए इसे कूदकर पार करना आसान था। लेकिन जो अन्यों के लिए साधारण था, मेरे लिए बहुत कठिन था। तथापि एक महीने के समय में मैंने कैंप 1 (खुंबू ग्लेशियर) क्षेत्र के आस-पास बहुत सी छोटी और मध्यम चोटियाँ चढ़ी थीं। अब मैं असली चीज के लिए तैयार थी।

हमने मुश्किल से कैंप 1 और कैंप 2 के बीच की आधी दूरी तय की होगी, जब हमने अपनी निकटतम मंजिल देखी थी। कैंप 2 ठीक आगे दिखता था, परंतु वास्तव में यह दूर था। पर्वतों पर आप कदाचित् ही कभी लंबे समय तक सीधे चलते हों। टेढ़े-मेढ़े पर्वतीय रास्ते आपको उससे ज्यादा दूर चलवा देते हैं, जितना यह दिखता है। उदासी

और निराशा ऐसे समय में न जुड़े, यह सुनिश्चित करने के लिए आपके दिमाग को लगाए रखना आवश्यक होता है। बछेंद्री पाल की सलाह यहाँ सही साबित हो रही थी। उन्होंने मुझे एक बारी में लिये गए कदमों की संख्या गिनने की सलाह दी थी। मुझे याद है कि मैं एक बारी में 500 कदम लेती थी। ऐसी छोटी मगर प्रभावी सलाहों से मैं चलती रही थी, यह सुनिश्चित करते हुए कि बहुत से अवसरों पर मैं सक्षम शरीरवाले पर्वतारोहियों से भी आगे रहती थी। मुझे याद है कि मैंने कदम गिनने की सलाह अपने साथी पर्वतारोहियों, जैसे कि रामलाल और कांता को भी दी थी।

मानसिक रूप से स्वस्थ रहना यहाँ सफलता की एक कुंजी थी, जहाँ प्रकृति आपके केंद्रित रहने के निश्चय और सामर्थ्य की प्रत्येक कदम पर परीक्षा लेती थी। लेकिन मैं सोचती हूँ कि हर एक को अपने मस्तिष्क की सारी नकारात्मक ऊर्जा से छुटकारा पा लेना चाहिए। सिर्फ साथ देना, विश्वास में सुरक्षित रहना कि भाग्य भी असल में प्रतिबद्ध और बहादुर का ही साथ देता है।

दोपहर को 1 बजे के आस-पास हम कैंप 2 पहुँचे थे, जहाँ थोड़ी देर के लिए आराम किया था। कैंप 1 से कैंप 2 के बर्फ पर लंबे ट्रैक की वजह से मेरे जूते गीले हो रहे थे। अतएव मैंने क्रैंपोन को हटाया और तले को बदला, क्योंकि वह गीला हो गया था।

इसके बाद हम भोजन शिविर की ओर बढ़े, जहाँ ब्रेड, बटर और जैम के साथ पैकेट में सूप, अंडे और मांस उपलब्ध था। पर्वतीय फलों का जूस भी उपलब्ध था। हमने तेल और नमक के साथ कुछ चावल खाए थे। लेकिन मेरे लिए सबसे कीमती गरम पानी था, जिसे मैंने पर्वत पर रहने के दौरान ज्यादातर पीया था। वहाँ मैं अनीता, हरियाणा पुलिसवाली लड़की के साथ रुकी थी। यद्यपि मैं ज्यादातर अकेली रही थी, साथी आरोहियों का छोटा सा समूह जैसे—अनीता, रामलाल और कांता—हरियाणा पुलिसवाली लड़की—हम अच्छे से अनुबद्ध हो गए थे।

कैंप 3 हमारी अगली मंजिल थी। हम बच्चों की तरह आनंदित हो रहे थे, ज्यों ही किसी ने घोषित किया था कि दूरबीन की मदद से कैंप 3 दिख रहा था। लालची आँखों से हम अगले पड़ाव को बारी-बारी से देख रहे थे। मैं इस उत्तेजना को समझ सकती थी। हर कोई अब मानसिक रूप से चल रहा था, एवरेस्ट शिखर की ओर विशाल कदम ले रहा था। हमारे कैंप 2 पर दो दिन के ठहराव के दौरान हमारी आँखें कैंप 3 की ओर चिपकी रही थीं, जहाँ हम अगली बार जाने वाले थे। मुझे कैंप 3 को ताकते हुए सो जाना याद है। और अगले दिन उठने के बाद मैं पुन: कैंप पर ध्यान दे रही थी, जो एक बहुत ही अधिक ऊँचाई पर स्थित था। अंतत: रात्रि 1.30 बजे के आस-पास हम कैंप 3 के लिए यह योजना बनाकर निकले थे कि अगली दोपहर 12.30 बजे तक वहाँ पहुँचेंगे।

अभी तक मैंने ऑक्सीजन मास्क नहीं पहना था, यद्यपि मैं अन्य पर्वतारोहियों को साँस लेने में तकलीफ होती देख सकती थी। हालाँकि कंचन ने जोर डाला था कि मुझे ऊर्जा क्षय से बचाने के लिए मास्क का प्रयोग करना चाहिए। मैं इसमें रुचि नहीं रखती थी, क्योंकि मुझे साँस लेने में कोई समस्या अभी तक नहीं हुई थी। लेकिन मेरे शेरपा के आग्रह के बाद मुझे अंतत: ऑक्सीजन मास्क लगाना पड़ा था। वह पल जब मैंने उसे पहना, मैंने समस्याओं का सामना करना शुरू कर दिया था। अंतत: मैंने उसे उतार दिया और ज्यों ही मैंने ऐसा किया, मुझे अच्छा लगने लगा था। मैंने कैंप 2 और कैंप 3 के मध्य का सारा रास्ता बिना ऑक्सीजन मास्क की मदद के पार किया था। लेकिन जैसे ही मैं अपनी मंजिल पर पहुँची, मुझे ऑक्सीजन के स्तर में गिरावट का अनुभव हुआ था।

नीमा कांचा ने अब सलाह दी थी कि मुझे मास्क लगा लेना चाहिए और उस समय मैंने उसकी सलाह तत्परता से मान ली थी। यहाँ शिविर लगाने के लिए पहले बर्फ को साफ करना पड़ता है। जैसा कांचा ने सलाह दी थी, मैं ऑक्सीजन मास्क लगाकर सोने चली गई थी। शेरपा ने मुझे बताया था कि यदि मैंने इसे सारी रात नहीं पहना तो मैं काफी कमजोर हो जाऊँगी।

हालाँकि शेरपाओं को कम-से-कम कैंप 3 तक ऑक्सीजन मास्क नहीं चाहिए होता है। वे इसे कैंप 4 के बाद से प्रयोग करते हैं। पर्वतों में जनमे और पले होने से वे उन हालात में भी आराम से रहते हैं, जो अन्यों को भारी लगते हैं। हम खुद को रस्सियों के सहारे कसकर रखते थे और क्रैंपोन जड़े हुए जूतों से चलते थे, प्रकृति के बुलावे पर जाने पर भी। यह क्षेत्र अत्यधिक खतरनाक और काफी फिसलन भरा है। हमें बताया गया था कि हिम-स्खलन या बर्फ की दीवारों का नीचे खिसकना इस स्थान पर ज्यादा होने के कारण बहुत से पर्वतारोही इस कैंप पर ज्यादा देर रुकना पसंद नहीं करते।

इस ऊँचाई से नीचे पर्वतीय सड़कें पतली रेखाओं और पर्वतारोही चींटियों की तरह दिखते हैं। जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा था, हमारी उत्तेजना बढ़ती जा रही थी। हम बेचैनी से कैंप 4 जाना चाहते थे। लेकिन समस्या यह थी कि जैसे-जैसे ऊँचाई बढ़ रही थी और आरोहीगण धीमे हो रहे थे, लोगों को उनके शिविर खाली करने में समय लग रहा था। हमारे शेरपा उनके कैंप 4 के जोड़ीदारों के साथ लगातार संपर्क में थे और हमें सूचित किया गया था कि कैंप अभी तक खाली नहीं हुआ था। काफी घंटों के बाद हमारे कैंप 3 के शेरपाओं ने अंतत: उद्घोषणा की थी कि यह अब चलने का समय था। हम रात्रि के 1 बजे निकले थे और लगातार 12 घंटे चलने के बाद कैंप 4 अगले दिन दोपहर को 1 बजे पहुँचे थे। कैंप 4 दोपहर 1 बजे तक पहुँचना अच्छा समझा जाता था, क्योंकि हर कोई उसी रात को एवरेस्ट के लिए निकल सकता है।

वह क्षण, जब हम कैंप 4 पहुँचे थे, हमारा स्वागत एक कोरियन लड़की की एक निराशामय और दु:खद मृत्यु से हुआ था। हमें घटना की विस्तृत जानकारी नहीं मिली थी। हमने यह भी सुना था कि एक अन्य पर्वतारोही, जिसके फेफड़ों में पानी भर गया था, की बगल के शिविर में मृत्यु हो गई थी। यह सब किसी को भी भयभीत करने के लिए काफी था।

पर्वतों में इतनी ऊँचाई पर सोना भी सुरक्षित नहीं समझा जाता है। इसलिए मैं अपने पास समय होते हुए भी नहीं सोई थी। मैं रामलाल और कांता से कैंप 4 तक आगे थी, यद्यपि अनीता महतो के साथ पहले ही चली गई थी। मैं 20 मई, 2013 की शाम को 4 बजे रामलाल और कांता के साथ निकली थी। हर कोई बुरी शक्ल में था, लेकिन मेरी हालत अभी बिगड़नी शुरू हुई थी।

मैं कैंप 4 तक रामलाल और कांता से एक उचित अंतर से आगे चल रही थी, लेकिन अब उनसे पीछे हो गई थी। वे शिखर के रास्ते पर मुझसे आगे निकल गए थे, जिस दौरान मेरा सामना नीली बर्फ से हुआ था—एक बहुत ही फिसलन भरी बर्फ, जो सर्वश्रेष्ठ आरोहियों को भी थका दे। मुझमें इस पर पकड़ बनाने के लिए थोड़ी ही शक्ति बची थी। इस प्रयास ने मेरी बहुत सी ऊर्जा निकाल ली थी। मेरी दोनों टाँगें सूज चुकी थीं और बुरी हालत में थीं, विशेषतया इसलिए कि मैंने कैंप 3 से कैंप 4 का सारा रास्ता लगातार अपना क्रैंपोन बर्फ पर प्रहार करते हुए पार किया था। अब ऐसा लग रहा था कि मेरे पैरों, खासकर बाएँवाले के पास शायद ही कोई शक्ति बची हो!

हालात को और मुश्किल बनाने के लिए हाथों पर बहुत से चीरे लग गए थे और मेरे बाएँ पैर का स्टंप भी क्षतिग्रस्त हो गया था। पकड़ बनाने के लिए मेरे पैर से बर्फ पर आघात करते रहने से पुराने जख्म फिर से खुल गए थे। उनमें से फिर रक्त बह रहा था। सुझाव और विकल्पों से खाली होने के बाद मैंने अपने शेरपा को मेरा हाथ पकड़ने के लिए कहा था। मेरे आश्चर्य के लिए उसने मना कर दिया। स्वाभाविक रूप से मैं स्तंभित और बहुत चोटिल हुई थी। मेरा मार्गदर्शक इतना संवेदनहीन कैसे हो सकता है? मुझे तब जो अहसास नहीं हुआ, वह यह था कि शेरपा शायद मुझसे बहादुर बनकर अपने आप चीजों को व्यवस्थित करने के लिए कहना चाहता था, जब हम शिखर से कुछ ही दूरी पर थे।

मार्गदर्शक के इनकार पर मैं बहुत ही क्षोभ में भी और चोटिल थी कि मैंने रस्सी को जाने दिया, जिसे मैं पकड़े हुए थी और उद्घोषित किया कि मैं अब एक इंच भी नहीं चलूँगी। मुझे रोना महसूस हो रहा था। अब तक दर्द तीव्र हो चुका था। रक्तस्राव ने स्थिति खराब कर दी थी।

फिर भी, मैंने खुद को आगे बढ़ते हुए पाया था। यह ऐसा था कि मुझे एक अदृश्य बल के द्वारा धकेला जा रहा था। इसके बाद मैंने फैसला किया था, चाहे जो हो जाए, इतने नजदीक आने पर मैं अब बिना लड़े नहीं छोड़ूँगी। मेरे भावनात्मक आवेग ने मुझे विलंबित कर दिया था और समूह के मेरे बहुत से अन्य सदस्यगण अब तक मुझसे आगे जा चुके थे।

मुझे नीली बर्फ को पार करने में तकरीबन 90 मिनट लगे थे। मेरे साथी पर्वतारोही अब तक तेजी से बर्फ में गुम हो गए थे। मेरी चमड़े की जैकेट में मैं मनकों की एक छोटी सी माला महसूस कर सकती थी, जिसका प्रयोग मैं भगवान् को याद करने के पलों को गिनने के लिए करती थी। अतिरिक्त धार्मिक प्रोत्साहन के लिए मेरे पास त्रिशूल, स्वामी विवेकानंद, श्रीरामकृष्ण परमहंस और माँ शारदा देवी की तसवीरें अभी भी थीं। मैं खुद से कहती रही थी कि ''भगवान् मेरे साथ हैं।''

कुछ समय के बाद मुझे अहसास हुआ था कि नीली बर्फ ने मुलायम बर्फ को रास्ता दे दिया था, जिसकी वजह से चलना कुछ आसान हो गया था। एक फैलाव पर पहुँचने से पहले, जिसका एक हिस्सा बर्फ और एक हिस्सा चट्टानी था, मैं कुछ समय मुलायम बर्फ पर चली थी। अब यह कौशल दिखाने का एक बेहद मुश्किल स्थल था, क्योंकि प्रत्येक समय मैं क्रैंपोन से पकड़ बनाने के लिए प्रहार करती, मेरा पैर निरपवाद रूप से चट्टानी सतह पर प्रहार करता, जिससे मुझे दोगुना दर्द होता था।

बहुत से अवसरों पर मेरा कृत्रिम पैर वस्तुत: 180 डिग्री पर घूम जाता था। मुझे लगातार देरी होती जा रही थी, क्योंकि मुझे खुद को नियमित रूप से रुककर साधारण अवस्था में वापस आने के लिए पैर को समायोजित करना पड़ता था। बहुत लोगों ने मुझसे अब तक आगे निकलना आरंभ कर दिया था। यह रात्रि के 1 बजे के आस-पास का समय था, जब मुझे पता लगा था कि मेरे पीछे से आनेवाले पर्वतारोहियों में से एक भारतीय था।

उसका नाम लवराज धर्म सत्तू था और वह एवरेस्ट पर तीन बार चढ़ाई कर चुका था। मैं उससे कैंप 4 पर अपने ठहाराव के दौरान संक्षिप्त बातचीत कर चुकी थी। अपने समूह का नेता भी था, मगर हैरत की बात है कि मैं उसे कैंप 2 के बाद पहली बार देख रही थी। जैसे ही वह मुझे पार कर रहा था उसने टिप्पणी की थी ''अरे, तुम अभी तक यहीं हो!''

मैंने सिर हिलाया और उससे प्रार्थना की थी कि वह मेरे साथ चढ़ाई करे। लेकिन सत्तू शिखर पर चौथी बार अपनी हाजिरी लगाने की जल्दी में था। इसलिए वह चलता गया था। यह बालकनी क्षेत्र के आस-पास हुआ था, जहाँ मैं अब तक, जब से कैंप 4 छोड़ा था, लगातार 16 घंटों के चलने के बाद पहुँची थी।

मेरे शेरपा को अपनी गति कम कर मेरी गति से मिलाने की जरूरत थी। मैं एक उपयुक्त गति से चलना चाहती थी, क्योंकि तेज गति रक्त-संचार में मदद करती है। मैं अब हिलेरी स्टेप पर पहुँच चुकी थी, जो एवरेस्ट के बहुत मुश्किल रास्तों में से एक है।

सबसे बड़ी समस्या, जिसका कोई इस फासले में सामना करेगा, वह यह है कि किसी भी व्यक्ति को एक अस्थायी चट्टानी सतह को क्रैंपोन पहनकर पार करना पड़ेगा। चट्टानी क्षेत्र को एक क्रैंपोन पहनकर पार करना कठिन है। क्रैंपोन बर्फ पर चलने में आपकी सहायता करते हैं, लेकिन एक चट्टानी सतह पर वे एक बोझ बन जाते हैं।

इस स्पष्ट नुकसान के बावजूद आरोहीगण इन्हें नहीं उतारते हैं। वह इसलिए, क्योंकि चट्टानी सतह के शीघ्र बाद हर एक व्यक्ति का सामना बर्फ से होगा, जहाँ क्रैंपोन अनिवार्य हैं। इसलिए क्रैंपोनों के मेरी गति को रोकने और इसे खतरे में डालने के बावजूद (वे चट्टानों पर फिसला करते थे) मैंने चलना जारी रखा था।

इस प्रयास ने मेरे पैरों से बहनेवाले रक्त को बढ़ा दिया था। मैं बहुत बुरी हालत में थी और अभी भी अपनी गति बढ़ाने की कोशिश कर रही थी, जब मैंने कुछ पर्वतारोहियों को उत्सव मनाते सुना था। वे रामलाल, कांता और अन्यों के अलावा और कोई नहीं थे, जो अब अपने रास्ते पर वापस जा रहे थे। मैं इतनी बुरी तरह थक चुकी थी कि साथी पर्वतारोहियों को पहचानना भी बहुत मुश्किल था। मैं एक मतवाले की तरह चल रही थी। वहाँ मेरे चारों तरफ, मेरे ऊपर, मेरी जैकेट में और उसके ऊपर, मेरे बूटों पर, मेरे चेहरे के मास्क और ऑक्सीजन सिलेंडर पर बर्फ थी। मैं तेजी से ऊर्जा खो रही थी। रामलाल और कांता, जो अब बाकी के समूह के साथ लौट रहे थे, सोच रहे थे कि मैं जिंदा नहीं बचूँगी! वे मुझे नीचे ले जाना चाहते थे।

''रिकॉर्ड अभी भी तुम्हारा ही बनेगा। कोई विकलांग महिला इतनी दूर कभी नहीं आई है।'' उन्होंने कहा था।

मैंने सत्तू को पुनः देखा था, जो अब शिखर पर चढ़कर वापस जा रहा था। मेरी हालत देखकर उसने कहा था, ''अरुणिमा, अब वापस जाओ।''

शायद वह डर रहा था कि मैं नहीं बचूँगी। मेरा उसे यह कहना याद है कि ''श्रीमानजी, कृपया मेरे लिए रुको। हम इकट्ठे नीचे चलेंगे।''

मेरे अनुरोध पर ध्यान न देकर सत्तू मुझे एक आघात पहुँचाते हुए नीचे चला गया था। मेरी प्रारंभिक प्रतिक्रिया अविश्वास की थी। कैसे एक समूह का नेता एक सदस्य के अनुरोध पर ध्यान नहीं दे सकता है?

मुझे बाद में अहसास हुआ था कि यह व्यावहारिक दृष्टि से किसी को इतनी देर तक प्रतीक्षा करवाना असंभव था। मैंने शिखर पर जाने और वापस आने में तीन घंटे लिये थे। उस ऊँचाई पर किसी का भी उतनी देर रुकना लगभग असंभव था, जितनी देर की मैंने उससे उम्मीद लगाई थी। इसी बीच मेरे शेरपा ने मुझसे पूछा था कि क्या मैं चल सकती हूँ? मैंने 'हाँ' में सिर हिलाया था।

उस स्थान से, जहाँ मैं खड़ी थी, मैं पर्वतारोहियों की एक बड़ी लंबी रेखा आगे बढ़ने की अपनी बारी की प्रतीक्षा करते देख सकती थी। उनके लिए, जो देश के बड़े शहरों में यातायात अवरोध (ट्रैफिक जाम) के आदी हैं, यह एक अनूठा दृश्य था—पर्वत पर मानवीय यातायात अवरोध! स्पष्टतया, एवरेस्ट के लिए रास्ता खतरनाक रूप से सँकरा है। वहाँ एक तरफ पथरीली जमीन है और दूसरी तरफ प्राणघातक एक सीधी चट्टान है। एक को अत्यधिक फिसलन भरे सँकरे रास्ते पर नीचे चलना पड़ता है। यह अधिक समय लेनेवाला था, क्योंकि एक समय पर केवल एक ही व्यक्ति पार कर सकता था। ऑक्सीजन काफी तेजी से खत्म हो रही थी। मेरे शेरपा ने उसका प्रवाह नियमित करने में मेरी मदद की थी, ताकि वह ज्यादा लंबे समय तक चले। दो घंटों में अवरोध खत्म हुआ था। थोड़ा आगे अब भी खड़ी और सँकरी चढ़ाई मेरा इंतजार कर रही थी।

मैं एकदम फिसलकर गिर गई थी। व्यग्रता अब दिखनी शुरू हो गई थी। मेरे शेरपा ने कहा था कि मुझे अब छोड़ ही देना चाहिए था। लेकिन मैं जानती थी कि यहाँ, इतनी दूर आने के बाद अब वापसी का कोई रास्ता नहीं था। हम दक्षिण सम्मिट और हिलेरी स्टेप के मध्य में थे, जब मेरे शेरपा ने पहली बार मुझे कम होते ऑक्सीजन स्तर के बारे में चेतावनी दी थी और एक बार फिर सुझाव दिया था कि मुझे छोड़ देना चाहिए। शेरपा को दोष नहीं दिया जा सकता है। मैं महसूस कर सकती थी कि मेरी हालत काफी बिगड़ रही थी। मुझे समझाने में असफल होने के बाद नीमा कांचा ने मेरी एजेंसी के नेता को सूचित करने का निर्णय लिया था—''यदि यह नहीं छोड़ेगी तो मर जाएगी।''

मैंने उसे ऐसा अपने बेतार वाक्पट (टॉकी) पर कहते हुए सुन लिया था।

उसने कुछ देर के लिए बात की थी। उसकी आवाज ने उसकी चिंताओं के बारे में अवगत करा दिया था। मेरे न छोड़ देने के इनकार के शब्द सिर्फ पर्वत पर ही नहीं फैले थे, अपितु उत्तर प्रदेश में मेरे परिवार और झारखंड में बछेंद्री पाल को इस खबर के बारे में मालूम पड़ गया था। जैसे ही एवरेस्ट शिखर के पास वह भावुक खेल खेला जा रहा था, मेरे पैरों को ठंड लगने लग गई थी। यह एक अच्छा संकेत नहीं था। उसकी चेतावनी का अनुसरण करने के मेरे इनकार पर कुंठित होकर। मेरा शेरपा मुझ पर चिल्ला पड़ा था, ''मैं भी जीना चाहता हूँ!''

मेरी एजेंसी के नेता ने मुझसे एक उपग्रह फोन पर बात की थी, ''अरुणिमा, तुम पहले ही एक वर्ल्ड रिकॉर्ड बना चुकी हो कृपया वापस आ जाओ।''

यह दुर्लभ था—एक विकलांग महिला प्रत्येक की सलाह के खिलाफ जाकर चलना जारी रखना चाहती थी।

मैं अब रिकॉर्डों से भी आगे सोच रही थी। बछेंद्री पाल के शब्द मेरे कानों में गूँज रहे थे, 'प्रत्येक समय, जब तुम्हें लगे कि तुम और आगे नहीं जा पाओगी, सिर्फ पीछे देखना और सोचना कि कैसे तुम इतनी दूर आई हो और कितना थोड़ा तुम्हें आगे अपना लक्ष्य पाने के लिए जाना है!' मेरी नाक से खून बहने लग गया था। मुझे अभी भी अपने उपकरणों, लोगों के आशीर्वाद और भगवान् में विश्वास था।

वहाँ बहुत से थे, जिनके लिए मैं आशा की एक किरण और प्रेरणा बन गई थी। अब मुझे शिखर पर सिर्फ अपने लिए नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करने के लिए चढ़ना था कि औरों को जो विश्वास मेरी क्षमता में था, वह चूर-चूर नहीं होगा। पुन: पाल के शब्द मेरे कानों में गूँज रहे थे—''जब तुम मुझे पहली बार मिली थीं, तब यह सिर्फ तुम्हारा स्वप्न था। अब यह सिर्फ तुम्हारा सपना नहीं रह गया है। यह टाटा स्टील का स्वप्न है, यह देश का स्वप्न है।'' मुझे यह भी याद आ रहा था कि कैसे राहुल और साहब ने अपने मार्ग से हटकर मेरी मदद कर सुनिश्चित किया था कि मैं चढ़ूँगी।

उस विनाशकारी रात में, जब मुझे चलती ट्रेन से कुछ लालची भेड़ियों ने धक्का दे दिया, मेरे या मेरे परिवार के लिए कुछ भी आसान नहीं रहा था। वास्तव में, ट्रेन त्रासदी से पहले भी मेरी जिंदगी संघर्षों से भरी रही थी। हमें प्रत्येक चीज के लिए अपना रास्ता बनाने के लिए हमेशा लड़ना पड़ता था। मेरी चढ़ाई इस स्थल तक भी काफी आसान नहीं रही थी। मैंने इस पल के लिए सबकुछ दे दिया था, ताकि मैं अपना सपना जी सकूँ—एक स्वप्न, जो जितना मेरा था उतना ही मेरे परिवार का भी था। यह वह क्षण था, जिसके बारे में दुनिया सुनने के लिए प्रतीक्षा कर रही थी। मुझे दिल्ली प्रेस सम्मेलन और अपने परिवार के बारे में व्यक्त संदेह याद थे। बहुत कम लोग यहाँ तक आए थे। वर्ष 1953 से इतनी दूर केवल 4,000 विषम लोग ही आ पाने में सक्षम हुए थे। यदि मैं सफल हुई तो मैं अपनी श्रेणी में ऐसा कर पाने वाली सदैव प्रथम रहूँगी। एक वर्ल्ड रिकॉर्ड मेरा इंतजार कर रहा था।

मैंने खुद को आगे धकेला, जैसे ही मेरा शेरपा मुझ पर वापस जाने के लिए जोर डाल रहा था। मुझे उसे कहना याद है कि यदि वह वापस जाना चाहता है तो वह जा सकता है; लेकिन मेरे पास अब वापस जाने का कोई रास्ता नहीं है।

''मेरे पास शिखर तक पहुँचने और देश का ध्वज लहराने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन है।'' शेरपा से कहा था। वस्तुत:, शिखर पर पहुँचना ही केवल मसला नहीं था, बहुत से पर्वतारोही एवरेस्ट को नापकर, अपने नीचे के रास्ते में महज ऑक्सीजन खत्म होने, थकावट, अति उत्साह या सीधे असावधानी के कारण दम तोड़ देते थे।

मैं नहीं जानती कि मेरे शब्दों का नीमा कांचा पर कोई प्रभाव पड़ा था; लेकिन मैं उसे मेरा पीछा करते देख सकती थी, जैसे ही मैंने खुद को शिखर की तरफ घसीटना शुरू कर दिया था। मैं खुद को, जो मुझे लगता है कि काफी

लंबे समय, घसीटती हुई ले गई थी। घसीटना-चलना-घसीटना तब तक चलता रहा, जब तक अंतत: यह घटित नहीं हो गया था। एक 20×20 की बर्फीली मेज के ऊपर मैंने विभिन्न देशों के राष्ट्रीय ध्वज गर्व से लहराते हुए देखे थे। मैंने उस पल को अपने मन-मस्तिष्क में बहुत बार जिया था और मुझे यह बताने की जरूरत नहीं थी कि मैं अंतत: पहुँच गई थी।

21 मई, 2013 को प्रात: 10.55 बजे मैं दुनिया के शीर्ष पर थी।

मैं एक ही समय पर खुद को नाचती, चिल्लाती और हँसती महसूस कर रही थी। मेरा मस्तिष्क कैलिडोस्कोप (बहुरूप दर्शक) बन गया था। मैं घुटनों पर झुकी पूरी तरह से शक्तिहीन हो गई थी। हर किसी के पास जिंदा रहने का एक कारण और निभाने के लिए एक किरदार था। शायद यह मेरा किरदार था। यहाँ बर्फीली मेज जैसे शिखर पर मैंने अपने देश का राष्ट्रीय ध्वज फहराने के लिए आस-पास एक खंभे के लिए देखा। चूँकि वहाँ कोई भी नहीं था, अपने देश के रिकॉर्ड का प्रतीक दर्ज कराने के लिए मैंने तिरंगा अपने हाथों में पकड़कर हवा में ऊपर उठा लिया था। तब मेरे शेरपा और मैंने लामाओं के एक तिब्बतीय ध्वज के आगे प्रार्थना की थी, जिस पर कुछ मंत्र लिखे हुए थे। मैंने अपने भगवानों को चूमा, जो मेरे साथ आए थे और उन्हें वहाँ उनकी पूजा करने के बाद छोड़ दिया था। उन्होंने मुझे काफी शक्ति और विश्वास दिया था।

मैं समय ले रही थी। बहुत अधिक लोग, जो मेरे साथ चढ़े थे, जा चुके थे। मैं अपने शेरपा के साथ अकेली थी। अकस्मात् मैं थोड़ी व्याकुल महसूस करने लगी थी। मेरा सिर चकरा रहा था और मैं बहुत कमजोर महसूस कर रही थी। मुश्किल से खड़ी होने में सक्षम मैं खुद को एक छोटी बर्फीली चोटी के सहारे खड़ा कर आराम करने लगी थी। बस, तभी मैंने एक अन्य शेरपा को देखा था। मैं नहीं जानती थी कि वह वहाँ क्या कर रहा था? कोई भी आसानी से एक अतिरिक्त शेरपा एवरेस्ट के ऊपर नहीं आता है। लेकिन मैं अब तक चमत्कारों की आदी हो चुकी थी। रहस्यमय शेरपा ने मुझे एक एनर्जी जेली दी, जो एक थैली में लिपटी हुई थी। प्रत्यक्ष प्रसन्नता के बावजूद मैं इतनी कमजोर हो गई थी कि मुझमें मुश्किल से कोई ऊर्जा बची होगी, जिससे मैं जेली की थैली खोल सकती थी। उसने मुझे एनर्जी जेली की थैली को फाड़ने और उसे खाने में मेरी मदद की थी, जबकि मैं एक चोटी के सहारे खड़ी होकर आराम कर रही थी। जेली खाने की वजह से मैं थोड़ा बेहतर महसूस कर रही थी।

इधर मैं अच्छी हो रही थी, नया शेरपा जाने की तैयारी करने लगा था, मानो उसने मेरा मस्तिष्क पढ़ लिया हो, जो जानना चाहता था कि वह यहाँ कैसे था। उसने कहा कि वह शिखर पर एक अंग्रेज पर्वतारोही के साथ आया था, जो जल्दी चला गया था। इसलिए उसने कहा कि उसके पास कुछ अतिरिक्त एनर्जी जेल बची थी। एक बच्चे के रूप में मैंने बहुत सी कहानियाँ सुनी थी कि कैसे भगवान् अपने भक्तों की रहस्यमयी तरीकों से मदद करता था। मेरे लिए यह शेरपा भगवान् का भेजा हुआ व्यक्ति था। दुनिया में सबसे ऊँचे स्थान पर ऊर्जा को बढ़ाने के बारे में कल्पना कीजिए, जबकि जेली ने मेरी खड़ी होने में मदद की थी, वह शेरपा शीघ्र ही नीचे चला गया था। मैं अब एक बर्फीली दीवार के सहारे चलने लगी थी तथा मेरा सिर अब और नहीं चकरा रहा था।

पता नहीं कैसे मैं निश्चयी थी कि मैं अब नहीं मरूँगी। एवरेस्ट पर प्रात: 11 बजे के बाद चढ़ने की कोशिश करना अच्छा नहीं समझा जाता है। यहाँ ऐसा करने को आत्महत्या का प्रयास कहते थे, क्योंकि इस समय के तुरंत बाद मौसम वास्तव में खराब हो जाता है। मेरा शेरपा पागलपन से मुझे ऑक्सीजन खत्म होने से पहले जल्दी करने के लिए कह रहा था। लेकिन उसके पीछे आने के बजाय मैंने कुछ ऐसा किया, जिससे मेरा मार्गदर्शक प्रत्यक्षत: विस्मित हो गया था।

''रुको, मुझे अभी कुछ और भी करना है।'' मैंने नीमा को कहा था।

जब वो हास्यास्पद दृष्टि से मुझे देख रहा था, मैंने उसे धैर्यपूर्वक कहा था कि मैं उससे मेरे फोन से अपना वीडियो बनवाना चाहती थी। नीमा हक्का-बक्का रह गया था। उसने पर्वतारोहियों को अपनी जिंदगी बचाने के लिए भागते देखा था, जो शिखर पर पहुँचने के बाद नीचे जाने की जल्दी करते हैं, लेकिन कोई भी अपनी जिंदगी को एक वीडियो के लिए खतरे में नहीं डालना चाहता है। एक छोटे से 90 सेकंड के वीडियो में मैंने ऐसे ही कहा था, ''मैं आज बहुत खुश हूँ। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि आपने अपना मस्तिष्क कुछ पाने के लिए निश्चित कर लिया, आपको उसके लिए लगे रहना चाहिए। सही अर्थों में दृढ़ संकल्पी व्यक्ति के लिए कुछ भी असंभव नहीं है।''

मेरे पास वीडियो को रिकॉर्ड करने का एक कारण था। हालाँकि यहाँ इस बर्फीले शिखर पर मैंने एक दिव्य शक्ति को बहुत से अवसरों पर मुझे बचाते हुए महसूस किया था, लेकिन मैं कोई जोखिम नहीं उठाना चाहती थी। वहाँ दूर बहुत से लोग थे, जो मुझे सुनना चाहते थे कि शिखर पर पहुँचने के बाद कैसा लगता था। यह उनके लिए था, जो मैंने इस वीडियो को रिकॉर्ड करवाया था, ताकि यदि मैं उन तक नहीं पहुँच पाऊँ, यह वीडियो उनके पास पहुँचेगा।

यह सबकुछ नहीं था। वीडियो बनाने के बाद नीमा ने मुझे नीचे जल्दी चलने के लिए इशारा किया था। इस समय तक हर कोई चला गया था। मैं अपने मार्गदर्शक के साथ अकेली थी।

''अब सिर्फ एक और चीज—मैं एवरेस्ट की चोटी से एक पत्थर लेना चाहती हूँ।'', मैंने नीमा से कहा था, जो अब सोच रहा था कि उसकी नियति मेरे साथ यहाँ मरने में थी।

मुझे याद है, वह बछेंद्री पाल थीं, जिन्होंने मुझे सलाह दी थी कि अगर मुझे याद रहे तो मैं चोटी का एक टुकड़ा अपने साथ लेकर आऊँ। स्थानीय सम्मानपूर्वक चोटी को 'सागरमाथा' कहते थे। उत्तेजित नीमा ने एवरेस्ट पर अपनी कुल्हाड़ी इतनी जोर से मारी थी कि एक ही वार से उसने 250 ग्राम से ज्यादा वजन का पर्वत खंड अलग कर दिया था।

''अब इसे लो!'' वह गरजा था। पर्वत का टुकड़ा मेरी कल्पना से भी ज्यादा भारी था। मैंने दो टुकड़ों में तोड़ने के लिए कहा था, लेकिन नाराज लामा ने सीधे मना कर दिया था।

मैं जागरूक थी कि मेरा ऑक्सीजन सिलेंडर लगभग खत्म हो चुका है और मैंने अपनी एवं शेरपा की जिंदगी दाँव पर लगा दी थी। लेकिन मुझे एक अनोखा अहसास हो रहा था कि यदि भगवान् ने मुझे इतनी दूर तक साँस लेने दी थी तो वह मुझे पुनः बचाने के लिए कुछ तो जरूर करेगा। और ऐसा ही हुआ था। एक पर्वतारोही, जो सिर्फ अभी शिखर पर चढ़ा था, उसने सोचा था कि जल्दी लौटना अच्छा होगा, नहीं तो प्रातः 11 बजे के बाद वाला एक आत्मघाती प्रयास करना पड़ेगा। वह दो ऑक्सीजन सिलेंडर लेकर चल रहा था—एक, जो वह प्रयोग कर रहा था और दूसरा एक नया।

उसने, जो सिलेंडर प्रयोग कर रहा था, उसे बाहर निकाला और उसे नए से बदल दिया था। नीचे बढ़ने से पहले उसने अपना प्रयोग किया हुआ सिलेंडर वहाँ छोड़ दिया था। नीमा कांचा ने उसे देखा और जल्द ही उसे मेरे लिए उठा लिया था। यह अतिरिक्त ऑक्सीजन किसी चमत्कार से कम नहीं थी। नीचे उतरने के दौरान हर एक को चढ़ने से ज्यादा सावधान रहना चाहिए। वह इसलिए, क्योंकि नीचे के रास्ते पर हर्ष, थकावट और असावधानी का अवसर एक जानलेवा मिश्रण बन जाता है।

यह उन दिलेर पर्वतारोहियों के मृत शरीर से जाहिर होता था, जिन्होंने अपनी आखिरी साँस तक चढ़ने की कोशिश की थी। आप जानते हैं कि उनके भाग्य ने शायद रास्ते में उनका साथ छोड़ दिया था। कुछ के चेहरे पर लाल बर्फ थी। मरने से पहले उनके मुँह से खून निकला होगा। जैसे-जैसे उनके चेहरे पर बर्फ जमने लगी, उसने भी लाल रंग ले लिया था। वास्तव में मैं वहाँ कुछ ऐसे लोगों को भी पहचान सकती थी, जो जीवित थे और बर्फ में आधे गड़े हुए

थे। दृश्य बहुत ही डरावना था। मुझे एक ऐसे ही आदमी का हाथ हिलाना याद है, मगर वह एक इंच भी नहीं हटा था।

मेरे शेरपा ने पुन: ऐसी चीजों को अनदेखा करने की चेतावनी दी थी। यह मुश्किल था, परंतु शेरपा सही था। मैंने खुद को एक रस्सी के साथ बाँधकर नीचे खिसकने का फैसला किया था। जैसे ही मैं खड़ी चढ़ाई की तरफ से नीचे खिसक रही थी, मेरा कृत्रिम पैर ढीला पड़ गया था। जैसे ही शेरपा घबराकर चिल्लाया था, मैं जम गई थी। मैं मृत्यु से पहले भी कई बार बची थी, लेकिन यह वास्तव में बहुत डरावना था; क्योंकि रास्ता अत्यधिक भयानक था। मेरे कृत्रिम पैर में सिलिकॉन जैल भीग गई थी, जिसकी वजह से पैर ढीला पड़ गया था। मैंने कैसे भी अपने स्टंप को समायोजित किया था और नीचे उतरना जारी रखा था, भले ही मेरा कृत्रिम पैर दो या तीन बार बाहर आ गया था। बर्फीली ठंड के हालातों में मेरे चेहरे की त्वचा छिलने लग गई थी।

अकस्मात् ही मेरे स्टंप से भारी रक्तस्राव होने लग गया था। मेरा शेरपा मुझे लगातार आगे बढ़ने के लिए उकसा रहा था। मैं रोने लग गई थी। मैं शिखर पर जा चुकी थी, लेकिन अब लग रहा था कि मैं जिंदा वापस नहीं लौटूँगी। अब मेरे आँसू भी जमने लगे थे। तब मैंने एक प्रार्थना की थी, ''मैं आपकी पुत्री हूँ। मैं हार नहीं मानूँगी।'' अचानक ही मुझे थोड़ा अच्छा लगने लगा था, जब मैं रस्सी पकड़कर खुद को नीचे घसीटने लगी थी। थोड़ी देर के बाद हम एक चट्टानी क्षेत्र में पहुँच गए थे, जहाँ एकांत में मैंने खुद को समायोजित किया था—अपने पतलून एवं अंत:वस्त्र उतारकर स्टंप के अंदर की सिलिकॉन जैल को फटाफट पुन: व्यवस्थित किया और वस्त्र जल्द ही पहन लिये थे। अब शायद मेरी प्रतिबद्धता को देखकर प्रभावित होकर नीमा कांचा ने कहा था, ''अरुणिमा, मैं तुम्हारे साथ हूँ। चिंता मत करो, यदि इसका मतलब मृत्यु है, हम इसका एक साथ स्वागत करेंगे। मैं दूर नहीं भागूँगा।''

तब रात्रि के 9 बज चुके थे, जब मैंने कैंप 4 पर अपना शिविर देखा था। कैंप 4 पर हर कोई प्रफुल्लित था। लेकिन मैं इतनी ज्यादा थकी हुई थी कि मैं औरों पर शिविर खोलने के लिए चिल्ला पड़ी थी। मेरे शेरपा ने मेरे क्रैंपोन खोले थे। हममें से हर कोई बहुत थका हुआ था। हम दोनों ही अपने शिविर में वापस आ गए थे। मुझे मेरे जूते उतारने में तकरीबन 30 मिनट लग गए थे। मैं ऐसा कर पाने में अक्षम थी। 'मैंने इसे कर दिया है' का अहसास अभी आना बाकी था। मेरी उँगलियाँ अत्यधिक ठंड के कारण काली पड़ने लग गई थी। मुझे गरम पानी चाहिए था। मेरे शेरपा ने मुझे गरम पानी में जल्दी नहीं जाने की और मेरी उँगलियों को इसी वातावरण में व्यवस्थित करने की सलाह दी। धीरे-धीरे मैं बदल रही थी।

कांता, जो मेरे शिविर में थी, बर्फ की अंधता (स्नो ब्लाइंडनेस) से पीड़ित थी। वह जोर-जोर से रो रही थी। मैं भी काफी अधिक दर्द महसूस कर रही थी। मैं बहुत बुरी हालत में थी; लेकिन मैं जानती थी कि मैं कांता की चीखों को अनदेखा नहीं कर सकती थी। जैसे वह बच्चों की तरह रो रही थी, मैंने उसे झिड़की लगाई थी—''रुको, तुम अकेली ही दर्द में नहीं हो। हर कोई दर्द में है।'' मैंने उसे कुछ स्थानीय इलाज बताया था, जिससे उसकी मदद हुई थी।

अब मैंने कुछ गरम पानी के लिए आवाज लगाई थी। बर्फीली हवाओं से मेरा चेहरा जल गया था, अत: मैं समय-समय पर अपने चेहरे पर लेप (क्रीम) लगा रही थी। मेरे होंठ भी चढ़ाई के दौरान सख्त हो जाते थे और गरम होने में कुछ समय लेते थे। मैंने थोड़ी चॉकलेट खाई थी और धीरे-धीरे अच्छा महसूस करने लग गई थी।

अगले दिन जब हम नीचे उतरने लगे थे, मुझे अहसास हुआ था कि मैंने अभी तक अपनी पूरी ऊर्जा वापस प्राप्त नहीं की थी—मैं मुश्किल से एक ही कदम चली थी कि गिर पड़ी। मेरे शेरपा ने मुझे खड़े होने में मदद की थी। उसकी और एकदम नए ऑक्सीजन सिलेंडर की मदद से मैं शाम को 3 बजे तक कैंप 3 पहुँच गई थी। मैं कैंप 4 से प्रात: 8 बजे निकली थी। वहाँ मेरा शिविर कहीं भी नहीं दिख रहा था। यह इसलिए था, क्योंकि मैं वहाँ सबसे अंत

में पहुँची थी। और इसका मतलब था कि अब हमें सीधे कैंप 2 के लिए चलना पड़ेगा।

रास्ते में, जब एक शेरपा ने मुझे एक कोल्ड ड्रिंक दी थी तो मैं एक बार में तीन से चार गिलास पी गई थी। अधिकतर मैं गरम पानी पर रही थी। इसलिए जब मैंने स्थानीय तौर पर बनाई गई कोल्ड ड्रिंक ली, मुझे उसका स्वाद इतना पसंद आया था कि मैंने उसके बहुत से गिलास पी लिये थे। मैंने शेरपा को आभार जताया था। लेकिन एक घंटे में ही मैं खाँसने लग गई थी। मुझे मेरी कठिन दिनचर्या से चूकने की मेरी गलती का अहसास हुआ था।

समय बढ़ने के साथ खाँसी की तीव्रता भी बढ़ने लगी थी, इतनी ज्यादा कि सारी रात खाँसने के बाद सुबह तक मेरी उल्टी में खून आने लग गया था। स्थानीय लोगों ने मुझे चिंता नहीं करने के लिए कहा, क्योंकि यह एक अस्थायी अवस्था होती है और शुक्र है कि वे सही थे।

कैंप 2 पर एक नियमित रसोई थी। हर कोई मुझे मेरी विजय पर बधाई दे रहा था और मैं अंतत: आराम महसूस कर रही थी। इसके बाद मैंने जितनी जल्दी हो सके, आधार शिविर पर नीचे जाने का निर्णय किया था। मैं कैंप 1 पर नहीं रुकी थी और शाम को 4 से 5 बजे के बीच में आधार शिविर पहुँच गई थी। बर्फ पिघलने लग गई थी। शिविरों को भी उतारा जा रहा था। मेरे अकेले का ही शिविर वहाँ पर स्थित था।

रामलाल, कांता और अनीता हेलीकॉप्टर से निकल चुके थे। वे भी हरियाणा से थे और जल्दी जाने के उनके अपने कारण थे। रामलाल मुझे भी हेलीकॉप्टर से चलने को कह रहा था। मैं हवाई यात्रा के लिए खर्च वहन नहीं कर सकती थी और इसके अतिरिक्त, मैंने सोचा था कि एक पर्वतारोही के लिए उड़कर वापस जाना सही नहीं होगा। मैंने अपने पास बचे हुए 11,000 रुपए आधार शिविर में बाँट दिए थे। तब मैं पर्वत को एक आखिरी बार देखकर नीचे उतरने लगी थी और मेरा शिविर भी हटाया जा रहा था। नीचे की ओर मेरे रास्ते पर कुछ विदेशी प्रेस के पत्रकारों ने मुझे खोज लिया था। वे काफी समय से मेरी चढ़ाई के बारे में बात करने के लिए मुझे खोज रहे थे। मैंने अपना पहला साक्षात्कार अपनी वापसी में पहाड़ों में ही दिया था। हालात तब से मस्ताने हो गए थे।

सुबह 11 बजे के आस-पास मैं लुकला से आकर काठमांडू हवाई अड्डे पर उतरी थी, जहाँ मैं साहब से मिली थी। मैं उन्हें देखकर अत्यधिक प्रसन्न हो गई थी। वहाँ से हम गाड़ी में नेपाल के भारतीय दूतावास गए थे, जहाँ जयंत यादव, नेपाल में तत्कालीन भारतीय राजदूत, ने मेरा स्वागत किया था। वहाँ से हम वैशाली होटल गए थे, जहाँ मैं पी.पी. कपाड़िया—'टाटा स्टील एडवेंचर फाउंडेशन' के एक प्रबंधक—से मिली थी, जो जमशेदपुर से मेरी अगवानी करने आए थे। वहाँ से हम लखनऊ के लिए निकले थे, दिल्ली और राँची में लघु ठहारावों के बाद, जहाँ टाटा स्टील ने बड़े प्रेस सम्मेलन आयोजित किए थे। इसी बीच में एक हॉलीवुड के निर्माता ने मुझ पर एक फिल्म बनाने के लिए अधिकार खरीदने हेतु मेरे परिवार को फोन किया था।

लखनऊ हवाई अड्डे पर तकरीबन 2,500 लोग मेरा स्वागत करने के लिए उमड़ आए थे। मेरा प्रफुल्लित परिवार भी वहाँ पर था। वे मेरी तरफ लहराकर आए और खुशी से मुझे देखकर चिल्ला पड़े थे। मैं उनकी आँखों में आँसू देख सकती थी। लेकिन हर कोई हँस भी रहा था। यह सिर्फ मेरे लिए नहीं, बल्कि उनके लिए भी एक बड़ा दिन था। वास्तव में, मेरे परिवार ने बाद में बताया था कि मेरे मूल जिले अंबेडकर नगर के जिला न्यायाधीश और वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक मेरे परिवार से मिलकर उन्हें मेरे वर्ल्ड रिकॉर्ड की बधाई देने आए थे। लखनऊ में एक दिन बिताने के बाद हम अंबेडकर नगर के लिए निकले थे, जहाँ एक बड़ा स्वागत समारोह हमारा इंतजार कर रहा था।

एक चीज मुझे सारा समय परेशान कर रही थी। यह मेरी माँ की हवाई अड्डे पर अनुपस्थिति थी। मैं आश्चर्यचकित हो रही थी कि मेरी माँ यहाँ पर मेरा विजयोल्लास साझा करने के लिए क्यों नहीं थी? यह सोच बनी रही थी, जब तक मैं उनसे अंबेडकर नगर में नहीं मिली थी। वे मुझे हमारे अंबेडकर नगर के घर की दहलीज पर

एक मुसकराहट और सलाह के साथ मिली थीं, जो मेरे साथ हमेशा रहेगी। सलाह साधारण थी, फिर भी बेहद शक्तिशाली थी, ''अरुणिमा! यह तुम्हारे लिए बहुत बड़ा समय है। मैं जानती हूँ कि तुम बहुत ऊँचे स्थान पर हो। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम्हारी उपलब्धियाँ कितनी ऊँची हैं, तुम्हारे कदम हमेशा जमीन पर रहने चाहिए।'' उनके शब्दों का एक जादुई प्रभाव था। जो कुछ भी थोड़ा सा अहं मैंने अपनी उपलब्धि और आगामी सराहनाओं के कारण उत्पन्न किया था, जो मेरे रास्ते में आने लगा था, कुछ ही समय में गायब हो गया था। मेरे एवरेस्ट ध्येय पर निकलने से पहले भी, जब मैं वास्तव में एक प्रायोजक खोज रही थी, मेरी माँ ने मुझे इसके लिए जाने हेतु यह कहकर प्रेरित किया था कि यदि मुझे कोई प्रायोजक नहीं मिलता है तो वह अपना अंबेडकर नगरवाला घर मेरे सपने में पूँजी लगाने के लिए बेच देगी, यदि मैं वाकई इसके पीछे लगे रहने के लिए दृढ संकल्प थी।

स्थानीय लोगों ने मुझे सूचित किया था कि वे काफी लंबे समय से ऐसे उत्साह-उत्सव के साक्षी नहीं बने थे। मेरा पहला पड़ाव शिव बाबा का मंदिर था, जहाँ मैंने मेरे लिए इंतजार करती एक बड़ी भीड़ देखी थी। लोगों ने मेरे लिए एक खुली जिप्सी का प्रबंध किया था, ताकि मैं लोगों का अभिवादन कर सकूँ, जो सड़क के दोनों तरफ मेरा स्वागत करने के लिए पंक्तियों में एकत्र हुए थे।

स्थानीय नेतागण, जिला अधिकारी और कुछ धार्मिक नेतागण घर पर पहुँचे थे। उसी दिन तत्कालीन जिला न्यायाधीश ने उद्घोषणा की थी कि मेरे नाम पर एक मार्ग का नाम रखा जाएगा। अगले एक हफ्ते या इससे ज्यादा के लिए मैं दुनिया के शीर्ष पर रही थी। हर कोई मुझसे मिलना चाहता था। कई अन्य मुझसे सलाह लेना चाहते थे कि कैसे जीवन में श्रेष्ठ बन सकते हैं? उनमें से हर एक सोचता था कि मेरे पास उनके प्रश्नों के उत्तर थे। सबसे अच्छी बात, घर पर रहने का फायदा उठाना था। मेरे परिवार ने मेरे लिए उत्तम व्यंजन बनाए थे। इतने सारे महीने मैंने ज्यादा खाने के प्रलोभन को दूर रखा था। अब मैंने चेतावनी को हवा में उछाल दिया था और मस्त होकर खा रही थी।

कुछ दिनों के बाद मेरे पास उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव की कॉल आई थी। हम उनसे मिलने लखनऊ गए थे। मुख्यमंत्री आवास पर एक स्वागत समारोह का आयोजन किया गया था, जहाँ अखिलेशजी ने मेरा अभिनंदन किया था। उन्होंने मुझे मेरी उपलब्धि के लिए 25 लाख रुपए का एक चेक दिया था और अन्य एक 1 लाख का चेक दिया था, जो उन्होंने कहा था कि यह मेरे निजी खर्चों के लिए हैं। उन्होंने कहा था, ''तुम इसकी पात्र हो। हमें तुम पर गर्व है।''

इसके बाद मुझे सब जगह से आमंत्रण मिलने आरंभ हो गए थे। लोग मुझे सुनना चाहते थे।

इस दौरान अनेक शुभकामनाओं का ताँता बँध गया था—तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, तत्कालीन लोकसभा स्पीकर मीरा कुमार, कांग्रेस अध्यक्षा सोनिया गांधी, तत्कालीन खेल मंत्री जितेंद्र सिंह (क्योंकि अजय माकन ने तब पार्टी में पद ग्रहण कर लिया था) से बधाइयाँ प्राप्त हुई थी। मुझे बाद में सूचना मिली थी कि वर्तमान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, तब गुजरात के मुख्यमंत्री, मेरी एवरेस्ट-विजय के बारे में ट्विटर पर धन्यवाद करनेवाले सबसे पहले राजनेता थे। धीरे-धीरे मुझे अहसास हुआ था कि लोगों ने मुझे एक प्रेरणादायक वक्ता के रूप में देखना शुरू कर दिया था। वहाँ सैकड़ों आमंत्रण मुझे सुनने के लिए चाहते थे कि मैंने ऐसा कैसे किया?

मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि जब मैं इस आवभगत का पूर्णतया आनंद उठा रही थी, जबकि मेरा एक हिस्सा इस पर विश्वास नहीं कर पा रहा था। एक साल से थोड़ा पहले मैं एक रेलवे ट्रैक पर बिना किसी मदद के भारी रक्तस्राव के साथ पड़ी हुई थी। इससे पहले मैं अपने हताश परिवार के लिए एक नौकरी प्राप्त करने की कोशिश करने दिल्ली जाने की जल्दी में थी। सबकुछ बदल गया था—सबसे ज्यादा मेरे स्वप्न और महत्त्वाकांक्षाएँ। मुझे

ऐसा लग रहा था कि यह मेरा पुनर्जन्म हुआ है—एवरेस्ट पर पुनर्जन्म!

❑

उपसंहार

जबकि मैं घायल थी और स्वास्थ्य-लाभ ले रही थी, मैं बहुत से लोगों

के प्यार व समर्थन की साक्षी बनी थी। तभी मुझे यह लगा था कि मुझे भी यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ करना चाहिए कि विकलांग युवा अपनी पूरी जिंदगी तिरस्कार और असुरक्षा में न गुजारें। सिर्फ इसलिए कि उनके शरीर का एक हिस्सा अक्षम हो गया, इसका यह मतलब नहीं होता कि वे आगे कुछ नहीं कर सकते थे। विकलांगों के लिए एक 'अंतरराष्ट्रीय स्पोर्ट्स अकादमी' का विचार इसी इच्छा से जनमा था।

लेकिन हम भी जानते थे कि अकादमी बहुत सारा समय, प्रयास और उससे भी ज्यादा धन लेगी। यह एक बहुत ही महँगा स्वप्न था—25 करोड़ रुपए से भी ज्यादा कीमती। हे भगवान्! यह हमारे जैसे एक निम्न-मध्यम वर्गीय परिवार के लिए एक चौंका देनेवाली राशि थी।

जब सुझाव का जन्म हुआ था, मैं असल में अस्पताल के अपने बिस्तर पर पड़ी हुई चिंता कर रही थी कि कैसे और कौन मेरे इलाज के लिए राशि उपलब्ध कराएगा? वहाँ साहब ने कदम रखा था। उन्होंने कहा था, ''जैसे मदन मोहन मालवीय ने दान के द्वारा काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना की थी, हम भी दान के लिए कहेंगे।'' और मेरे जीवन में बहुत सारे स्थलों में इतनी दूर तक यह समस्या भी दिव्य हस्तक्षेप से हल हो गई थी।

कुछ ही दिनों में उमा शंकर दीक्षित—बेथर, उन्नाव के निवासी—ने पहुँचकर सबसे पहले 21,000 रुपए का दान दिया था। हमने इसे एक अन्य प्रतीक माना था कि हमें अपनी योजना के साथ आगे जाना चाहिए। आप एक पूर्णतया अजनबी का चलकर आने और मदद की पेशकश करने को अन्य किस तरह से स्पष्ट करेंगे? इसके अतिरिक्त, यदि हम अपनी स्पोर्ट्स अकादमी उन्नाव के पास स्थापित करने की योजना बनाएँगे तो दीक्षितजी ने कहा कि वे उसके लिए सारी ईंटें मुफ्त में आपूर्ति करवाएँगे। आखिरकार हम उन्नाव में ही बस गए थे और दीक्षितजी ने अपना वायदा पूरा किया था।

अकादमी परियोजना पर कार्य अब जारी है। मैं युवा लोगों को खोज रही हूँ, जो अपनी समस्याओं के बोझ से झुकने के बजाय दुनिया में मुकाम हासिल करने हेतु वचनबद्ध हों। मैं उन्हें एक ही छत के नीचे एक संपूर्ण पैकेज उपलब्ध करवाना चाहती थी—उनके ठहराव के दौरान देखभाल से लेकर उनकी शिक्षा और प्रशिक्षण सबकुछ उन्हें मिलना चाहिए। प्रशिक्षणार्थियों को हमारे गाँवों से चुना जाएगा। हम गाँवों में शिविर लगाकर कुछ समय हुनर की खोज में लगाएँगे। सारे आंतरिक खेलों और केवल तीन को छोड़कर ओलंपिक में मान्य सभी बाह्य खेलों में उनको प्रशिक्षित करेंगे।

अकादमी परिषद् का गठन हो चुका था और उसका नाम महानतम स्वतंत्रता सेनानी चंद्रशेखर आजाद के नाम पर रखा गया था, जो उन्नाव से ही थे। मेरे खून के रिश्ते में से कोई भी परिषद् का सदस्य नहीं था। इसमें सात विभिन्न राज्यों से लोग थे, जिन्हें मैं अपना पैर खोने के बाद उस विनाशकारी रात को मिली थी। हमने सभी राजवंशीय संपर्कों और जाति एवं भाषाई अवरोधों से दूर रहने की पूर्ण कोशिश की थी। 'अरुणिमा फाउंडेशन' जो प्रमुख रूप से स्पोर्ट्स अकादमी को व्यवस्थित करेगी, की भी जल्द स्थापना की जाएगी।

अब जहाँ कहीं भी मैं जाती हूँ, हमेशा लोगों से हमारे स्वप्न के लिए पूँजी लगाने का निवेदन करती हूँ। मैं कुछ महत्त्वपूर्ण लोगों से मिली थी, जो कि सभी मदद के लिए वचनबद्ध थे।

नरेंद्र मोदीजी तब भारत के प्रधानमंत्री नहीं बने थे, जब मैं उनसे प्रथम बार मिली थी। वे गुजरात के मुख्यमंत्री थे, जब उन्होंने मेरी रिकॉर्ड तोड़ने की जीत के बाद मुझे गांधीनगर आने का आमंत्रण दिया था। मैं उनका आमंत्रण

स्वीकार कर गुजरात गई थी, जहाँ एक आकर्षक व्यक्तित्व के नेता ने मेरा अभिनंदन किया था। ''तुम्हारा अगला ध्येय क्या है, अरुणिमा?'' उन्होंने मुझसे पूछा था।

मैं इस जवाब के साथ तैयार थी—''स्पोर्ट्स अकादमी, सर! मुझे इसके लिए आपकी मदद चाहिए।''

''निस्संदेह, पूर्ण सहायता मिलेगी।'', मोदी ने कहा था।

उनके एक मंत्री ने आगे कहा था, ''जिस क्षण हमारी सरकार केंद्र में बन जाएगी, हम बहुत सी स्पोर्ट्स अकादमियों को प्रायोजित कर पाने में सक्षम होंगे।''

अब, जब केंद्र में मोदी सरकार एक सच्चाई है, मैं वस्तुत: आशा करती हूँ कि प्रधानमंत्री अपने वायदे को याद रखेंगे।

मैं अभी हाल ही में रतन टाटा से मिली थी। उनको कोई परिचय नहीं चाहिए, चाहिए क्या? उस मुलाकात को कार्यान्वित करने में एक साल लगा था, मगर वे चालीस मिनट, जो मैंने उनके सान्निध्य में बिताए थे, उसकी कीमत लंबे इंतजार से भी ज्यादा थी। मैं शरमा रही थी, जब मैं मुलाकात के लिए गई थी और मैंने उनसे कहा था, ''मैं आपसे मिलने के लिए बहुत व्यग्र थी। लेकिन अब मैं वस्तुत: घबरा रही हूँ।''

इस पर उस महान् व्यक्ति ने कहा था कि ''इसीलिए मैं भी घबरा रहा था।''

बहुत से कॉरपोरेट, जैसे कि माइक्रोसॉफ्ट, टेक महिंद्रा, एलडेको ने भी हमें अपनी सहायता के लिए आश्वस्त किया था। रामकृष्ण मिशन, वडोदरा के सचिव स्वामी निखिलेश्वरानंद सक्रिय रूप से मेरी सहायता कर रहे हैं। और मैं आशान्वित हूँ कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव, जिन्होंने मुझे मेरी एवरेस्ट विजय के लिए 25 लाख रुपए दिए थे, अकादमी के लिए भी थोड़ा दान देंगे। मुझे अब व्याख्यान देने के लिए भी आमंत्रित किया जाता है। मैं कुछ भी नहीं पकाती हूँ। जब मैं बोलती हूँ तो ऐसा दिल से करती हूँ। हर गुजरते दिन के साथ अकादमी के लिए पूँजी और मेरा विश्वास बढ़ता जा रहा है। मुझे दृढ विश्वास है कि मैं यह राशि जमा कर लूँगी। यदि कुछ भी काम नहीं करेगा तो मैं प्रत्येक दरवाजे पर जाकर दान माँगूगी, सबसे कम 1 रुपए भी स्वीकार करूँगी। कुछ भी संभव है, जब हम अपना मस्तिष्क इसके लिए निश्चित कर लेते हैं। मैं ऐसा पहले भी एक बार कर चुकी हूँ। मैं इसे दुबारा करने के लिए भी तैयार हूँ।

❑❑❑